॥ श्रीः ॥

सुशीला विधवा ।

स्त्रीशिक्षा विधायक, उपदेशपूर्ण सामाजिक उपन्यास.

जिसमें
विधवाविवाह निराकरण और विधवाधर्मका
वर्णन कियागयाहै.

जिसे
बूँदी (राजपूताना) निवासी महता लज्जारामशर्मासे
रचना कराय,

खेमराज श्रीकृष्णदासने
बंबई
निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालयमें
मुद्रितकर प्रकाशित किया ।

संवत् १९६४, सन् १९०७.

४·००

भूमिका।

"वेदानुद्धरते जगन्निवहते, भूगोलमुद्बिभ्रते
दैत्यं दारयते बलिं छलयते क्षत्रक्षयं कुर्वते।
पौलस्त्यं जयते हलं कलयते कारुण्यमातन्वते
म्लेच्छान्मूर्च्छयते दशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यं नमः॥"

गीतगोविन्द।

हिन्दी गद्यकाव्योंके विषयमें अपने जो सिद्धान्तहैं उन्हें मैं "आदर्श-दम्पती" की भूमिकामें लिख चुकाहूं। यह पोथी उसीका एक भागहै इस लिये उनबातोंको यहां दुहराकर पिसेको पीसना मुझे उचित नहीं दिखाई देताहै। तथापि इतना अवश्य लिखूंगा कि दृश्य और श्राव्य काव्य दर्शकों और पाठकोंके मनोरंजनके साथ २ उनके चरित्र शोधनके लियेहै, उन्हें इस कार्यके लिये नमूना दिखलानेकी सामर्थ्यहै। मैंने इसी उद्देश्यसे "धूर्त रसिकलाल," "स्वतंत्ररमा और परतंत्र लक्ष्मी", "हिन्दूगृहस्थ" और "आदर्शदम्पती"—उपन्यास लिखेथे और इसी विचारसे इस "सुशीला-विधवा" की रचना कीहै। मैं अपने उद्देश्यमें सफल हुआहूं वा नहीं सो मैं नहीं कहसकताहूं परंतु जब हिन्दी रसिकोंने अपने जनकी जान मेरी और पोथियोंको अपना लियाहै तब मुझे आशाहै कि वे इसेभी अंगीकार कर मुझपर कृपा करेंगे और समालोचक लोग हंसबुद्धिसे नीरक्षीरकी तरह इसके गुणदोष अलग कर आगेके लिये मेरा पुस्तकरचनामें उत्साह बढावेंगे।

मेरे और उपन्यासोंकी तरह यहभी केवल कल्पनाहै, इसमेंभी किसी ग्रंथका आश्रय नहीं लिया गयाहै और न यह किसीका भाषान्तरहै। मैं अन्यभाषाके ग्रंथोंका अनुवाद करना, अन्यभाषाकी पुस्तकोंके आधारपर हिन्दीमें पोथी लिखना बुरा नहीं समझता हूं। हिन्दीके खाली भंडारको भरनेके लिये इस बातकी बहुत आवश्यकताहै परंतु मैं यह मानताहूं कि हिन्दी साहित्यकी तबही उन्नति होगी जब उसमें स्वतंत्रग्रंथ लिखे जायंगे। संस्कृत, वा अंगरेजीकी पुस्तकोंका भाषान्तर करनेमेंभी मैं और भाषाओंके

अनुवादोंका तर्जुमा करनेकी अपेक्षा मूलग्रंथोंका भाषान्तर करना आवश्यक और उपयोगी समझताहूं ।

इस पुस्तकमें क्या लिखाहै सो तो पाठकोंको पढनेसे विदित होगाही परंतु यहां इतना लिखनेकी आवश्यकताहै कि "आदर्शदम्पती" के अंतमें मैंने जिस पुस्तकके लिखनेका प्रण कियाथा उसीके निर्वाह करनेको इसमें प्रयत्न कियागयाहै । "सुशीला" की सहेलियां और बाबू सज्जनलालका वर्णन इसमें केवल प्रसंगवश आगया था, फिर उनका सुशीलाके चरित्रसे संबंध नहीं रहा इसलिये उनके विषयमें अधिक नहीं लिखागया है ।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" यंत्रालय और "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार" के स्वामी सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजीको मैं धन्यवाद देताहूं जो "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार" का संबंध छोडदेनेपरभी मुझसे स्नेह रखतेहैं, मेरी पुस्तकोंका आदर कर मुझे पोथी बनानेका उत्साह देतेहैं। जबसे मैंने "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार" का संबंध छोडा मैं अपनी जन्मभूमि "बूंदी राजपूताना" में रहता हूं और वहीं यह पोथी तैयार की गईथी परंतु उक्त सेठजी महोदयके बडेपुत्र चिरंजीवी बाबू रंगनाथजीके विवाहमें मेरा जावरे आगमन हुआ और यहीं यह पुस्तक समाप्त हुई इसलिये यहां इसकी भूमिका लिखीगई है।जिस समय जावरेमें मेरी मुरादाबादनिवासी,भारतधर्ममहामंडलके महोपदेशक, विद्यावारिधि पंडित श्रीज्वालाप्रसादजीमिश्र पंडित कन्हैयालालजी मिश्र और पंडित श्यामसुन्दरजीसे भेंट हुई उन्होंने इस पुस्तकको पसंद किया और जहां कहीं इसमें संशोधनकी सम्मति दी । इस बातके लिये मैं उन्हें धन्यवाद देताहूं ।

जावरा--मालवा.
पौष कृष्ण ४ संवत् १९६२

हिन्दीका एक लघुसेवक--
लज्जाराम शर्म्मा,
बूँदी--राजपूताना,

श्रीहरिः।

सुशीला विधवा।

प्रकरण १.

रेलमें बलात्कार।

चैत्रका महीनाहै। चार घडीका सवेरा है। गुलाबी जाडा पडरहाहै। रेल्वे स्टेशन की फुलवारीमेंसे गुलाबकी मँहक उठ रहीहै। गैसकी रोशनीसे स्टेशनपर रात्रिमें दिन हो रहाहै। गाडी आनेके लिये गोविन्दपुर स्टेशनसे "लाइन क्लियर" मिलतेही स्टेशनवालोंमें दौडधूप मचगई है। टिकिटकी खिडकी के पास सैकडों आदमियोंकी भीड लगरही है। कोई कहताहै-"बाबूजी हमें टिकिट देदो। हम भीडमें पिसे जाते हैं। किसीका कथनहै कि-अरे मरारे! मरा!! मुझे बचाओ। मेरा दम निकला जाताहै" कोई पुकारताहै- "अरे मेरी जेब कटगई। राम राम अब मैं टिकिटही काहेसे लूंगा।" कोई चिल्लाताहै-"अरे लेभागा रे! लेभागा! वह देखो मेरी गठडी ले भागा। ए जमादार साहब उसे पकडो। हाय हाय मेरा सर्वनाश होगया।" कोई रो २ कर कहती है "हाय २ मेरा बच्चा हाय मेरा बच्चा कुचल गया अब मैं क्या करूंगी। जब इसतरहकी चारों ओरसे चिल्लाहट मचरहीहै तब पुलिस अपनी वर्दी डांटे खिडकीके कटहरेके पास खडीहुई है। उसका ध्यान इस पुकार और हाय२की ओर बिलकुल नहींहै। वह बीच२ में इस भीडको डांट २ कर चुप करती जाती है। जो कांस्टेब्ल ऐन कटहरेके द्वारपर है वह आना, दोआना, चोअन्नी अठन्नी ऐंठ २ कर यात्रियोंको भीडमेंसे खैंचता और उन्हें टिकिट दिलाकर निकालता जाताहै। टिकिट बाबू अपना जुदाही मतलब गांठ रहेहैं। वह किसीसे हिसाबका भुलावा देकर अपनी जेब भरतेहैं। किसीके बालकको पूरे टिकिटके योग्य

बतलाकर उससे रुपया धेली ऐंठलेते हैं और जो नहीं देताहै उसे वैसेही डांट डपटकर बिनाटिकिट लौटा देतेहैं। भीडमें युवतियोंपर घूराघूरी होतीहै, समयपाकर मसकामसकीभी होजातीहै और कभी २ गालके मुख लगने तकका अवसर आताहै।

जिन लोगोंको टिकिट मिलचुकाहै वे स्टेशनके फाटकपर खडे२ एक२ मिनटको एक२ पहर समझ रहेहैं। भीडकी कसामसी तो टिकिटकी खिडकीपरसे यहां चौगुनी अठगुनी होनाही चाहिये परंतु यहां पुलिसके डंडे धडाधड पडरहे हैं। यहां केवल डांटडपटकाही काम नहींहै। यहां टिकिट कलक्टर साहबकी पारीहै। वह किसीका बोझा भारी बतलाकर रोकतेहैं और उससे कुछ ले लिवा कर छोड देतेहैं। किसीसे लडके लडकीका पूरा महसूल माँगकर ऐंठ लेतेहैं और जो बुढिया अशक्त और डरपोकहैं वे योंही भेट पूजा देकर पुलिसकी शिफारिससे प्लेटफार्मपर निकल जाते हैं। स्टेशनके कुलीभी इन लोगोंसे कम नहीं हैं। वे कहीं पेट बतलाकर कहीं बोझा पकडवा देनेका डर दिखाकर कहीं रेलवालोंको फीस देनेका नाम लेकर यात्रियोंको मूसते हैं। ऐसे समयमें लुच्चे लोगभी पुलिसकी आंख बचाकर पुलिससे मिलजुलकर अपना मतलब गांठे विना नहीं रहते। वे भोली स्त्रियोंको, गँवार आदमियोंपर और अशक्त बुढियाओंपर दया दिखाकर कलकता, बंबई, प्रयाग, काशी, और लखनऊके टिकिटका रुपया ऐंठकर दो एक स्टेशनका टिकिट ला देतेहैं और इस तरह रुपयोंसे अपना पाकेट भरकर चंपत होतेहैं।

जिससमय टिकिटकी खिडकीपर, स्टेशनके फाटकपर यात्री इसतरह लुट रहेहैं—इसतरहका कष्ट सहरहे हैं स्टेशनपर पाइंटसमैनने "विशालगढ सवारीगाडी छोडा" की जोर २ से तीन आवाजें दीं। स्टेशनवाले अपने २ कामोंसे छुट्टी पाकर अपने २ कमरोंके द्वारपर खडे २ गाडीकी राह देखने लगे। फाटकके पासके यात्रियोंमें खूब कोनियां चलने लगीं। जोरावर निर्बलोंको दबाकर मारकर आगे निकले और गाडी आते २ स्टेशनका प्लेटफार्म यात्रियोंसे भरगया। स्टेशनके बाहर गाडीकी सीटी होतेही लाइनक्लियरका सिगनल गिरा। हरा लालटैन चढाया गया और

धकधकाती हुई सवारीगाडी स्टेशनपर आ पहुँची। गाडी आतेही "मुकुं-दपुर मुकुंदपुरकी" तीन आवाजके साथ "गाडी बीसमिनट ठहैरगी" ने गाडीके यात्रियोंको चेतादिया। मुकुंदपुर जंक्शन स्टेशन था। यहां होकर कुशलपुर जानेका मार्ग था। पांचही मिनटमें गाडीसे सैकडों यात्रि-योंको उतरना और सैकडोंको चढना था। गाडियोंके फाटकपर धक्का-मुक्की होने लगी। कहीं धक्कामुक्की चढनेवाली सवारियोंके आपसमें थी और कहीं उतरनेवाले यात्री चढनेवाली सवारियोंसे लडतेथे। सबही अपनी २ डाढी बुझारहे थे। औरोंके मुखपर लात मारकर अपना मतलब गांठ लेनाही इनका इससमय उद्देश्य था। दूसरोंको दबाकर गाडीमें घुस पडनेके लिये इससमय सबही मुसाफिर नव्वाबजी बनेहुए थे। सबही यात्री औरोंको न चढने देनेके लिये अपने २ दर्जेके मालिक बनकर "जगह नहींहै जगह नहीं है" की तकरार कररहे थे।

ऐसे समयमें जनानी गाडीमेंसे रोनेकी आवाज आई। अरे इज्जत अरे इज्जत!! लूटताहै! की आवाज आतेही पुलिस जाकर वहां क्या देखतीहै कि एक पंद्रह वर्षकी युवतीको घेरेहुए एक अधगोरा खडाहै। वह कभी अंग-रेजीमें और कभी अपनी टूटीफूटी हिन्दीमें उससे कुछ कह रहाहै। अंधेरेमें वह गोरा अच्छी तरह पहचाना तो नहीं गया परंतु उसकी टोपीपर स्टेश-नका बिल्ला सिलाहुआ है। पुलिसके आकर पूछने पर उस स्त्रीने कहाः—

"मेरा आदमी मुझे गौने लेकर आया है। मैंने बहुतेरा कहा परंतु राघवपुरके स्टेशनवालोंने मुझे उनके पास मर्दानी गाडीमें नहीं बैठने दिया। मैं उनके पास बैठती तो आज मेरी यह दशा क्यों होती? उन्हें मर्दानी गाडीसे बुलाओ। तबही मैं अपना सारा दुखडा रोऊंगी।"

"उनका नाम क्याहै? कैसा हुलिया है? जरा पता बताओ तो अभी बुलाये देतेहैं।"

"नाम? हैं नाम! क्या मुझे नाम बतलाना पडैगा?मैं नाम नहीं बतला सकतीहूं।हिन्दू नारियां अपने आदमीका नाम नहीं बतलातीहैं। गोरेसे, खूब सूरतसे, लंबेसे,बाबुओंकेसे कपडे पहने एक पंडित हैं नारायण गंजके रहने-

वाले हैं। वह मुझे इस गाडीमें सवार कराते समय अपनी गाडीका नम्बर (जरा याद करके) ९३९ बतला गयेहैं। ''

सुनतेही एक कान्स्टेब्लने उस गाडीके पास जाकर देखा तो एक दर्जेके एक बेंचपर गद्देपर पैर फैलाये एक आदमी चादरा ओढे सो रहा है। वह जोर २ से खुर्राटे भर रहाहै। उसे अपनी नींदमें यह खबर नहीं है दुनियामें क्या हो रहाहै। सिपाहीने अनुमानसे इस आदमीको पहचानकर जगाया। पुलिसकी डांटभरी आवाज सुनकर और भी यात्री आंखें मलते २ उठ बैठे। उसने जागतेही पुलिसको देखकर आंखें मलते २ कहा:–

" हैं ! क्या बात है ? मुझे नाहक क्यों जगादिया ? मैंने आपका क्या बिगाडा था ? सारी रात आज भीडके मारे चैन नहीं पडी। कई स्टेशनतक खडे २ आनापडा और जरा घंटेभरके लिये सोनेकी जगह मिली तब आपने आ जगाया। यह पुलिसवाले भी मुसाफिरोंको बडे हैरान करते हैं। "

"बाबू तुमको कुछ खबर भी है?तुम यहां पडे २ सोरहे हो और वहां तुम्हारी औरतकी एक गोरेने इज्जत बिगाडदी। "

" हैं ! क्या जनानी गाडीमें भी? वह ऐसा कौन नव्वाब था जो जनानी गाडीमें जा घुसा?मैंतो दर्जेभरमें भले घरकी औरतें देखकर उसे चढा आया था और इसीलिये चैनसे सोरहा था। क्या और सब औरतें उतर गईं? ऐसाही मालूम होताहै। तबही उस राक्षसको गाडीमें उसे अकेली पाकर अत्याचार करनेकी हिम्मत हुई चलूं देखूं तो वह कौन है ? "

इस तरहकी बातें करते २ पुलिसके साथ पंडित मोहनचन्द्र जनानी गाडीके पास जाकर देखते क्या हैं कि उनकी स्त्री रोरही है। गाडीके बाहर एक अधगोरेको घेरे हुए पुलिस खडी है और दशबीस तमाशाई इधर उधर खडे २ मनमें तरह२के तर्क लडारहे हैं। पतिको देखतेही सुशीला औरभी रोई। रोते२उसकी हिचकियां बंधगईं। इतनी देरतक वह अपनेको अकेली पाकर जिस साहससे बैठीहुई अपनी रक्षा कररही थी वह पतिको देखतेही कपूरकी तरह उडगया। उसने रोते २ कहा:–

"उन लुगाइयोंके पास टिकिट तो बडीदूरका था परंतु विशालगढमें एक बालकको बुखार देखकर मेमसाहबने उन्हें उतार लिया। उनके उतरजानेपर ज्योंहीं मैं इस दर्जेमें अकेली हुई यह दुष्ट चढ आया। मेरे चिल्लाते २ विशालगढसे गाडी चलदी। मार्गमें दो तीन छोटेसे स्टेशन आये परंतु वहां गाडी ठहरी नहीं। यह राक्षस लगभग घंटेभरसे मुझे सता रहाहै। इसने जो कुछ मुझसे कहा और मेरे साथ बर्ताव कियाहै उसे मैं क्या कहूं। मुझे कहतेहुए लाज आतीहै। पासके दर्जेमें यदि यह माजी न होतीं तो आज मैं दुनियांमें मुँह दिखानेके योग्य न रहती। मैं क्या कहूं? माजीसेही पूंछो।"

"बेटा! मैं बूढी होजानेपरभी औरत हूं। बात कहनेलायक नहीं है। कहते हुए मुझेभी शर्म आतीहै लेकिन इस बिचारीके लियें आंखपर ठिकरा रखकर कहनाही पडैगा। कहूं क्या? इस निपूतेने गाडीमें घुसकर पहले इसे धमकाया। खूब धमकी देनेपर जब यह डरके मारे सिकुडकर एककोनेमें जाबैठी तब इसने इसका हाथ पकडकर लिटाना चाहा। लेकिन यह उसजगहसे जरासीभी न हटी। तब इसने इसकी छातीपर हाथ डालना चाहा लेकिन हाथ पास आतेही इसने झटका देकर उसे अलग करदिया। फिर यह इसे गोदीमें उठाने लगा। इसने अपने दोनों हाथोंकी कैंचीसी बनाकर इसे पकडाभी लेकिन जैसे किसीने इस औरतको गोंदसे इस बैंचपर चिपका दियाहो या इसके बदनको बैंचपर कीलोंसे जडदिया हो इसीतरह यह बिलकुल न खसकी। इसी तरहसे यह नालायक कभी कुछ और कभी कुछ घंटे डेढघंटेसे कररहा है। लेकिन शाबाश है।इस औरतको!इसने अपनी बातमें जरासाभी फर्क न आने दिया। इसकी जगह अगर कोई दूसरी होती तो यह नालायक न मालूम क्या करडालता। मैंभी बेटा! बहुतकुछ चिल्लाती डांटती रही लेकिन चलती गाडीमें न तो कोई मददके वास्ते आसका और न मैंही इन निपूते सीखचोंके मारे इनके पास पहुँच सकी।"

पुलिसने बुढियाका बयान सुनकर उस अधगोरेकी ओर खूब घूरकर देखा तो वह राघवपुरका टिकिट कलक्टर निकला । एक कान्स्टेब्ल उस स्टेशनपर पहले रहचुका था । उसने उसका नाम मि० उडकटर बतलाया । उडकटरसाहबसे जब पूछागया तो आप शराबीकी तरह वाहीतबाही बकने लगे । पुलिसने उनके हथकडी भरकर पासकी और २ गाडियोंके यात्रियोंसे पूंछपाछ करनेके बाद साहब बहादुरका चालान किया । जब बिचारे गवाहोंको पुलिसकी डांटडपटसे वहां उतरना पडा तब पंडित मोहनचंद्र और सुशीलाको वहां ठहरना पडा हो तो आश्चर्यही क्याहै !

प्रकरण २.

प्रथम समागम ।

चैत्रशुक्लातृतीयाकी रात्रिहै । आज बिनपूंछा मुहूर्तहै । आज पंडित मोहनचंद्रका कमरा खूब सजाया गयाहै । बिजलीकी रोशनी झाडफानूसोंको फीका कररही है । कमरेके सिरेपर चारोंओर अच्छे २ चित्र लटक रहेहैं । बीचमें एक गोल मेजपर गुलदस्ते रक्खेहैं । उसके चारोंओर चार पांच कुर्सियां पडी हैं । थालोंमें, तशतरियोंमें अच्छे २ मेवे, अच्छी २ मिठाई, अच्छे २ हार गजरे धरेहैं । एक पेटीमें मंदस्वरसे कभी अंगरेजी बाजा बजताहै, कभी ग्राफोफोनबाजेमें मधुर २ स्वरसे देशी रागनियां अलापी जातीहैं । कमरेमें एकओर बढिया पलंग बिछाहुआ है । मखमलसे मढीहुई दो तीन आराम कुर्सियां अलगही धरीहैं । एक थालमें कुछ पूजनकी सामग्रीहै । कमरेमें गुलाबका अतर महक रहाहै । आज पर्दे गुलाबीहैं, छत गुलाबीहै, पलंगपोश गुलाबीहै, और मसहरी गुलाबीहै । धरतीपर दरीके ऊपर गुलाबीही चादर बिछीहुई है । एक रकाबीमें कुछ थोडीसी माजूम रक्खीहुई है और विशेष क्याकहैं–उस जगह सुखकी भोगविलासकी सबही आवश्यक २ सामग्री मौजूदहै । काचकी अलमारियोंमें सुनहरी जिल्दकी हिन्दी, अंगरेजी और संस्कृतपुस्तकें रक्खी हैं और एकओर मेजपर कुछ अखबारभी हैं ।

इस समय पंडित मोहनचंद्रका ठाठभी बडा अलबेलाहै। उनके शिरपर बढिया कामदार लखनवी टोपीहै, शरीरपर गुलाबी रेशमी कपडेकी चमकदार कमीजमेंसे हीरे जडेहुए सुनहरी बटन बिजलीकी रोशनीमें चमक रहेहैं। उनका गुलाबी गोल चेहरा उनकी बडी २ और लंबी २ आंखें उनकी काली २ मोछें, उनकी काली किनारीवाली बर्फसी सफेद धोती और उनके ठाठको देखकर इस समय कोई नहीं कहसकता कि आप अंगरेजीमें बी०ए०, संस्कृतमें शास्त्री और हिन्दीमें पंडितहैं। इस समय उनके ढंगसे यह नहीं मालूम होताहै कि आप धर्मविषयमें, राजनैतिक मामलोंमें, सामाजिक बातोंमें लंबे २ लेख लिखने और लंबे २ लेक्चर फटकारनेवाले विद्वान् हैं। उनके उससमयके ठाठ और आजके ठाठमें बडाभारी अंतरहै। आज आप अच्छी खासी शृंगाररसकी मूर्ति मालूम होतेहैं। मालूम अवश्य होतेहैं परंतु इससमय इन्हें चैन क्यों नहीं है वह कभी अलमारीके पास जाकर किसी किताबको निकालकर पढने लगते हैं कभी मेजके पास आरामकुर्सीपर लेटकर किसी समाचार पत्रका कोई लेख पढतेहैं। परंतु उनका जी जब उनमें नहीं लगताहै तब कमरेकी सजावटपर बारीक नजर डालकर व्यवस्थासे रक्खेहुए सामानको इधरका उधर करतेहैं। पहले ढंगको नापसंदकर दूसरेही ढंगसे कमरेको सजाते हैं। वह अवश्यही इसतरह सजावट कररहे हैं परंतु उनकी आंखें कमरेके द्वारकी ओर और कान बाहरकी आहटपर हैं।

जिस समय पंडितजी इसतरहकी उधेड बुनमें लगे हुएहैं कमरेके द्वारपर दो युवतियां खडी २ आपसमें झगड रहीहैं। एक दूसरीको बलपूर्वक भीतर ढकेलतीहै और दूसरी लज्जासे, डरसे सिकुडी जातीहै। दोनोंमें कभी झंझट होताहै कभी हँसी होतीहै और कभी खैंचातान होती है। एकने रिसकर कहाः—

"आज अपने आदमीके पास जानेमें इतना संकोच करने चलीहै! उस दिन तुझे क्या होगया था जब स्टेशनपर पचास आदमीके सामने उस निपूते किरंटेके लिये अपना दुखडा रोती थी? आईहै लाज करने!

भली तेरी लाज !! कहीं अपने आदमीके पास जानेमेंभी लाज करना होताहै ? बावली कहींकी । जा भीतर । देख वह विचारा तेरे बिना कैसा बेचैन हो रहाहै ? जरा किवाडेकी ओटसे उसकी दशा तो देख ! उसका जी वृथा क्यों जला रहीहै ? तूही अनोखी हुई । दो दिन पीछे तेरी कितनी लाज रहैगी सो मैं देखूंगी ।"

"तुमने अच्छा ताना दिया जी ! तुमहीं बताओ मैं उससमय अपने दुःखकी बात न कहती तो क्या करती ? उस निगोडे दिनकी मुझे अभी याद न दिलाओ। मेरा जी दहलता है। अच्छा मैं लजवंतीहीसही। तुम्हें क्या? जो दिन आज मेरे लियेहै वही एकदिन तुम्हारे लिये था । तब क्या तुम सीधी २ चलीगई थीं । आज मुझे सिखावनदेने आईहो । कहूं क्या मैं उसदिनकी बात ? मुझे न छेडो । मैं तुम्हारे सब गुण सुनचुकी हूं । देख लेना मेरी लाज । दोदिन क्या दोवर्ष पीछे देख लेना । मैं क्या तुम्हारी तरह निर्लज्ज होजाऊंगी। दिनभर अपने आदमीकी रटनके सिवाय तुम्हें काम ही नहीं । उन विचारोंको न काम करने देती हो और न कमाई करने देतीहो । तुम्हें तबही कल पडतीहै जब वह दिनरात तुम्हारे पास बैठकर तुम्हारा (गालको अंगुली लगाकर) गोल २ गुलाबी चेहरा देखते रहैं, तुम से आंखें लडाते रहैं ।"

"अच्छा बहन ! तू जीती और म हारी अब तो भीतर जा। अब बहुत रात चलीगई अब उस बिचारेको बहुत न सता । अब लाज बहुत होचुकी । जा, बहन जा ! मैं तेरे निहोरे करतीहूं ! जा !"

" मैं जाऊं वा न जाऊं तुम निहोरे क्यों करतीहो ? मुझे भेजनेमें तुम्हें लाभही क्याहै ? "

"लाभ क्याहै सो कल तुझसे मिठाई लेतीबार बतलाऊंगी। देख अकेली २ ही मिठाई न खाजाना तुम दोनोंके नैवेद्यमें मेरा भी साझाहै ।"

" हां ! तुमने मेरे लिये मिठाई भेजी थी ना–सो आज मुझसे मांगने आईहो ! क्या मिठाईके लालचसे ही तुम मुझे यहां घसीट लाईहो ? भला तुम्हारा लालच ! तुम भी बडी पहुँची हुई मालूम होतीहो।"

" अच्छा ! टेढी २ बातें न कर । मैं जातीहूँ । मैं तुझे यहीं छोडकर जातीहूँ । मेरे मानमनुहारसे नहीं जायगी तो तेरा आदमी हाथ पकडकर भीतर घसीट लेजायगा । तू भला मेरे कहनेसे क्यों जायगी । तू तो बसंतपुरकी पढी लिखीहै ना ! मेरी जबानमें रस नहीं तो अपने आदमीके हाथसे अपना पहुँचा मसकाकर जाना । देख ! भीतर ग्राफोफोनमें क्या बज रहाहै—"सनम इतना न सताओजी। " बस तेरा आदमी तुझे बुला रहाहै । अब तो जा। अबतो जायगी ? "

" वाहजी ! जाओ ! तुम भी भली दिल्लगी करने लगीहो । "

" अच्छा, ले ! मैं भी यही कहलाना चाहती थी । जातीहूं । बस मौज-कर "—यह कहती हुई दबे पांव वह स्त्री वहांसे खसकी। सुशीलाने उसके दुपट्टेका कोना पकडकर उसे बहुतेरा रोका परन्तु वह न ठहरी। उसके जानेपर सुशीला थंभेकी तरह खडी होकर वहीं कुछ सोचने लगी। इनका संभाषण भीतरसे खडे २ परदेकी ओटमें पंडितजी सुनते और सुन २ कर आतुर होते जाते थे। मैदान खाली पातेही आप बाहर आये । आकर उन्होंने ज्योंही रसभरी चितवनसे सुशीलाकी आंखोंकी ओर देखा उसने मंद२मुसकुराकर शिर नीचा करलिया।"आओ प्यारी,भीतर चलो।" कहते हुए पंडित साहब उसका हाथ पकडकर भीतर लेगये हाथ पकडते ही सुशीलाका शरीर ढीला पडगया।उसे रोमांच हो आये। वह लज्जाके मारे धरतीमें गडने लगी।उसके शरीरमें पसीना हो आया और खिडकियोंसे शीतल मंद और सुगंधित पवनने आ २ कर उसका शरीर कंपा दिया ।

" हैं हैं प्यारी ! इतनी कांपती क्यों हो ? क्या जाडा लगताहै वा डर ? मेरे पास आनेमें जाडे और डरका काम क्याहै ! देखो मैं तुम्हारी कितनी देरसे राह देख रहा हूं ! आओ प्यारी, जी खोलकर आओ अब देरी न करो । "

इतनी देरमें फिर ग्राफोफोनसे वही—" सनम इतना न सताओजी " की मीठी २ आवाज आने लगी । सुशीलाने टेढी २ नजरोंसे पंडितजीकी ओर दो चार तीर मारनेके सिवाय चुपचाप खडी रहनेमें कोई चार पांच मिनट

बिता दिया। ये पांच मिनटही पंडितजीके लिये पांच घंटेके बराबर थे। उन्हों-ने हाथ पकडकर सहजसे एक कुर्शीपर सुशीलाको बिठलाया और सामने-की कुर्सीपर आप जा बैठे। इसके बाद क्या हुआ सो कहना मेरा काम नहीं है। आज कलके कितने ही लोग सुलेखकोंमें नाम लिखवानेका हौंसिला करके पर्देके भीतरकी ऐसी २ बातें लिख जातेहैं जिन्हें पढते समय पढने-वालों और पढनेवालियोंको लज्जा आवे। वे यहांतक लिख बैठते हैं कि कभी २ अश्लीलतामें उतर जातेहैं परंतु ऐसा लेख मुझे पसंद नहीं है और जहांतक मै जानताहूं ऐसा लेख और शिष्ट लोगोंकोभी पसंद नहीं है। इसकारण मैं यहां इतनाही लिखना उचित समझताहूं कि इसके बाद वही हुआ जो प्रथम समागमके समय युवा युवतियोंमें-दम्पतीमें हुआ करता है। इस दम्पतीके प्रथम सुखके समय उनके आनन्दमें दखल डालनेके लिये न तो चोरकी तरह मेरी लेखनी घुसना चाहती है और न मैं एकान्तके सिवाय अपने पाठक पाठिकाओंको इस वादमें घुसनेकी सलाह देताहूं। यहां केवल वही लिखना आवश्यक है कि धर्मशास्त्रकी विधिसे दोनोंने गर्भाधान संस्कार तो दिनमें करही लिया था। रात्रिको दोनोंने मिलकर पलंगका पूजन किया है और सारी रात मौजमें, आनंदमें, सुखमें, रसलूटनेमें बिताई।

प्रकरण ३.

बागमें अठखेलिया।

" अब फूल बहुत तोड चुकीहो। जरा कुंडकी सीढियोंपर बैठकर रातकी बातें करलैं। कहो! बहन चारों अपनी २ रातकी कथा।"

हमसे क्या पूंछती हो? हमतो अब गई गुजरी हुई। इससे पूंछो। यह नई आई है। इसकी कल पहली गनगोर थी। और समागमकी पहलीही रात थी।"

दोजनीकी इस तरह बातें होतेही तीनोंने मिलकर चौथीको चारों ओरसे घेर लिया। किसीने उसका आंचल पकडा किसीने उसका हाथ थांभा

और किसीने उसके गालपर चुटिकियां लेते हुए कहाः-" हां २ ! कहना पडैगा ! रातको क्या २ हुआ सो कहना पडैगा । तू पढीलिखी और तेरे आदमी पढेलिखे हैं । देखें हम गवारोंके सुख तुम्हारे सुखसे मिलान तो करें ।"--इतना सुनतेही सुशीलाने मुसकुराकर आंखें नीची करलीं । वह लगभग दश पंद्रह मिनटतक योंही चुपचाप खडी रहकर उनकी ओर कभी कनखियों देखकर हंसती और कभी लजाकर आंखें बंद करती रही तब एकने उसे गुदगुदाया, दूसरीने उसका दुपट्टा खींचा और तीसरी उसके गोरे गुलाबी गालोंपर चूमालेकर उसकी गलबांही लेती हुई बोलीः-

" सीधी अंगुलियोंसे घी नहीं निकलताहै । इसे तीनों मिलकर गुदगुदाओ । यह सीधे२कहनेवाली नहीं है । गुदगुदानेसे तंग आकर अपने पोत आप प्रकाश करदेगी । "

"नहीं २ ! बिचारीको तंग क्यों करतीहो । इसे लाज आतीहै तो पहले तुम्हीं कहो । औरोंकी सुनकर इसका भी हिया खुल जायगा । आदमी कहा करते हैं कि तबले सारंगीके सुर मिलतेही नाचनेवालीके पैर फडके उठते हैं । "

" वाह ! तू आई सीख देने । तेरे पैर फडकतेहैं तो तूही नाच । हम क्यों कहें ? हम पिसेको क्यों पीसें ? पिसेको पीसनेमें फायदा क्या ? यह नई दुलहिनहै । इसके नये मुँहसे नई रातकी नई नई बातें कहलावैंगी । गुदगुदाओ री बीर । इसे गुदगुदाओ । इसके बिना यह न कहैगी ।"

"जब यही सलाह पक्कीहै तो तुम दोनों इसे गुदगुदाओ । बहन ! मैं ऐसा काम न करूंगी । इसके कहनेसे मैं करभी देती पर यह भली सीख देनेमें मुझही नचातीहै ।"

"अच्छा ! तू सूमका सा मुँह बनाये खडीरह । हमहीं सबकुछ कहलवा लेंगी । तू कनरसिया बनकर सुनती रहियो ।"

इस तरहकी जब बातचीत होचुकी तो दो सखियोंने मिलकर इसे खूब गुदगुदाया ? इनमें एक सुशीलाके मामूकी लडकी बहन सुमति थी और दूसरी सुमति भौजाई राधा । इन दोनोंको रोकनेवाली सुशीलाकी

दूरकी नातेदार जानकी थी । इसका पीहर उसी नगरमें था जहां सुशीलाका था । यह उसके बालवयकी सहेलीभी थी । बस इसीलिये इसकी सहायता करती थी । सुमति और राधाने जब गुदगुदाते तंग करलिया, जब हँसते२ उसका मुँह लाल पडकर आंखोंमेंसे मोतीकेसे दाने टपकने लगे तब सुशीलाने इतनाही कहा किः-

रातकी बातमें क्याकहूं बहन ! पहले पहल जो कुछ तुम सबका हुआ था सोही मेरा हुआ। जैसी तुम तीनोंहो वैसीही मैंहूं । मुझमें कौनसी विशेषताहै जो नई बात होती । अपने २ कलेजेपर हाथ धरकर अपनी २ बात याद करलो । तुम अपनी जगह मुझे समझ लेना और (लाजके साथ गर्दन झुकाकर सैनसे समझाती हुई) उनकी जगह अपने २ भर्तारोंको ।"

"खूब ! बडी चतुरहै । देखो २ ! लसोडेकी गुठलीकी तरह कैसी निकलतीहै । अच्छा यह नहीं कहतीहै तो मै कहूंगी । मैं छिप२ कर घंटे डेढ-घंटेमें इनके सब गुण देखचुकी हूं । तुम जानतीहो कि इनके कमरेके पासही मेरा कमराहै । मेरे वह आजकल यहांहैं ही नहीं । फिर मुझे लल्लाके सुलानेके बाद कामही क्या था ? वह निगोडा घंटे डेढघंटेहीमें जाग उठा। नहीं तो मैं इसके सब चरित्र देख लेती । अरी सखी मैं इसकी बात क्यों कहूं ? यह तो बडी पहुंचीहुई निकली। थोडीसी बार झूंठा नखरा दिखानेके बाद यहतो उनके ऐसी लिपट...."

इतना कहते२ "झूँठ २सब झूँट । बिलकुल झूँठ" कहकर सुशीलाने राधाका मुँह पकड लिया । मुँह पकड लेनेपरभी जैसे तैसे उसने इतना अवश्यही कहदिया कि- "ग०००ई और फिर इतनी खुलगई मानो छः महीनेकी आई हो । "तब तो जानकीसेभी न रहा गया । उसने कहाः-

"हां ! सत्यहै ! ऐसा हो तो अचरज क्याहै । बचपनमें जब बहनोईजी वसंतपुरमें पढनेके लिये अपनी ननिहालमें रहते थे तब यह उनके पास जा२ कर कभी पोथी, कभी खिलौने और कभी मिठाई लाया करती थी । यह उससमयकी बातहै जब यह सात आठ वर्षकी थी । उस समयसे दोनोंका प्यार देखकरही तो इसके मा बापने उनके साथ इसका व्याह कियाहै ।"

राधा-"हां २ ठीकहै! तबही इन्होंने बिलकुल लाज न की, तबहीं यह बिलकुल न डरी। बहन! यह पूरी पहुँची हुई है। योंही रातको जब मैं पहुँचाने गई तब मुझसे झूंठे नखरे करती थी। मैंभी देखो, कैसी उस्ताद निकली। क्यों कहदूं क्या, ? रातकी सब बातें! लाओ रातकी मिठाई! क्यों अब तो दोगी ना ?।"

सुशीला-" बातही क्याथी जो कह दोगी। क्या घूंसमें मिठाई मांगती हो? मामी तुमभी बडी छटीहुई हो।"

सुमति-छटी हुई है। तबही तो विचारे भाईको छः महीनेतक तंग किया था। क्यों कहदूं। देखो, आईहै मेरी बहनकी चुटकियां लेने।"

राधा-"जाने दो। अब इन बातोंको। अब बहुत होगई। अब और बात करो। चलो, अब मुस्ता लिये। अब फिर रहेसहे फूल चुनकर घर चलैं। देरी होगई है।"

जानकी-"हां! अबतो चलैहीगी। अब अपनी बिरियां टालबाजी करती है।"

सुशीला-"देख बहन, भाभीका अन्याय।"

राधा-"अच्छा, तुम्हारी खुशीहो जितना बकलो। मैं अपने कानोंके ढट्टे लगालेती हूं। मैं सुनूहींगी नहीं तब तुम्हारे बकनेसे क्या लाभ होगा!"

सुशीला-"अच्छा जानेभी दो इसकी बातको।यह डरती है तो फिर इन्हें क्यों डराती हो! चलैं अब फूल चुननेका कामभी तो करनाहै। गौरी पूजनके लिये मैं तो गुलाब, मोगरा और चमेलीके सिवाय कोई फूल नहीं तोडतीहूं। येही मुझे बहुत प्यारेहैं।"

राधा-" जैसी तुम्हें इन फूलोंकी सुगंध प्यारीहै वैसाही प्यार ननदोईजीका सदा तुमपर बना रहै। बहन! तुम बडी भाग्यवान् हो।"

जानकी-" हांजी हां, इसकासा नसीब तो भगवान् सबको दे। विचारी सुमति गरीबहै। उसका आदमी बंबईमें १०) महीनेका नौकरहै। दो तीन वर्षसे घर आकर दोचार महीने रह जाताहै। वह क्रोधीभी बडाहै। जरासी भूल होतेही इसकी लात घूंसोंसे खबर लेताहै। राधाके आदमी

स्वभावके तो अच्छेहैं परंतु उन्हें नौकरीमें मेहनत बहुत करनी पडतीहै। नित्य दश बारह घंटेतक पीसना क्याएक आदमीके लिये कमहै ? और फिर इसपरभी सालभरमें होली दिवालीपर दोदो दिनके सिवाय कभी सौगंद खानेको छुट्टी नहीं। बस जैसे कंथा घर रहे वैसेही विदेश।"

सुमति-"और तेरी ? तेरी बात मैं कहूं ?"

जानकी-"तू क्या कहेगी मैंही कहे देतीहूं। मेरे वह कमजोर और गुस्सा ज्यादह है। कभी सीधी २ तो बातही नहीं करते। सदा बीमारही बने रहतेहैं। कभी उन्हें नहरुआ निकलताहै, कभी खांसी होतीहै और कभी बादी घर दबातीहै। स्वभावके ऐसे हठीहैं कि मेरे सौ बार कहनेपरभी कभी जमकर इलाज नहीं करते। अपनी मनमानी दवा करके अपनेही हाथसे अपना डील छिजा रहेहैं। जो मैं समझातीहूं तो गाली देतेहैं और जो मैं रोकतीहूं तो मेरी डंडोंसे खबर लेतेहैं मैंभी पिटते २ पक्की होगई हूं।"

सुमति-"हां तू अपना कुसूर काहेको बतलावेगी ? मैं कहूं तेरा कुसूर ! तू कैसी ढीठ होगईहै। बात २ में उनका सामना करतीहै, बात २ में उन्हें जबाब देती है और बात २ में उनके कहनेको सुना अनसुना करके टाल देतीहै। निगोडा इन दोनोंका प्यारभी ऐसाहै कि बे हिसाब और जब आपुसमें लडते हैं तबकी न पूंछो बात ! तब एक ओरसे उनका डंडा चलताहै और दूसरी ओरसे इसकी जीभ। इसकी जीभभी बडी लंबी होगई है। औरोंसे न मालूम यह इतनी सीधी कैसे रहती है बस उनके और इसके तो आपुसमें सामने ताराहै।"

जानकी- (लज्जित होकर) "झूंठहै। झूंठ ! मैंने इसका भेद खोल दिया इसी लिये यह मुझपर दोष लगातीहै। जब यह मेरे लिये ऐसा कहतीहै तो मैंभी इसकी एक बात कहूंगी। क्यों कहदूं। सुमति ? इसके आदमी इसे मारते अवश्यहैं पर प्यारभी इनका बडाभारीहै। छिप२कर इन दोनोंकी चिट्ठियां आतीजाती रहतीहैं। वह प्यारी-प्राणप्यारीके सिवाय तो कभी बात नहीं करते। बस जितने दिन यहां रहते हैं। इसे पलभरभी

अपने पाससे हटने नहीं देते। जो कहीं उनकी बंबईमें अच्छी नौकरी लगजाती तो वह कभीकी इसे वहां लेगये होते।"

राधा-(दोनोंके बीचमें पडकर) "यह विचारी क्या जायगी। जायगी हमारी ननद् सुशीला बाई। उसदिन ननदोईजी हमारे उनसे यही कहते थे कि मैं इसबार सबको साथ लेजाऊंगा जोकिं मुझे बार २ छुट्टी न लेना पडै। पराई नौकरी ठहरी। बार २ रियायती छुट्टी तो मिल नहीं सकती। तनख्वाह कटाकर आनेमें नाहक हजार पांचसौका नुकसान उठाना पडताहै।"

सुमति-" क्या महीना दोमहीना घर रहनेहीमें हजार पांचसौ बिगड जातेहैं। ऐसा उनका क्या रोजगारहै। मैं तो इतनाही जानतीहूं कि वह चंद्रपुरके डिप्टीकलट्टर हैं। वह हैं तो मेरे बहनोई, मैं उनसे पूंछ सकतीहूंपर उनके सामने जानेमें मुझे लाज आतीहै।"

राधा- "लाज आनातो ठीकहीहै। बहनोई क्या जवान भाईसेभी अकेले बात करनेमें लाजहै। तुम्हारे भाई मुझसे उसदिन यही कहते थे कि मनका कुछ ठिकाना नहीं है। यह बे लगामका घोडाहै इसलिये पराया आदमी तो क्या बरन् कभी बाप, भाई, चचा, ताऊ और देवरके पासभी अकेला न रहना चाहिये।"

जानकी-"यह सलाह तो हियेका हार बनाने लायकहै। अच्छा भला अब चलनाहै। जरा सुशीलाके सुखकी थोडीसी बातें और करलें। भगवान् इसका अहिवात अमर रक्खे। भगवानने इसे सब सुख दियाहै। हमारे बहनोई रूप रंग और डीलडौलमें कैसेहैं सो तो तुम सब जानतीही हो।वह स्वभावकेभी बडे सीधेसाधे,मिलनसार और भले हैं। बुराई तो उनके पडौसतकमें नहीं फटकने पाती। पराई लुगाईकी ओर कभी आंख उठाकरभी नहीं देखते।वह पढनेकेलिये आठ सात वर्ष बसंतपुरमें रहचुकेहैं जो बातें मैंने अपने बापसे सुनी सोही कहती हूं।वह एकदिन उनके स्वभावकी प्रशंसा करके सुशीलाके भाग्यको सराहते थे। भगवान्ने उन्हें पैसाभी दियाहै। चंद्रपुरकी डिप्टीगरीमें भलमनसाहतसे चलनेमें चाहे उन्हें और हाकिमोंकीसी कमाई न हो परंतु लोग कहतेहैं कि उनसे साहब लोग बहुत राजी

हैं। वह किसीदिन बहुत बडे दर्जेपर पहुंचेंगे । घरकी जमींदारी और व्यापारकी कमाई जो कुछहै सो तुम जानतीही हो।"

तीनों–"भगवान् ऐसा सुख सबको दे । सुशीलाका अहिवात अमर करै बस यही हमारी आशीस है।रामजी करै,सुशीला बाई जलदीही नन्हा गोद खिलावै।"

बस तीनोंजनी सुशीलाका हाथ पकडे, "गोद खिलावै, गोद खिलावै" कहतीहुई कभी आमके पेडोंके गिरेगिराये मोर चुनती, कभी गुलाब, कभी मोगरा जुही और चमेलीके पुष्प तोडती, केलेके पत्तोंमें उन्हें लपेट कर उनकी दोनी बनाती बागकी सैर करती २ कुंडके पास संगमर्मरके चबूतेरपर जाबैठीं। इससमय सायंकालके साढेपांच बज चुके थे। डूबते हुये सूर्यनारायणकी पीली २ किरण हरे २ पेडोंपर पडकर एक अजब रंग पैदा करहीं थीं गुलाबकी झाडियोंमेंसे मोगरेकी टट्टियोंमेंसे और नारंगी के पेडोंमेंसे हवाके साथ सुगंध आ २ कर इन चारोंके हृदयमें भगवान् पंचसायककी आग सुलगाने लगी। सांझका समय पास आता देखकर अपनी २ सासोंसे डरती हुई--देरी होजानेसे उलाहना पानेका भय करके चारोंने अपने २ घर जानेका विचार किया। ज्योंही ये इस विचारसे खडीहोकर फाटककी ओर बढीं सामनेसे एक गबरू जवान हाथमें छडी हिलाता, हंसकीसी चाल चलता, बढिया पोशाक पहने, शिरपर काश्मीरी कामकी सादी टोपी ओढे आता दिखलाई दिया । यह गबरू जवान और कोई नहीं था । हमारी सुशीला बाईके सर्वस्व पंडित मोहनचंद्र शर्मा थे । उनको आता देखकर चारों सकपकागईं । चारोंही लाजके मारे अनारके पेडोंमें छिपकर इनकी ओर निहारने लगीं। उनमेंसे तीनकी देख भाल तो साधारण थी किन्तु सुशीलाकी कली२खिल उठी। वह बारंबार अपने भाग्यको सराहकर परमेश्वरको धन्यवाद देनेलगी।जब पंडितजी दूर निकलगये तब तीनों सुशीलाके मनका भाव जानकर उसकी हँसी दिल्लगी करती अपने घर गईं। तीनों पंडितजीकी हवेलीके आस पास रहती थीं। चारोंमें मित्रता थी। बस वहाँ जाकर चारों अपने २ काममें लगीं।

प्रकरण ४.

पतिसे बातचीत ।

"हैंजी,मैंने सुनाहै कि,आपकी छुट्टी पूरी हो चुकी है । यह छुट्टी भी क्या निपूता तमाशा है अभी जुम्मा जुम्मा आठदिन होतेही छुट्टी पूरी ! भली आपकी छुट्टी ! तब क्या आप निश्चयही जायंगे ? कल राधामामी तो मझसे यही कहती थीं कि आप परसों जायँगे।और मैं ?आपके बिना यहां !न रहूंगी ।

"प्यारी जुम्मा जुम्मा आठदिन कैसा ! मुझे यहां आये डेढ महीन होगया । मेरी छुट्टी अवश्य पूरी होगई और परसों ही मुझे जाना भी पडेगा परन्तु मैं अभी तुझे साथ नहीं लेजासकता परदेशका वास्ता ठहरा । तेरी अभी उम्र थोडी है । जबतक चंद्रपुरमें तेरे रहनेका ठीक प्रबंध न हो-तो मैं तुझे कैसे लेजासकता हूं ? "

" प्राणनाथ, प्रबन्धकी बातसे मुझे कुछ मतलब नहीं परंतु मैं अवश्य चलूंगी । मैं आपके बिना यहां न रहूंगी । मैं यहां अकेली एक दिन भी न रहूंगी । "

" प्यारी हठ न कर । तू यहां अकेली कैसे है ? तेरी सास तेरी ननद और तेरी जेठानी तुझे प्राणसे भी बढकर समझती हैं । घरमें भाईके बालबच्चोंसे और बाहर सखी सहेलियोंसे दो तीन महीने सहजमें निकल जायंगे ।"

" प्राणनाथ ! यहां सब कुछ है परन्तु आपके बिना स्वर्गभी नरकके समान है । संसारमें जितने नेह और नाते हैं वे सब आपके बिना मेरेलिये सूर्यसेभी ताते हैं । आप दो तीन महीनेकी कहते हैं परंतु मैं दो तीन दिन भी आपके बिना न रहूंगी । स्वामी, मेरी दिल्लगी न करो । आपने उसदिन भाई चंद्रधरसे तो कहा था कि मैं इसबार साथ लेजाऊंगा । "

" क्या चंद्रधरकी बात तुझतक पहुँचगई।वह भी निरा लुगाईका दास है। जो कुछ खबर पाता है अपनी जोरूसे कहदेता है । औरतें बडी उस्ताद् होतीहैं । ये पर्देमें रहकर भी दुनियाभरकी खबरें जान लेतीहैं । मानो संसारका इनके पास टेलीफोनहै । "

"हां ! टेलीफोन है और आपके मनका मेरे मनमें तार लगा हुआ है ।"

"क्या डेढही महीनेमें तार लगगया ! इतनेसे दिनमें प्यार ऐसा दृढ होगया !"

"इतनेसे दिनमें नहीं, इसकी जड उस समयसे पडी है जब आपने मुझे गुडिया दी थी।"

"तब तो तू निरी आठ नौ वर्षकी छोकरी थी । तब तू क्या जाने प्यारकी बात !"

"प्यारकी बात न मैं तब जानती थी और न अब जानती हूं परंतु न मालूम तबसे ही क्यों मेरे मनमें आप बसे हुएहैं, तबहींसे मुझे आपके दिनभरमें कमसे कम एक बार दर्शन बिना कल नहीं पडती थी। तब मैं अच्छीतरह यह भी नहीं जानती थी कि पतिके साथ इसतरह रहना होताहै परंतु मेरा जी आपसे उलझ गया था । जब मेरे सयानी होनेसे बाहर आना जाना कम हुआ मैं दिनभर इसी ताक झांकमें रहती थी कि किसी न किसी तरह आपके दर्शन पाऊं । उस समय मैं दर्शनके सिवाय और कुछ नहीं जानती थी परंतु आपको देखे बिना मुझे कल नहीं पडती थी।"

"प्यारी, कल नहीं पडती थी तो तैंने मुझे इस बातको जतलाया क्यों नहीं ? भला अच्छा हुआ जो तेरे मा बापने तुझे मुझको देदिया नहीं तो"

"नहीं तो क्या होता ? मैं जीती नहीं । जिस भगवान्‌ने प्यारका टेलीफोन मेरे हृदयमें लगा दिया था वही तो उनके मनमें भी लगानेवाला था और (मंदमुसक्यानसे आंखोंका एक बाण मारकर) सच कहो। आपके मनमें उसका तार नहीं लगा था ? नहीं लगा था तो आप मुझे देखकर मुसकुराते क्यों थे ? मोंछों ही मोंछोंमें हँसते क्यों थे ? लाला-बनवारीलालके साथ मेरे पितासे आपने कहलाया क्यों था ? आपके सारे गुण मेरे पेटमें हैं । आप इसीलिये तो मुझे गुडिया, खिलौना और पोथी देदेकर हिलाया करते थे।"

"तब तो तू इसी लालचसे फँसगई । अच्छा लालचसे फँसी है तो मैं तेरे लिये चंद्रपुरसे चंद्रहार बनवा लाऊंगा।मुझे इसबार अकेला जानेदे ।"

"हां ! मैं लालची ही सही परंतु मैं चंद्रहारकी लालची नहीं हूं। मुझे आपका चंद्रहार नहीं चाहिये। आपके दर्शनकी आपके साथ सुखभोगनेकी भूंख क्या चंद्रहारसे बुझ सकती है ? मेरे लिये आपही जेवर हैं, आपही स्वर्ग हैं और आप ही भगवान् हैं। जल बिना मछली यदि जी सकती हो, प्राण बिना प्राणी यदि रहसकता हो तो मैं आप बिना रहूं। मैं आप बिना न रहूंगी ! न रहूंगी !! न रहूंगी !!! मैं आप बिना यहां अकेली न रहूंगी! रहनेकी बात न कहो हे नाथ! आपके बिना रहनेकी बात न कहो ! मेरे कान ऐसे कठोर शब्द सुनना नहीं चाहते। जब मेरा जी ऐसी बात सुननेसे ही घबडाता है तब मैं कैसे रहसकूंगी ? मुझे अकेली न छोडो। मैं न रहूंगी। मैं कदापि न रहूंगी।"

गलेमें हाथ डालकर "प्यारी अभी दो महीने यहां रहजा। हठ करना अच्छा नहीं है।" कहतेही सुशीलाकी आँखोंमेंसे आंसुओंकी धारा बहने लगी। रोनेसे उसकी आंखों लाल २ होगई। गला भरकर उसको हिचकियां आने लगीं और ज्योंही वह अचेत होने लगी पंडित मोहनचन्द्रने उससे एकाध मीठीसी दिल्लगी करके उसे चिढाया। इस चिढानेसे उसे औरभी जोस आया और वह पतिके चरणोंमें गिरकर रोने लगी तब पंडितजीने उसे गले लगाया। प्रेमकी बातोंसे उसका आश्वासन किया और साथ लेजानेका जब पक्का प्रण किया तब सुशीलाके जीमें जी आया। इसके बाद पतिपत्नीमें जो २ आमोद प्रमोदकी बातें हुई जो २ हँसी दिल्लगी हुई उनका लिखना आवश्यक नहीं है परंतु इतना लिखे बिना काम नहीं चल सकताहै कि जिस समय ये दोनों प्रेमसागरमें निमग्न होकर प्रेमामृत का पान करके प्रेमरसके मतवाले बनरहे थे डाकके चपरासीने आकर इनके रंगमें भंग डाल दिया।

सिकंदरखाँ चिट्ठीरसाने पंडितजीको जो सर्विस लिफाफा दिया उसमें दो सम्मन थे। एक पंडिजीके नाम और दूसरा सुशीलाके नाम था। दोनोंमें दोनोंहीकी अदालतमें २७ जुलाईको हाजरीका उल्लेख था।

सम्मन पढकर एकबार पंडितजी हँसे। उनकी घसीट उर्दूपर हंसे और अपनेही मनमें कहने लगे "देखो उर्दूबीबीके चरित्र। भला जब ये मुझसे ही कठिनतासे पढ गयेहैं तब ऐसी लिपि पढनेमें पढ़ानेमें बिचारे गंवारोंको कितना कष्ट होता होगा। मैं इन्हें अवश्य मेजिस्ट्रेटको दिखलाऊंगा। इसमें मेरेही नामकी कितनी खराबी की है। 'तीन' का 'नहीं' तो बिलकुल स्पष्ट पढा जाताहै।" इनकी हँसीका प्रयोजन न समझकर जब प्रियानें पूंछा तो थोडे-सेमें उसे समझाकर कहने लगे:--

"प्यारी, न्योता आया है। तुझे अदालतका न्योता आयाहै।"

"मुझे न्योता? और आपकोकिया उस निपूते किरंटके मामलेका न्योता है! परंतु मैं अदालतमें कैसे जाऊंगी! मुझे अदालतमें न लेचलो। मैं वहां जानेसे जीतीही मर जाऊंगी। मेरे मुँहसे वहां एक बोलभी न निकलैगा।"

"निकलै चाहे न निकलै परंतु एकबार जाना पडैगा। कोई घबडाने की बात नहीं है। मैं भी तेरे पास रहूंगा। मेमलोग-उनकी देखा-देखी कितनी ही देशी नारियाँ बडे २ समाजमें खडीं होकर व्याख्यान देती हैं और तू जरासी अदालतमें जाते हुए डरतीहै, लजातीहै। डरै मत।"

"आपके रहते हुए मुझे डरतो कुछ नहीं है परन्तु ऐसी जगह जाते लाज आतीहै। लोग मुझे हँसेंगे। हमारे दोनों कुलोंकी बदनामी होगी और लुच्चे लफंगे जन्मभर ताना देंगे। मेम लोग और उनकी देखादेखी चाहे जो देशी नारियां व्याख्यान दें परन्तु भलेघरकी नारियोंकी पुरुषोंके सामने निकलनेमें शोभा नहीं है।"

"तब क्या वे बुरे घरकी हैं?"

"या वे बुरेकी न सही भलेसेभी भले घरकी सही परन्तु क्या आपका कानून कुलवधूकी भले घरकी बहूबेटियोंकी अदालतमें हाजरी माफ नहीं करा सकतीहै जिन घरानोंमें औरतोंको पर्देसे बाहर निकालनेकी चालही नहीं है उनका क्या होता होगा?"

"फौजदारीके भारी २ मुकद्दमोंके सिवाय उन्हें अदालतमें नहीं बुलाया जाताहै परंतु हमारे यहां ऐसा पर्दाभी तो नहीं है । तूही जब पंडित वंशीधरके यहां विवाहमें चंद्रपुर गईथीं तब बीसबार अदालतके सामने होकर निकली होगी आज जानेमें क्या हुआ ? "

" क्या, क्यों न हुआ ! क्या अदालतके बाहर दसवीस और तोंके झण्डमें निकल कर जाना और अकेली अदालतमें जाना बराबर ही है ? मैं आप जैसे नामी डिपटिके घरकी होकर अदालतमें गई तो क्या आपकी बदनामी न होगी ? मुझे अदालतमें लेजानेसे बचाइये। आपकी चिरौरी करतीहूं। हाथ जोडती हूं । "

"चिरौरी न कर, प्यारी, (हाथ पकडकर) हाथ न जोड । मैं स्वयं इन बातोंको जानताहूं । एक फौजदारी मामलेमें, जिससे तेराही मुख्य संबंध है तेरी गवाहीहै । बस यही विचारहै परन्तु मैं प्रयत्न करूंगा । "

" प्राणनाथ, प्रयत्न वा यत्नकी बात आप जानो परन्तु मैं न जाऊंगी। भले ही उस दुष्टको सजा मिलै वा न मिलै । मुझे कुछ मतलब नहीं । जो कुछ होना था सो होचुका । आगेसे अकेले कभी जनानी गाडीमें न बैठूंगी। बस होगया। मुझे उस राक्षसको सजा दिलाकर ही क्या करनाहै ।"

" प्यारी, ऐसे दुष्टको अवश्य सजा दिलाना चाहिये ताकि आगेसे ऐसा अत्याचार कोई न करे । "

" प्राणनाथ, आपका कहना ठीक है परन्तु केवल इसी बातके लिये मुझे अदालतमें न घसीटना। वहां जाना मेरे लिये मरजानेसेभी बढ़करहै मैं न जाऊंगी।

" तू घबडावै मत इसका सब प्रबन्ध मैं करलूंगा । परन्तु चंद्रपुर तुझे मेरे साथ अवश्य चलना पडैगा । उस तारीखमें अभी देरी है इसलिये मुझे एक महीनेकी और छुट्टी लेकर इस मुकदमेका सामान इकट्टा करना पडैगा । "

" हां मैं झंझटमें फँसूगा और तेरी मौज परैगी । अच्छी बातहै । तूं मौजकर । " दम्पतीकी ये बातें उस समयकीहैं जब वे दुपहरीमें अपने कमरेमें अकेले मिले ।

प्रकरण ५.

अदालतमें सुशीला।

मुकद्दमेकी पैरवीके लिये सबतरहकी तैयारी कर पंडित मोहनचंद्र सुशीलासहित चंद्रपुर पहुँचे । उन्होंने नियत समयपर सुशीलाकी अदालतमें हाजरी माफ करानेके लिये बहुत प्रयत्न किया । सुशीलाभी पतिसे बारंबार हठकर, बारंबार निहोराकर अदालतमें न जानेके लिये बहुतरोई झींकी परंतु मुकद्दमा फौजदारी था । पुलिसने इस मुकद्दमेमें सरकार मुद्दई बनाकर सुशीलाको सरकारी गवाह ठहरायां था । इस कारण पंडितजी इस कार्यमें पूरे २ सफल न होसके । मैजिस्ट्रेट मि. केंपने उन्हें डिपुटीकलक्टर समझकर इतनी रिआयत अवश्य करदी कि सुशीलाको न्यायालयके भीतर गवाहोंके कटहरेमें खडा न रहना पडा । ढंकीहुई गाडीमें पर्देके भीतरसेही अदालतने सुशीलाकी गवाही ली । उसने उस दिनकी घटनाकी सब बातें यादकर डरते २ रोते २ सब कुछ अपना बीता सुना दिया । पुलिस इन्स्पेक्टर सैयद अकबरहुसेन अच्छे आदमी थे । उन्होंने वह भले घरकी स्त्रियोंकी प्रतिष्ठाका बडा आदर करतेथे और जो कोई उनकी ओर आंख उठाकरभी बुरी दृष्टिसे देखता उसके कट्टर शत्रु बनजाते थे । टिकिट कलेक्टर मि. उडकटरको अपने कियेका फल चखानेके लिये उन्होंने खूब प्रयत्न किया । पंडितजीके, सुशीलाके, बुढिया मुसलमानीके और रेलक और २ यात्रियोंके इजहारोंसे अत्याचार प्रमाणित हुआ । मि० उडकटरने रेलके कर्मचारी गोरे और काले गवाहोंमें पेश किये उन्होंने (सबने) अपने २ इजहारोंमें यही कहा कि मि. उडकटर उसदिन अपनी ड्यूटीपर आयेतो थे परंतु शराब बहुत पियेहुए थे नशेमें मतवाले होकर जनानी गाडीमें घुसगये । रेलके अफसरने उनकी नेकचलनीकी मैजिस्ट्रेटसे शिफारिशकी । मि० उडकटरने अपने इजहारमें कहा कि–

"हमने जरूरही उसडिन शराब बहुट पीलिया ठा।शराबकी ढुनमें हमने डयूटी छोडकर मंगलपुर अपनी प्यारीसे मिलनेको जानेका इराडा किया। गाडीने सीटी डेडिया था । इस वास्टे हम सूनीगाडी पाकर जनानी गाडीमें बैठगया । लेकिन हमने इस औरटके साठ जबरडस्टी नहीं किया।"

मि० उडकटरके बयानपर मुद्दईके वकीलने उनकी जिरह की । जिरहमें साहबकी चौकडी भूलगई वह घबडाकर कह उठे कि—

"हम शराबके नशेमें टो ठाही । हमें उसी नशेमें अपनी प्यारीके पास जानेका ढुन सवार हुआ था । गाडीमें इस औरटको डेखकर हमने अपनी प्यारी समझ लिया । बस इसी वास्टे हमने इससे जबर्डस्टी किया लेकिन सरकार हम उसबक्ट नशेमें ठा । हम बेकुसूर है।"

मुद्दईके गवाह बिलकुल नहीं बिगडेथे । उन्होंने अदालतमें वही बातें लिखवाईथीं जिन्हें पाठक पहले प्रकरणमें बुढियाके मुखसे पुलिसके सामने सुन आयेहैं । प्रतिवादीके वकीलकी जिरहसेभी मुद्दईके गवाह न बिगडने पाये । मुकद्दमेंकी सब कार्यवाही होचुकनेपर मैजिस्ट्रेटने ज्यूरी की संमति मांगी । ज्यूरीमें तीन यूरोपियन और एक देशी था । तीन यूरोपियनोंमेंभी एक महाशय वहथे जो कई वर्षोंतक रेलकी नौकरी करचुके थे । तीनोंने बलात्कारके दोषसे बचाकर मि० उडकटरको शराबके नशेमें धांधल करनेका दोषी ठहराया । देशी ज्यूरर इन तीनोंकी रायके विरुद्ध हुआ । दश मिनटमें दोनों पार्टीने अपनी २ अलग अलग सम्मति न्यायाधीशको सुनाई । राय न मिलनेपर अदालतने फिर सोचनेके लिये पांच मिनटकी अवधि दी । इस अवधिमेंभी जब वही राय हुई तब मैजिस्ट्रेट साहबने यह फैसला किया:—

"मुलजिम मि० उडकटर एक मुअज्जित यूरोपियनहै । रेलवे अफसरकी चिट्टीसे मालूम होटाहै कि उसका चालचलन अच्छाहै । शराब पीकर मस्टी करनेकाभी उसके वास्टे यह पहला मौकाहै । वह मुद्दईके वकीलकी जिरहमें सुशीलापर जबरडस्टी करना खुड मंजूर करचुकाहै लेकिन मुद्दईके गवाहोंमेंसे किसीकेभी इजहारसे-खुड सुशीलाके इजहारसे यह साफ

जाहिर होटाहै कि मुलजिमकी जबर्डस्टी उसडर्जेटक नहीं पहुंची जिससे सुशीलाकी इज्जटको नुकसान पहुँचा हो।यह जबर्डस्टी सिर्फ शराबके नशेमें हुई नशेमें जरू हुई लेकिन मुलजिमको उस बक्ट इटना होश जरूर ठा जिससे उसने मुहव्बट करना चाहा और वे बाटें अबटक उसे याड हैं इस वास्टे हम उसे बिलकुल बेकुसूर नहीं समझसकटा है। उसे एक इस वजहसेभी सजाडेना जरूरी है कि उसने जनानी गाडीमें घुसकर डिपुटी कलेक्टरकी औरटकी बेइज्जटी करना चाहा ठा। मगर इन सब बाटोंके साठ हम रेल्वे अफसरकी चिट्ठीपर उसकी नेकचलनीका भरोसाकर मुलजिमपर ५०) जुर्माना करटाहै। अगर मुलजिम जुर्माना डाखिल न कर सके टो हम उसे एक हफ्टेकी कैद महजकी सजा डेटाहै।"

मि. उडकटर उसीसमय दंडके ५०) दाखिल करक अपने जामिनके साथ हँसते खेलते घरगये। उनके जुर्मानेमें, उनके मुकद्दमेकी पैरवीमें जोकुछ खर्च हुआ था वह यूरेशियन समाजने देदिया। मुकद्दमेकी पैरवीके दिनों रेल्वे कंपनीने उन्हें रिआयती छुट्टी ददी थी इसलिये मि. उडकटरको एक पाईकाभी टोटा न रहा। इस तरहका फैसला सुनकर पंडितजीको विशेष खेद हुआ क्योंकि वह ऐसी २ कईएक घटना सुनचुकेथे और अपीलमें अपराधीको अधिक सजा मिलनेकी उन्हें आशाभी थी। अपीलसे सजा कुछ बढभी गई परंतु सुशीलाके लिये यह एक नई बातथी। वह फैसला सुनकर सुशीला हक्कीबक्की रहगई। उसकी गाडीमें पतिसे जो २ बातें हुई उन्हें लिखने पूर्व मुझे उर्दूसम्मनके विषयमें कुछ लिखनाहै। फैसला सुनादेनेबाद पंडितजीने मैजिस्ट्रेटको वे सम्मन दिखलाये तिनमें पंडितजीके नामकी उर्दूमें बडी खराबी हुई थी, जिनमें 'तीन' का 'नहीं' पढा जाताथा। मैजिस्ट्रेट सम्मन देखकर बहुत हँसे और उन्होंने आगेसे अच्छे अक्षरोंमें लिखनेकी अपने कर्मचारियोंसे खूब ताकीदभी की।

जब गाडीमें सवार होकर पंडितजी अपनी प्रियपत्नीके साथ अदालतसे चले सुशीलाने पतिको ताना देकर कहाः—

" वाहजी आपकी डिपुटीकलक्टरी ? क्या उस किरंटेको इतनेभारी अत्याचार करनेपर इतनीसी सजा दिलानेके लिये मुझे अदालतमें घसीट लायेथे । मुझे यदि यह मालूम होता कि उसे इतनीसी सजा मिलैगी तो मैं स्वयं उसे गाडीहीमें सजा देलेती । आप जानते नहीं है ? मैं किसकी लडकीहूं ? "

" मैं जानताहूं परंतु अब वैसा जमाना नहीं है । वैसा करनेमें लेनेके देने पडजाते ।"

" क्या इससेभी बढकर लेनेकेदेने पडते ? अब कसरही कौनसी रहगई ? जिन भलेघरकी नारियोंको पराये आदमीसे बात करनेमें लज्जाहै उन्हें अदालतमें आना पडै–यह क्या कुछ कमहै ? जिन भारतवासी रमणियोंके परपुरुषकी अंगुली लगनेपरभी वह मरनेसे बढकर मानभंग समझतीहैं मरीजातीहैं और अंगुली लगानेवाले मारे जातेहैं उनके साथ इसतरहका बलात्कार करके बचगया यही आपका बडाभारी न्यायहै ।"

"प्यारी तू जो कुछ कहतीहै सो सब सत्यहै परंतु क्या कियाजाय । जमाना ऐसाहीहै ।"

"हां ! मैंभी जानतीहूं कि जमाना ऐसाहीहै तबही तो मुझे संतोषहै।मुझे आप जैसे स्वामी पाकर संतोषहै । आपके पुण्यनेही उसदिन मेरी रक्षा की नहीं तो मैं संसारमें मुँह दिखानेयोग्य न रहती । यदि वह उससमय गाडीमें मेरी लाज लूटपाता तो आप मुझे वहीं मरीहुई पाते। "

" सो क्योंकर होता ! मैं जानताहूं कि तू किसकी बेटीहै । तबही तो मैंने तुझे व्याहाहै । "

"भला यह तो जोकुछ होना था सो होगया परंतु मेरी एक (हाथजोडकर) प्रार्थनाहै । प्रार्थना यहीहै कि अब कभी मुझे जनानी गाडीमें अकेली न बिठलाइये । ऐसी जनानीगाडीसे मैं आपकेपास पुरुषोंमें बैठनाही अच्छा समझतीहूँ वहां आपके होतेहुए कोई मेरी ओर देख तो न सकैगा । "

" ठीकहै परंतु इससे तुझे कष्ट होगा। दशबीस आदमियोंके बीचमें दिनभर घूँघट मारे बैठा रहना पडेगा। न उठसकैगी, न सोसकैगी और न शरीरका कोई आवश्यक काम करसकैगी।"

" उस कष्टसे यह कष्ट अच्छाहै। आप दिनभरके लिये कहतेहैं परन्तु मैं चौवीसकी जगह अडतालीस घंटे सहलूंगी। ऐसे २ कष्ट सहलेनेकी हमलोगोंकी जन्मसेही टेव डाली जातीहै। सच पूंछो तो स्त्रियां जितनी जितेन्द्रिय होती वा होसकतीं हैं उतने पुरुष नहीं। पुरुष चाहे जितने बलवान्‌ हो परंतु इन बातोंमें बांदे होतेहैं।"

" यह कैसे ?"

" यह इसतरह कि स्त्रियां अपने मनको अधिक रोक सकतीहैं। उनकी हजार इच्छा होनेपरभी कभी पुरुषसे ऐसीवैसी बात कहते हुए लजातीहैं, जहां कहीं रमणियां बिगडतीहैं वहां बिगाडनेमें अगुआ पुरुषही होतेहैं। इसका उदाहरण वसंतपुरमें देखियो।"

" हां ! मैंभी इस बातको मानताहूं परंतु स्त्रियोंके पास सामग्री ही ऐसी है जिसे देखकर आदमी ललचा जाताहै।"

" यह तो वैसी बात हुई जैसे कोई हलवाईकी दूकानपर नानाप्रकारकी मिठाई देखकर खानेके लिये जीभ लपलपाने लगै।"

" हां यही बात तो है।"

" परंतु बिना पैसे उठालेनेमें वह जूतेभी तो खाताहै।"

"और पैसेसे ले तब ?"

"पैसेसे हलवाईकी मिठाई मिल सकतीहै। रंडी मिल सकतीहै परंतु जो बात घरकी सूकी रोटीमेंहै वह पराये मोहनभोगमें—पराई जूंठन चाटनेमें थोडीहीहै।"

"उसमें नित्य नयामाल मिलताहै।"

"उसमें नयापन हैही क्या ? जो एकमेंहै वही सबमेंहै। इसपर तुर्रा यह कि घरका माल हरदम तैयारहै। बाहर जाकर शिरमारनेमें कभी जूतियां खानी पडतीहैं, इज्जत गमानी पडतीहै और जो बाजार विकता माल

खरीदा जाय तो साथही बीमारीभी मिलजाती है । दोनोंमें मानका सत्या-नाश, कुलका सत्यानाश, धर्मका सत्यानाश, शरीरका सत्यानाश और सुखका सत्यानाश है । "

"तेरा कहना सत्यहै परंतु इसका दोष अकेले पुरुषोंपरही मंढना अच्छा नहीं है । "

"मैं कब कहती हूं कि नारियां दोषी नहीं हैं । वे चाहें तो पुरुषोंके हजार शिरमारनेपरभी अपनी लाज रखसकती हैं । तलवारोंकी खचाखचमें रख सकतीहैं । जबतक स्त्रीका मन न बिगडे पुरुष उसका कुछ नहीं करसकता ।परंतु पुरुष स्त्रीजातिके रक्षक होकरभी भक्षक बनजाते हैं ।"

"हां ! तबहीतो शास्त्रमें भाई,बाप,चचा,ताऊतकके पास अकेली स्त्रीका रहना निषेध कियाहै । "

" बस यही बात मेरे और उस गोरेके मामलेमें समझ लीजिये । "

"समझली परंतु तेरी जगह कोई और स्त्री होती तो ।"

" और होती तो क्या वह उसपर बलात्कार कर सकता जबतक स्त्रीकी इच्छा न हो संसारमें कोईभी ऐसा नहींहै जो उसका कुछ बिगाड कर सके यहांतक कि पतिभी पत्नीकी इच्छा बिना कुछ नहीं करसकता । मात्र स्त्री कडे हियेकी चाहिये ।"

" यह बात सत्यहै परंतु स्त्रियांभी तो आजकलके छैल छबीलोंको देखकर फिसल जातीहैं ।"

" सत्यहै परंतु वेही फिसलतीहैं जिन्हें अच्छी शिक्षा नहीं मिलती हैं अथवा जो अच्छे मातापिताकी संतान नहीं होती हैं अथवा उन्हें फिसलनेका अवसर मिलताहै । स्त्रीको फिसलनेसे बचानेके लियेही पर्दाप्रणाली हैं क्योंकि पर्देमें उन्हें फिसलनेका अवसर नहीं मिलसकता है । "

"ठीकहै परंतु पर्देमें रहकर बाहरी आदमियोंसे बचनेपरभी बुरी स्त्रियां कहारोंसे घरके नौकरोंसे बिगडजाती हैं ।"

"यह सत्यहै परंतु इसमें प्रबंधका दोषहै पर्देका नहीं । पर्देमेंसे आदमियोंके साथ अकेली रहनेका स्त्रियोंको अवसर क्यों दिया जाताहै ?"

"यथार्थहै परंतु पर्देसे स्त्रियां बीमार रहतींहैं उन्हें ताजा हवा न मिलनेसे उनका शरीर ठीक बढने नहीं पाता और इस लिये संतानभी निर्बल होतीहै ।"

"यह बात कभी २ ठीक होसकतीहै परंतु पुरुष चाहें तो पर्देमें रखकर भी स्त्रियोंको ताजा हवा खिला सकतेहैं । क्या पुरुषसमाजमें जाकर व्याख्यान देतेसमय हाव भाव दिखलानेहीमें ताजा हवाहै ? ताजा हवाके लिये मकान अच्छा होना चाहिये, जहां पुरुषोंका आवागमन न हो वहां बागबगीचोंमें जाना चाहिये परंतु स्त्रियोंके शरीरकी रक्षासेभी उनके पतिव्रतकी रक्षा मुख्यहै ।"

"प्यारी मैं नहीं जानता था कि तू इतनी समझदार है । मैंने जान बूझकर तेरी जांच करनेके लिये इतना छेडा था । जो बातें तैंने कहीं वे सबही मुझे मान्यहैं मैं उन्हींके अनुसार उपदेशभी देताहूं और चलताभी हूं । आजसे मेरा तुझपर दूना--नहीं २ दूनेकी तो सीमा होतीहै--असीम प्यारहै ।"

बस इसतरहकी बातचीत करते दम्पती अपने घरजा पहुँचे ।

प्रकरण ६.

सुशीलाकी ससुराल ।

सुशीलाको मैकेमें और ससुरालमें पूरा सुख था । वह मैकेमें जैसे सुखपूर्वक सदाचारसे तेरहवर्षतक रहनेमें पढी, लिखी, कामकाज सीखी थी उसीतरह उसे ससुरालमें सबसुख था । उसे पतिका सुख कितना था सो तो पाठक गत पांच प्रकरणोंसे जानही चुकेहैं जितना जानना शेषहै उसे अब जान लेंगे । किन्तु उसे सासकी, ननदकी, जेठानीकी, जेठके लडकों बालोंकी ओरसेभी किसीतरहका दुःख नहीं था । सास उसे कमाऊ लडकेकी जोरू समझकर सदा आंखोपर बिठलाये रखती । ननद उसको कमाऊ भाईसे बहुत कुछ पानेके लालचसे खूब खुशामद करती । जेठानी उसकी उसके हाथसे अपने लडकेबालोंका लाड चाव देखकर चेरी बनी

रहती घरकी सब नौकरनियां इनाम इकराम पानेके लालचसे छोटी मालकिनको सबसे बडी मालकिन समझकर उसके लिये सदा हाजरबंदी बनी रहती, सुशीलाकी सखियां तो उसकी थींहीं परन्तु अडोस पडोसकी स्त्रियांभी सुशीलाका आदर करतीं थीं। इस प्रकारका आदर इसतरहकी खुशामद, इस इसतरहका लाडप्यार केवल कमाऊकी जोरू समझकरही नहीं था, क्योंकि सुशीला अपने वर्तावमें किसीको भी भूल करभी अपने पतिका कमाऊपन नहीं जतलाती थी। उसे पतिकी यही आज्ञा थी और वह इसका शिर आखोंसे पालन करती थी। उसका नाम सुशीला था और ऐसेही उसके गुण थे। वह अपने शील स्वभावसे सबको सदा अपनी मुट्ठीमें रखती थी। घरमें नौकरनियां होतेहुएभी वह सासके काममें, घरकी देखभालमें कभी नाक भों न सिकोडती। घरमें रसोईके लिये एक मिश्रानी नौकर थी परंतु वह पतिके लिये सदा अपनेही हाथसे भोजन तैयार करती। दाल तरकारीमें मिरच मसाला आप अपने सामने डलवाती, मिश्रानीकी सहायता देकर उसे सिखा२ कर नित्य नया खाना तैयार करवाती। जेठानी, ननद और सास जबकभी घरका काम काज करने लगती तो उनकी चिरोरी कर २ के उन्हें रोकती, उन्हें काम न करने देती। जेठके बालकोंको अपने पेटके बालकोंसेभी बढकर समझकर खिलाती, पिलाती, हिलाती, कपडे और जेवर पहनाती और समय २ पर उन्हें पोथी, खिलौने, मिठाई और कपडे देती थी। सब लोगोंसे सदा "जी" कहकर बोलती और उनका काम करनेके लिये आधे बोलपर खडी होजाती थी। उसके आनेसे पहले पंडितजीके घरमें नौकर नौकरनियां खूब लूटपाट करती थीं। सास और जेटानीके फूहडपनसे और ननदकी बेपर्वाहीसे घरका सामान योंही पडा २ सडा करता था कहीं चूहे आटा खाजाते कहीं बिल्ली दूध पीजाती और कहीं मैलेके ढेर लगे रहते। सुशीलाने कठिन परिश्रमसे इन सब बातोंका सुधारकर घरकी अच्छी व्यवस्था की। इस व्यवस्थाके लिये उसे दोमासतक इतना परिश्रम करना पडता था कि दिन निकलेसे रातके दशबजेतक दम लेनेकीभी फुर-

सत न मिलती। उसके प्रबंधसे नौकर नौकरनियोंकी जब लूटपाट बंद हुई तब वे कुछ कालके लिये उससे नाराज होकर उसपर भांति २ के कलंक लगाने लगी थीं। उसकी साससे, उसकी जेठानीसे, उसकी नंदसे कहते कि "इसने तुम्हारा अधिकार छीन लिया। अभी तुम्हारी इतनी खातिर करती है परंतु जब सब काम अपने हाथमें आजायगा तब तुम्हें गिन-गिनकर रोटियां देगी।यह कमाऊकी जोरूहै इस लिये तुम्हें गिन२कर जूतियां मारेगी।"--इस बातसे वे भडककर सुशीलाको बुराभलाभी कहती परंतु चोरोंकी चोरी बंद करके घरका प्रबंध सुधारने और पतिकी कमाईका पैसा नष्ट होताहुआ बचानेके लिये वह सबकी झिडकियां, सबके ताने सहती। नौकर नौकरनियां केवल इन्हींको बहकाकर चुप नहीं रहतीं थीं। वे पंडितजीसे कहतीं कि-"छोटी बहू पडौसवालोंकी ओर ताक झांक लगाया करतींहैं। जानकीके आदमीसे आंख लडाती हैं और अपनी सखीसहेलियोंको घरका माल निकाल २ कर देदिया करतीहैं"पलही बातका पंडितजीपरभी एकबार ऐसा असर पडगया कि वह छिपकर इसका अनुसंधान करने लगे। उन्हींमेंसे सिद्ध साधक बनकर नौकर नौकर-नियोंने गवाहियां दीं और मामला इतना रंगदिया कि पंडितजी बहक गये। बहक तो गये परंतु वह थे विद्वान् उन्होंने इनके स्वार्थका विचार किया स्त्रीके ढंगको बारीकीसे देखा और अंतमें इस बातको झूंठी समझ-कर उन्हें खूब डाट डपट बतलानेके बाद एकदिन स्त्रीसेभी अपने हृदयकी बात खोलदी और उसे सलाह दी कि " इन सब नौकर नौकर-नियोंको घरसे निकाल दे" परंतु स्त्रीने इस बातको अच्छा न समझा उसने कहा किः-

"निकालदेनेसे येलोग निर्मूल बातका बतंगड बना डालेंगे। इन गरीबोंको ऐसा दंड देकर इनके चूल्हेमें पानी डालनेसे इन्हें कृपाकी छुरी मारना अच्छाहै। इन विचारोंकाभी कुछ दोष नहींहै। मेरे प्रबंधसे इनकी चोरी चकारी बंद होकर इनका पेट फूट गयाहै इसलिये ये झूंठे २ इलजाम लगातेहैं। जब आपको मेरेलिये संदेह नहीं रहाहै जब आपने

मेरे विषयमें निश्चय करलिया है तब मुझे अधिक कहनेकी आवश्यकता नहींहैं परंतु मेरी-प्रार्थना यहीहै कि इन्हें निकालिये नहीं । ये आपके पुराने नौकर हैं । ”

“अच्छा न निकालें तो इनका क्या किया जाय । ”

“इनका वेतन इतना करदीजिये जितना इन्हें कहीं न मिलै।इनकी चोरी चकारी मैंने बंद करही दीहै । इन्हें अच्छाकाम करनेपर शावाशी देना चाहिये, इनाम देना चाहिये और बुरे कामपर फटकार और कभी २ दंड । नौकरोंको प्रसन्न रखकर अच्छा काम करानेका यही सबसे बढकर उपायहै।”

पंडितजीने इस बातको पसंद किया । समझाने बुझानेसे सास जेठानी और ननदभी इस बातसे राजी हुई और इसतरह सुशीलताके बोझेसे दबाकर सुशीलाने सबको अपने वशमें करलिया । सुशीलाका काबू केवल घरवालों-परही न था बरन उसने पतिसेवासे–उत्कृष्ट पतिसेवासे पतिकोभी अपनी मुट्ठीमें करलिया था । वह प्रातःकाल पतिसे पहले जागकर शौच स्नानसे निवृत्त होती जब पति जागते तब उनके लिये शौच स्नानका अपने हाथसे प्रबंध करती। उनके हाथधुलाती, उनकी धोती धोती और उनके पढने लिखनेके लिये सब सामग्री तैयार करती उनके कपडोंको व्यवस्थासे रखती । उनके भोजन किये बाद उन्हींकी थालीमें आप खाती और उन्हें परमेश्वर समझकर नित्य घंटाभर उनके पैर चांपने बाद उनके सोनेके पीछे सोती थी । कभी उनकी इच्छाके विरुद्ध कोई काम न करती और अवकाश पाकर प्रेम संभाषणके साथ ही उनसे लोक व्यवहारकी शास्त्र संबन्धी बातें करके अपना संदेह निवृत्त करती । यदि वादानुवादमें कभी पतिका पक्ष निर्बल होतो यह न जतलाती कि आप हारगये हैं पतिकी भूलोंको समय पाकर मीठी बातोंसे सुधारनेके लिये प्रार्थना करती, अपनी भूल, अपना दोष स्वयं पतिको सुनाकर उनसे क्षमा मांगती, पतिके दुःखसे दुःखित सुखसे सुखी रहती और जब कभी पति दुःखित हों अथवा चिन्तामें हों तब उनकी विशेष सेवा, शुश्रूषाकर उनकी चिन्तामें संयुक्त होकर उनका दुःख दूर करती, और कभी उनसे जेवरका, कपडेका तकाजा न करती और इस

प्रकारसे अपना अच्छा बर्ताव कर पतिको प्रसन्न रखती थी। सुशीलाके आचरणके विषयमें भी अब उन्हें कोई संदेह नहीं रहाथा और न वह कभी संदेहका कारण खडा होने देती थी। जो बात उसने पांचवें प्रकरणमें पतिसे कही थी वही उसके आचरणका मूल मंत्र थी। वह अवकाशके समय धर्म और नीतिवर्द्धक पुस्तकें पढती, ईश्वर स्तवन करती और समय २ पर अपने घरकी स्त्रियोंको अपनी सहेलियोंको अपनी नौकरनियोंको अच्छे उपदेश देती और इसी लिये वह "पंडितायन" कहलाने लगी थी। उसका इतना आदर देखकर उसे गर्व नहीं होता था। जब स्त्रियां उसके मुखपर उसकी प्रशंसा करतीं तब वह शिर नीचा करके लज्जाके साथ कहदिया करती थी कि—" यह प्रशंसा मेरे लिये विषका प्याला है। मेरी प्रशंसा न करो। नहीं तो मैं बिगड जाऊंगी।" पतिसे भी वह बारंबार यही प्रार्थना करती थी कि—" नाथ, मेरा संकोच कभी न करना। जब मुझसे चूक होजाय तो मुझे अवश्य दंड देना। आपका दंड मेरे लिये अमृतहै।" सुशीलाका ऐसा ढंग देखकर रोकते २ एक दिन पतिने कहाः—

"मैं अपने भाग्यको सराहता हूं। ईश्वरका लाख २ धन्यवादहै कि मुझे तेरेजैसी अर्द्धांगिनी मिली। वास्तवमें तू धन्य है! तेरे गुणोंकी प्रशंसा न करना कृतघ्नताहै तू प्रशंसाके योग्यहै।"

" नाथ मेरी प्रशंसा करके मुझे कांटोंमें न घसीटो। मैं इस योग्य नहींहूं। मेरी प्रशंसा मेरे लिये विषका प्यालाहै।"

"प्यारी, नहीं। उचित प्रशंसा गुणोंको बढानेवाली है।"

"हां! मैंभी इस बातको मानतीहूं परन्तु मुझमें गुण कहांहै जिन्हें प्रशंसा बढावैगी?"

" तुझमें गुणहै और तुझ जैसी स्त्री पानेमें मेरा सौभाग्यहै।"

"सौभाग्य तो मेराहै नाथ, आप जैसे स्वामी पानेमें मेरा सौभाग्यहै। ईश्वर का लाख२धन्यवादहै जिसने आप जैसे मालिक दियेहैं। वास्तवमें मुझे इस-समय सबसुखहै। परमेश्वर मुझजैसा सुख सबको दे।"

"हां प्यारी ! हम वास्तवमें इससमय परम सुखीहैं । ईश्वर थोडे दिनमें एक लल्ला देदे। बस और कुछ नहीं चाहिये ।"

"प्राणनाथ, (लज्जितहोकर) यह ईश्वरकी इच्छाहै। परंतु कुपूत संतान होने अथवा होकर मरजानेसे तो न होनाही अच्छाहै ।"

"हां प्यारी । "

प्रकरण ७.

बस्तीमें भागड।

नारायणगंजमें "प्लेग आया ! प्लेग आया ! ! " का हल्ला मचरहाहै । बस्तीमें दो तीन केस होतेही हुल्लड मचगया। सब लोग अपने २ प्राण लेकर भागने लगे । किसीकी कोई सुधि लेनेवाला न रहा सबको इस समय अपनी २ जानकी पडीहै । न मातायें बालकोंको संभाल सकीं न बेटे माबापोंकी सुधि लेसके,न पतियोंने स्त्रियोंकी खबरली और न कोई अपना गहना पूंजी देखभाल सका। जो काम करतेथे वे काम छोडकर, जो स्त्रियां बालकोंको दूध पिलाती थीं वे उन्हें वैसेही कंधोंपर डालकर, पैरों चलते बालकोंको योंही घसीटकर, उनके रोने धोनेकी कुछभी पर्वाह न कर और कोई घरका ताला देकर तो कोई किंवाडे खुले छोडकरही बस्तीसे भाग पडे । जिन्होंने जीजानपर खेलकर बस्तीसे न जाना चाहा था उन्हें चौकीदारोंने धमकाकर, पुलिसने डंडे मारकर निकाल दिया। नौ हजार आदमियोंकी बस्तीमें घर द्वार, मालटाल संभालनेके लिये नव्वे आदमीभी न रहने पाये । गाँवं समूचा खाली होगया । जब वहां अपना डेराडंडा लेकर प्लेग महाराजकी सवारी आपहुँची तब ऐसा कौन आदमी हो जो दोजान रखकर ठहरनेका साहस कर सके । चोरों और लुटेरोंकी खूब बनआई। चौकीदारोंकी मुट्ठियांभी खूब गर्माने लगीं । चोरों ओर लुटेरोंने जहां अवसर पाया लूटपाट की । जहां घर सूना पाया थाली लोटा निकाल लिया, जहां अकेली दुकेली स्त्री मिलगई उसका गहना कपडे छीनकर लंगोटी देदी। जो अपना २ प्राण लेकर जंगलोंमें

पेडोंकी छायाके नीचे जा बसे थे चोर उचक्के, उठाईगीर और लुटेरोंने उनको वहांभी न छोडा। प्लेगराज वहांभी जा पहुंचे। जब बस्तीमेंही इलाज करनेके लिये वैद्योंका, हकीमोंका, डाक्टरोंका दर्शन दुर्लभ होगया तब जंगलोंमें उन विचारोंकी खबर लेनेवाला कौन था। पटापट मृत्यु होनेलगी। जवान आदमी अपने बूढे माता पिताको, अपनी युवति पत्नियोंको, अपने नन्हे २बालकोंको रोता झीकता छोडकर मरने लगे। कहीं बूढोंका सहारा, कहीं रमणियोंका जीवनसर्वस्व और कहीं प्राणप्रिय पुत्र चल बसे।

आज गांवमें किसीका कोई नहीं है। न नातेदारोंमें स्नेह रहाहै, न मित्रोंमें मित्रताहै, न आंखोंमें संकोचहै और न किसीको किसीपर कुछ प्रेमहै। सबको अपने २ प्राणोंकी पडीहै कोई किसीकी नहीं सुनताहै। जो बीमारहैं उन्हें पानी देनेवाला, जो मरगयेहैं उन्हें आग देनेवाला, मुर्दे उठानेवाला नहीं मिलताहै। दुलाई देनेपरभी आदमीका मिलना कठिन होगयाहै। कहीं लाशें पडी २ सडरही हैं। चारों ओरसे "हायरे! मरारे!! हाय २ मरगया! अरे दैया मरा अरे प्यासके मारे मराजाता हूं! अरे कोई पानी तो पिलाओ रे!" की चिल्लाहट आरही है। जो जीतेहैं वेभी डरके मारे कांपते और मौतके दिन गिनते इधर उधर भागते हैं। इस भागडमें न कोई किसीसे पूंछताहै और न कोई किसीकी सुनताहै। जो एकसमय मित्र कहलाते थे, जिनका दिनरात पास उठना बैठना था, जो पास बैठकर घंटोंतक हंसी दिल्लगी कर कहकहा मचाया करते थे, गाने बजाने और नाचनेमें शामिल होते थे वेही आज एक दूसरेका दुःख देखकर जी चुरातेहैं, मित्रोंकी चिल्लाहट सुनकर सुनी अनसुनी करजातेहैं और अपनी जानके लिये औरोंकी जानको तिनका समझकर छोड भागते हैं।

जिस समय बस्तीमें ऐसा कुहराम मचगया पंडित मोहनचंद्रजीनेभी वहां रहना उचित न समझा। वह अपने कुटुम्बको कुछ दूरपर एक निरापद गांवमें रखकर छुट्टीके दिन पूरे होनेसे पहले ही अपनी नौकरीपर जानेको तैयार हुए। जाते नहीं तो करते क्या? छुट्टी पूरी होनेसे पहलेही प्लेगका

प्रकोप देखकर उनके अफसरने कामपर पहुंच जानेकी आज्ञा भेजदी थी। ऐसे भयंकर समयमें अपने कुटुम्बको छोडकर जाना उचित तो नहीं था परंतु सेवाधर्म बडा कठिनहै। चार रुपयेके चपरासीके लिये यह जितना कठिनहै उतनाही चारसौ रुपयेके हाकिमके लिये कठिनहै। पंडितजीने तार देकर घरवालोंके पास रहनेके लिये अपने बडेभाई पंडित राधामाधवजीको कलकत्तेसे बुलाया। उनके ऊपर माता आदि सब कुटुम्बकी रक्षाका भार डालकर जब पंडितजी अपनी नौकरीपर जाने लगे तब उन्होंने अपनी स्त्रीसे माताके साथ जानेका बहुत कुछ आग्रह किया, बहुत कुछ समझाया बुझाया और बहुत कुछ ऊंचनीच दिखलाई परंतु सुशीलाने इस बातको स्वीकार न किया। उसने स्पष्ट कहदिया किः—

"जो शरीर बिना छाया रहसकती हो तो मैं आपके बिना रहसकतीहूं। आप तो अपनी नौकरीपर ऐसी जगह जातेहैं जहां प्लेगकी आग बरस रहीहै और मैं जीनेके लिये इन लोगोंके साथ गाँवमें रहूं। ऐसा मुझसे कदापि न होगा। मैं अच्छे भलेहीमें जब आपके साथ चलनेकी प्रार्थना करचुकीहूं तब विपदके समय आपको कैसे छोडूंगी?"

"विपद तो अवश्य भारीहै परंतु प्यारी, तुझे साथ रखनेमें बहुत कष्ट होगा। मुझे जब गाँव २ भटकना पडेगा तो तुझे गलेके टोकरेकी तरह कहां २ लिये फिरूंगा। तू कोमलहै, तेरा स्वभाव डरपोक, है, वहांका दृश्य तेरे देखने योग्य नहीं है। दैव न करे यदि तुझे कुछ हुआ तो?"

"मेरी आप इतनी रक्षा करते हैं परंतु आपहीपर" इतना कहतेही सुशीला रोकर पतिके चरणोंपर गिरपडी। पतिनेभी उसका इससमय आग्रह अनुचित न समझा। सुशीला पतिकी आज्ञासे साथ हुई। ऐसी खडाखडीमें अच्छा मुहूर्त तो मिलही कहां सकता था। सरकारी आज्ञा पाकर मुहूर्तके लिये ठहरनाभी उनसे नहीं बनसकता था और प्लेगका प्रकोप तथा बस्तीकी भागड देखते हुए नारायणगंजमें ठहरनेकाभी अवसर न था इसलिये उन्हें लाचार होकर घातक चंद्रमाके दिन सामने दिशाशूल लेकर परम अशुभ मुहूर्तमें वहांसे चलना पडा। चलते समय पंडित

जीका बहुतही माथा ठनका था, अशकुन देख२कर उन्होंने चलनेसे बहुतही आगा पीछा किया परंतु इससमय वह कदापि रुक नहीं सकते थे। उन्होंने इसलिये आनेवाली आपदाके भयको हृदयपर झेलकर जानाही निश्चय समझा। निश्चय करके वह अपने प्रारब्धके भरोसे, ईश्वरका चिन्तन करके घरसे बिदाहुए। बिदा होतेसमय यद्यपि इन्होंने अपनी माताके चरणोंमें गिरतेसमय, भाई भौजाईसे प्रणाम और बहन भतीजोंको प्यार करते समय अपने मनका भाव प्रकाशित नहीं होने दिया, इन्होंने इसबार सदासेभी अधिक प्रसन्नता दिखलाई थी परंतु अपने मनमें समझ लिया था कि इसबार कुशल नहीं है। मैं नहीं कहसकता हूं कि पंडितजीको ऐसी समझ अशुभमुहूर्त और अशकुन देखकर पैदा हुई अथवा बुरे होनहारकी ईश्वरनेही उनसे प्रेरणाकी थी परंतु उन्होंने अपने एक मित्रसे बिछुडते समय संकेतसे कहदिया था कि "भैया यह अंतिम बिदाई है। अब मिलनेकी आशा नहीं है" मित्रने इस इशारेपर पंडितजीको बहुतकुछ ढाढस दी, उन्हें बहुतकुछ समझाया बुझाया परंतु उनके मनका संदेह दूर न हुआ। उन्होंने अपने मनके भावको सुशीलासे छिपानेमेंभी किसीतरहकी कसर न रक्खी परंतु उसजैसी चतुर स्त्रीसे ऐसी बात क्योंकर छिप सकतीथी। वह तुरंत ताडगई। उसने पतिसे इस बातको प्रकट करनेके पूर्व अपने मनमें तर्किया और तर्कसे जब निश्चय करलिया कि पतिके अंतःकरणपर किसीतरहका होनहार भय भारी असर करगया है तब उसने बहुत नम्रतासे कहाः—

"प्राणनाथ, आज आपका मुखकमल मलिन क्यों होरहाहै? आज आपकी आंखोंमें आंसूकी बूँदें क्यों दिखाई देती हैं? आज आपका उत्साह कहां गया? नाथ आज आप उदास क्यों दिखाई देतेहैं?"

"कुछ नहीं! योंही!!"

"नहीं नाथ! योंही नहीं!! इसका कोई भारी कारण है। मैं आपकी अर्द्धांगनीहूं। आपके सुखदुःखमें मेरा साझाहै। स्वामी मुझसे भी तो कहिये। कहकर हृदयका बोझा हलका कीजिये यदि इस दासीसे कुछ उपाय होसकैगा

तो मैं शिरके बल करनेको तैयारहूं। जब आपके साथमें सेवा करनेको यह दासी मौजूदहै तब नाथ चिन्ता न कीजिये ! "

" नहीं सेवाकी चिन्ता नहीं है परन्तु आज न मालूम मेरा हृदय क्यों भरा आताहै ? मैं कईबार घर छोडकर विदेश गयाहूं, कई वर्षतक अकेला विदेशमें रहाहूं परन्तु मेरा दिल ऐसा कच्चा कभी नहीं हुआथा जैसा आज होरहाहै। मैं अपने मनको बहुतेरा रोकताहूं परन्तु दौड २ कर उधर ही जाताहै। मेरी आंखोंके सामने कालके भयंकर काले बादल दिखाई देतेहैं आंखोंमें अन्धकार छाकर चक्कर आतेहैं और इच्छा होतीहै कि मैं गिरपडूं मेरा मन संभालसे नहीं सभलताहै। भगवान् तेरी रक्षाकरे। मुझे होनहार बुरा दिखाई देताहै।"

" प्राणनाथ, घबडाइये नहीं। ईश्वर सर्वत्र रक्षा करने वाला है। जब हम जानबूझकर भयके सामने जा रहेहैं तब भय काहेकाहै। आपही तो मुझसे-

" अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति ॥
जीवत्यनाथोपि वने विसर्जितः कृतप्रयत्नोपि गृहे न जीवति ॥"

कहा करते हैं। विपत्तिके समय-घोर संकटके समय आप हजारोंको धैर्य बंधाया करतेहैं और आज विना संकटके केवल आशंकासेही आप इतने घबडातेहैं। आप अपने आपेको संभालिये आप एक विद्वान विचारशील पुरुषहैं। मुझ अबलाकी तरह घबडाइये नहीं घबडानेका काम स्त्रियोंका है। "

"मैं इन बातोंको जानताहूं। मैंने सैंकडोंबार उपदेशभी दियाहै परन्तु आज मुझे होनहार प्रेरणा कररहाहै, मानो भविष्य मेरी आंखोंके सामने आकर कह रहाहै कि कालके गालमें पडनेको क्यों जातेहो ? "

पतिके अंतिम वाक्य सुनकर सुशीला घबडाई। उसकी आंखोंमेंसे आंसू बहकर चोली भिगोने लगे उसने रोते २ कहाः-

"नाथ आपको यदि ऐसाही भय है तो जानबूझकर आगमें कूदना अच्छा नहींहै। नौकरीका इस्तीफा देदीजिये और मौतके सामनेसे चलनेसे मुख मोडिये। "

प्राणप्यारी हां इस्तीफा देदेना अच्छातो है परंतु (कुछ संभलकर) नहीं इस्तीफा देना नही बनसकैगा। इस समय इस्तीफा देना केवल अपने पेटमेंही लात मारना नहींहै बरन् अपने कर्त्तव्यको अपने धर्मको पैरोंसे कुचलना है। जब सरकारने हजारों प्रजाकी प्राणरक्षाका भार हमपर डालाहै तब ऐसे समयमें मुहमोडना अवश्यही ईश्वरके कोपका कारण होगा। अपने प्राणोंकी रक्षाके लिये हजारोंके प्राणोंको जलती आगमें झोंकदेना धर्मपर-हिन्दूधर्म पर लात मारना है क्योंकि हिन्दूधर्म हमें यही शिक्षा देताहै कि जो कुछ तुम भला वा बुरा काम करते हो उसका फल तुम्हें अगले जन्ममें मिलैगा। जो इस जन्मका कर्महै वही अगले जन्मका प्रारब्ध होगा। जब हमारे कर्मोंका हिसाब एकजन्मका एकजन्ममें पूरा नहीं होताहै जब हमारे अनेक जन्मोंका भगवान् यमराजके दफ्तरमें एकही खाताहै और उसमें भले काम जमा होते बुरे काम नाम लिखे जाते और इसतरह बाकी निकालकर बुरा वा भला फल मिलताहै तब इससमय डरना अच्छा नहीं है। यह मेरी केवल कायरता थी। नहींतो मुझे पढलिखकर इतना मोह क्यों हुआ। "

"नहीं नाथ! आपको कभी कायरता नहीं होसकती। आप जैसे संस्कृतके विद्वान् और अंगरेजीके पंडितको कायरतासे क्या वास्ता? आपने केवल मेरी परीक्षा लेनेके लिये यह प्रपंच (रामराम! स्वामीके लिये ऐसा कटुबचन कहतीहूं) रचा था। परंतु सदिच्छासे अपनी अर्द्धांगिनीकी परीक्षाके लिये रचाहुआ प्रपंच बुराईमें दाखिल नहीं है। भगवान्भी तो अपने भक्तोंकी परीक्षाके लिये प्रपंच रचतेहैं। "

"हां यही बातथी परंतु प्रिये तुझे इस कडी आंचमें ऊज्ज्वल सोना पाया। भगवान् इससे कडा–सच्चाकडा अवसर न दिखलावै नहीं तो वहांभी तू सौ नंबरका सोना निकलैगी क्योंकि तू बेटी किसकी है?"

"प्राणनाथ! आप मेरी प्रशंसाकर मुझे व्यर्थ बडाई न दीजिये। मैं अभी इतनी प्रशंसाकी अधिकारिणी नहींहूं। ईश्वर करै मैं सौनंबरका सोना निकलूं परंतु यह सब केवल आपके प्रतापसे होगा! आपका प्रताप

मेरी रक्षा करै। मुझे अपना अहिवात चाहिये । यही मेरेलिये सर्वस्वहै। हे मेरे जीवनसर्वस्व। ईश्वरसे यह दासी केवल यही मांगतीहै कि आप आनंदसे रहैं और आपको जो भय हुआहै वह मिथ्या निकलै।"

"हैं! अब क्या मोहने मुझपरसे हटकर तुझपर सवारी करडाली? प्यारी, मोह न कर।"

प्रकरण ८.

प्लेगकी धरपकड।

पंडित मोहनचंद्र थे तो चद्रपुरके डिपुटीकलक्टर परंतु प्लेगप्रबंधके लिये उनकी बदली कमलापुरकी होगईथी। पंडितजी सुशीला और एक नौकरको लियेहुए मुकुंदपुर स्टेशनसे कमलापुरके लिये बिदाहुए। यद्यपि मार्गमें किसीतरहकी विशेष घटना नहीं हुई परंतु प्लेगी भागडके कारण गाडियोमें बेठिकाने भीड थी। तीसरे दर्जेकी गाडियोंमें दर्जेपीछे आठ दश सवारीकी जगह पंदरह पंदरह आदमी भरेहुए थे, मालकी गाडियांभी सवारियोंसे कशामश भरीहुई थीं। भीडके मारे लोगोंका दम घुटता था। भेड बकरीकी तरह गाडियोंमें आदमियोंका ठुंसना और वहभी कुँवारकी दुपहरीमें। ताजा हवा लेनेके लिये लोग और मुसाफिरोंसे धक्कामुक्की करके गाडीकी खिडकियोंके पास आतेथे परंतु खिडकीके पासवाले उन्हें पीछेही धकेल देतेथे। मार्गके स्टेशनोंपर न तो नलोंमेंही पानीका पूरा ठिकाना था न कुओंका कहीं नाम निशान था और न पानीपांडेकेही दर्शन होतेथे। प्यासके मारे यात्री मरेजाते थे। जहां आचमनके लिये चुल्लूभर जलका ठिकाना नहीं वहां खानेपीनेका तो पूंछनाही क्या? जिस समय यात्री इसतरहकी घोर विपत्ति सहते, जगहके लिये आपसमें लडते झगडते रोते पीटते, रेलवालोंको गालियां देते जारहेथे आनंदपुरस्टेशन आया। आनन्दपुरका नाम सुनतेही जानकार यात्रियोंके होश उडगये। जो अनजान थे वेभी जानकारोंसे सुनरकर घबडाने लगे। किसीने अपनी रानें और बगलें टटोलीं, किसीने अपने पेटपर हाथ रक्खा और कोई अपने हाथसे अपनीही नाडी देखने लगा। "हाय ज्वरहै! लडकेको ज्वरहै! अब क्या करूंगी?

लडका पकडा जायगा तो क्या करूंगी ? '' जब एक स्त्रीने इसतरह अपने साथीसे कहा तो दूसरी बोली– "मुझे ज्वरतो नहींहै परंतु ये निपूते डाक्टर रूप देखकरभी पकड लेतेहैं। ''तीसरीने कहा''अरी रूप क्या पैसा बडी चीजहै। घबडाती क्योंहै। कुछ देने दिलानेसे छुटकारा होजायगा'' जब एकओर इस प्रकारकी बातें होरहीथीं तब दूसरी ओरसे एकने कहा–

" ये पकड २ कर कालीमाईके बलिदान देतेहैं । न कोई बीमारीहै और न कोई रोगहै। सरकारने रूससे जीतनेके लिये कालीमाईके यहां एक करोड आदमियोंके बलिदानकी मिन्नत मानीहै।''

" नहीं जी, मिन्नत क्या मानीहै ? अंगरेज लोग मिन्नत विन्नतको नहीं मानते। इनकी तो प्रजासे शत्रुता होगई है। बस इसीलिये पकड २ कर अस्पतालों और किरंटियोंमें ठूंसतेहैं। बस वहां पहुंचा और मरा। वहां जाना मानो यमराजके यहां जानाहै।''

"भला, मिन्नत नहीं मानीहै तो इनको रिआयासे दुश्मनी क्यों है ? हिन्दुस्थानकी रिआया तो विचारी भेडकी तरहहै। क्या कभी वह सरकारका मुकाबिला करतीहै जो उससे दुश्मनी होजाती। ये सब झूंठी बातेंहैं उसदिन मैंनेभी ऐसाही सुनाथा कि सरकारने मिन्नत मानीहै।''

"भाई, मिन्नत हो चाहे दुश्मनीहो लेकिन इसमें शक नहीं है कि जो पकडा वह दुनियांसे गया।''

"नहीं २ झूंठ बातहै। सरकारकी नियत कभी बुरी नहीं है। वह जो कुछ करतीहै हमारे भलेके लिये करतीहै।''

"अगर भलेके लिये करतीहै तो कुओं और तालाबोंमें दवा डालकर बीमारी क्यों फैलातीहै ?''

"नहीं! कभी नहीं! हरगिज नहीं! ऐसा कभी मुमकिन नहीं! वह जो कुछ करतीहै बीमारी रोकनेके वास्ते। इसीवास्ते तो बीमारको अच्छे भलोंसे अलग करतीहै। अलग करनेका मतलब यही है कि इस बीमारीकी छूत औरोंके न लगने पावे।''

"वाह ! छूत लगजानेमें सरकारका नुकसान क्याहै ? अगर छूतके वास्तेहीहै तो क्या जोरू मा बाप और भाई बहनसे मरीजको अलग करना मुनासिब है ?"

"बेशक ! हिन्दुस्थानियोंको मुनासिब नहीं मालूम होता क्योंकि हमारे यहां खानदानी मुहब्बत ज्यादह है लेकिन जैसी छूत रिश्तेदारोंके लियेहै वैसीही औरोंके।"

"छूतही सही, लेकिन क्या कोई हिन्दुस्थानी अपने नातेदारोंको मरनेके खौफसे छोड सकताहै ?"

"हां ! नहीं छोडसकता, तबही तो सरकारने अपनी भूल समझकर कायदा नर्म करदिया।"

"खैर ! जानेदो इन बातोंको ! स्टेशन आ पहुंचाहै। अगर पुलिस सुनलेगी तो अभी एक नई आफत आजायगी।"

जिस समय गाडीमें बैठे २ यात्री इसतरहकी बातें कररहे थे गाडी स्टेशनपर पहुंची। पहुंचतेही "आनंदपुर ! आनंदपुर ! गाडी एक घंटे ठहरैगा।" की पुकार मची। लोग किंवाडोंके दस्ताने घुमाघुमाकर दर्वाजे खोलनेका प्रयत्न करते "बाबूजी चाबी खोलो ! बाबूजी चाबी खोलो ! हमें पानीपीना है। पेशावके मारे मेरजातेहैं।" की चिल्लाहट मचानेलगे परन्तु किसीने इस चिल्लाहटपर ध्यान न दिया नाडी देखनेकी बात याद आतेही लोगोंका जी धडकने लगा। एकदम सन्नाटा छागया। लोगोंका शरीर सनसनाने लगा हाथ पैर कांपने लगे और अपने २ पकडेजानेके भयको छिपानेके लिये सबही अपना जी कडा करने लगे।

जब एकओरसे गाडीवाले यात्री इसतरहकी दुविधामें, इसतरहके भयमें इस तरहकी चिंतामें पडेहुए एक २ मिनटको एक २ दिनकी बराबर निकाल रहेथे गाडियोंके पास एक डाक्टर, एक डाक्टरिन और आठ दश कान्स्टेब्ल आ पहुंचे। "असबाब गाडीमें छोडकर सब नीचे उतर आओ।

सब अपने २ टिकिट निकाल लो । औरतोंको गाडीहीमें रहने दो ।" कहते २ टिकिटबाबूने गाडीकी चाबी खोली । यात्री चुपचाप अपने २ दर्जों-से निकलकर कान्स्टेब्लोंके डंडे खाते उनकी आज्ञाके अनुसार अपने२दर्जों-के सामने कतार बांधे खडेहुए । डाक्टरिनने गाडीके फाटकके पास जाकर भीतरही स्त्रियोंकी और डाक्टरने कतारबांधे खडेहुए पुरुषोंकी नाडियां देखीं, और टिकिट देखे । नाडियां क्या खाक देखीं । नाडी देखना तो एक ओर रहा किन्तु किसीके उनका हाथ छुआ और किसीके छुआतक नहीं।बस इसतरहका टोटका करते डाक्टर साहब ज्यों २ आगे बढने लगे त्योंहीं त्यों यात्रियोंके जी ठिकाने आने लगे । डाक्टर, डाक्टरिनने यात्रियोंकी केवल नाडियांही न देखीं बरन जिनके मुखको अधिक मलिन देखा,जिनका हाथ अधिक गर्म पाया, जिनके पास प्लेगी जिलोंका टिकिट देखा, उनकी बगलें, उनकी रानें और उनके गले टटोले । उनके पेटपर हाथ रखकर ज्वरका अनुमान किया और जिन्हें रोकनेकी उनकी इच्छाहुई उनके लिये पुलिस से संकेत करके आगे बढे । इसतरह सारी गाडीमेंसे दश बीस पचासको पुलिसके हवाले करनेमें उन्होंने समझलिया कि हमने अपना कर्तव्य पालन करलिया । जो लोग पकडेगये थे उनमेंसे कुछ देदिलाकर कुछ सहीशिफारिशसे और कुछ खुशामद मिन्नतसे छूट गये और जो रहेथे उनमेंसे प्लेगी जिलोंके यात्रियोंको क्वारंटाइनमें और बीमारोंको अस्पता-लमें पहुंचानेकी पुलिसको आज्ञा देकर डक्टर, डाक्टरिन अपने २ घर चलीगईं ।

इन पकडे जानेवालोंमें हमारे पंडित मोहनचंद्रभी थे । मार्गकी थकाव टसे रास्तेमें पानी न मिलनेसे कुंवारकी गर्मीसे, फसलके विकारसे और भीड-की कशामशीसे इनका शरीर गर्मा गयाथा । जिस समय डाक्टरने इनकी बगलमें थर्मामेटर लगाया कोई ९९ डिग्री गर्मीथी । ज्वरकी बात कानमें पडतेही इन्होंने डाक्टर साहबको कमिश्नरसाहबका तार दिखा कर कहा कि:–

"मेरा प्लेगी इन्तिजामके लिये तकर्रुर हुआहै। मुझे कलसेही अपनी ड्यूटी (काम) पर ज्वाइन (लगने) होनेका हुक्महै। क्या आप मुझे रोक सकतेहैं? अपनी ड्यूटीपर जानेवाले सरकारी नौकरोंको रोकनेका तो हुक्म नहीं है ना?"

"बेशक नहींहै। मगर वह हुक्म अच्छे भलोंके वास्टे है। आपको जब बुखार है टब जरूर रुकना पडैगा।"

"मुझे प्लेगी बुखार नहीं है। सिर्फ रास्तेकी हरारतसे बदन गर्मा गयाहै नाहक मुझे रोककर मेरे काममें हर्ज न कीजिये। जब मेरे पास तार आयाहै तो कमिश्नरसाहब देरी होनेपर मुझसे नाराज होंगे।

"हम इन बातोंको कुछ नहीं जानटा। आपको अस्पटालमें रहकर बुखारका इलाज कराना होगा।"

"खैर! आपको जिदहै तो मैं ठहरूंगा मगर साहबके हुक्मकी तामीलमें देरी होनेके जिम्मेवार आपहैं। (नौकरसे) रामदास तू इसे (सुशीलाकी ओर इशारा करके) लेकर धर्मशालामें ठहर मैं आज रातभर अस्पतालमें रहकर कल तुमसे आ मिलूंगा।"

पतिकी इसतरह बात सुनकर सुशीलाने घबडाते हुए घूंघटकी ओटसे कहाः-

"नहीं ऐसा नहीं! मैं आपको छोडकर—आपको बीमार छोडकर धर्मशालामें न रहूंगी। भगवान् न करै! कदाचित् आपको ज्वर जोर कर आया तो...." इतना कहते २ सुशीलाने रोदिया। इसे रोती देखकर नौकर भी रोने लगा। दोनोंके रोनेसे पंडितजीका कोमल हृदयभी भरतो आया परंतु उन्होंने मनको संभालकर डाक्टरसे कहाः—

"खैर। आप मुझे रोकना चाहतेहैं तो इन दोनोंकोभी मेरे पास रहनेकी इजाजत दीजिये। मुझे अस्पतालमें अकेला छोडनेसे ये लोग घबडाते हैं।"

"नहीं! वहां इनके वास्टे जगह नहीं है। ये आपके पास आकर आपसे मिल सकैंगे। मिलनाभी हम मुनासिब नहीं समझटाहै क्योंकि कहीं इनको प्लेग होजाय टो एकको बचानेमें टीन आदमी मरैगा। लेकिन हम इटना आपके साठ रिआयट करसकैगा।"

"नहीं साहब! इनको जरूर रहने दीजिये। इनके बगैर मेरी खिदमत कौन करैगा? अग आप इन्कार करेंगे तो मैं कमिश्नर साहबको तार देकर मंजूरी मंगा दूंगा।"

इतना कहनेपरभी डाक्टरने इनकी बात न मानी। पंडित मोहनचन्द्र डिपुटी-कलेक्टर होनेपरभी विना अपराध पुलिसके पहरेमें गाडीपर सवार कराकर अस्पताल पहुंचाये गये। इन्हें लेजाता देखकर सुशीलाने, नौकरने बहुत रोना पीटना मचाया, डाक्टरकी बहुत कुछ खुशामद मिन्नत की, पुलिसको बहुतेरा लोभ दिखलाया परन्तु इनकी किसीने कुछ न सुनी। दोनोही विचारे एक गाडी किराये करके इनके पीछे २ भागेहुए गये परन्तु अस्पतालके भींतर जाकर दूरसे दर्शन कर कुछ बातचीत करलेनेके सिवाय ये पंडित-जीके पास न ठहरने पाये। जिस समय सायंकालके बाद इन्हें अस्पता-लसे बाहर निकाला गया पंडितजीको ज्वर बहुत चढ आयाथा। वह बिलकुल अचेत होकर पडे २ कराह रहेथे और दवा पिलानेके बाद अस्पताल वालोंको चले जानेसे पंडितजी एक कमरेमें अकेलेही पडेथे।

प्रकरण ९.
पतिको प्लेग।

अस्पतालमेंसे निकालदेनेपर सुशीलाके पास रोनेके सिवाय क्या जोर था। रामदास नौकरभी ऐसा चतुर नहीं था जो कुछ उपाय करसकता। दोनोंने अस्पतालके बाहर बैठकर रोते २ अपनी आंखें फुलादीं। जो लोग वायु सेवनके लिये--काम काजके लिये उधर आते जातेथे उन्होंने पूछ २ कर दोनोंकी नाकमें दम करडाली। पूंछा सबने और घोट२कर पूंछा परन्तु सहायता किसीने न की। करता कौन आजकल समय ही ऐसा आगयाहै कि परोपकारके लिये कष्ट उठानेवाले-परायेके दुःखपर दुःखित होनेवाले हजारों में एक दो होतेहैं। किसीको दुःखित देखकर उसके जलेपर नौन लगाने-वाले बहुतहैं परन्तु ऐसा कौन माईका लाल है जो इस समय सुशीलाका

घोर विपत्तिसे छुटकारा करै। भगवान् भक्तवत्सल हरिके सिवाय ऐसा दया सागर कोई नहीं है। उसीदिन दयालुको दुखिया सुशीलापर कुछ दया आई। उस दयानिधिकी कृपासे एक सज्जन उधर आनिकले। वह इन दोनोंको रोते देखकर वहीं ठिठक गये। उन्होंने दया करके पूंछाः--

"बहन तुम यहां बैठी२ रोती क्यों हो ? तुम्हें ऐसा कौनसा दुःखहै ? यदि मुझसे कुछ बनसकैगी तो मैं सहायता करूंगा। यदि यह (रामदाससे) लाजसे नहीं बोलती है तो तुमही कहो। तुम दोनों क्यों रोतेहो ?"

" रामदास--महाराज क्याकहैं । हमारे मालिक अस्पतालमें बीमार पडेहैं ! वह अभी बुखारके मारे बेहोश हैं। हम दोनोंने रातभर उनके पास रहकर उनकी चाकरी करना चाहाथा लेकिन डाक्टरने हमें निकलवा दिया। कहा कि इनके साथ तुम्हेंभी प्लेग होजायगा।"

" हां ठीक तो है ! प्लेग उडकर लगनेवाली बीमारी है।"

" कुछभी सही, लेकिन यह उनकी घरवाली है और मैं नौकर। मरना जीना भगवान्के हाथहै । अपने मालिककी नौकरीमें हम मरभी जायँ तो क्या चिन्ताहै लेकिन आपही कहिये। हम उन्हें ऐसी बेला कैसे छोड सकतेहैं ? "

इस बातको उस सज्जनने स्वीकार किया। सज्जन सज्जनलालने उनकी सब बातें पूंछीं। नौकरकी बातसे पंडितजीका पूरा पता पाकर सुशीलाकी ओरसे कमिश्नर साहबको तार दिलानेकी सलाह दी। सलाहके अनुसार जब दोनोंने तार देना स्वीकार कर लिया तब अपनी जेबमेंसे कागज पेन्सिल निकालर तार लिखा। उन दोनोंको अपने साथ तार घरतक लेजाकर तार दिलवाया और रातभर धर्मशालामें दोनोंको टिकनेका प्रबन्ध करके वह अपने घर गये। जब अस्पतालके आगे चौकी-दारोंने रातभर बैठने न दिया तब धर्मशालामें टिककर जैसे तैसे रात काट-नेके सिवाय इनके पास उपायही क्याथा ? इन्होंने वहां टिककर रोते २ चिन्ता करते २ और चिन्ता ही चिन्तामें तारे गिनते २ रात बिताई। वह रात नहीं सुशीलाके लिये कालरात्रि थी। जिस समय पतिके शोचमें

सुशीला विह्वल थी रामदास नौकरको ज्वर आया और ऐसा कालज्वर आया कि रातभरमेंही उसे सन्निपात होकर वह सबेरा होते २ चल बसा। दिन निकलतेही धर्मशालावालेने पुलिसमें रिपोर्ट की । पुलिस आई, डाक्टर आया और मुर्देकी तलाशी लीगई । डाक्टरकी जांचसे जब मालूम हुआ कि नौकरकी मृत्यु प्लेगसे हुईहै तब पुलिसने सुशीलाको घेरकर क्वारंटाइनमें लेजानेकी तैयारी की । इस तरहकी भयंकर विपद्के समय कोमल सुशीला सिवाय रोनेके क्या करसकती थी ? उसने रो २ कर अपना कलेजा खाली करना चाहा परन्तु यह दुःख ऐसा वैसा न था जो सहजहीमें इसका कलेजा खाली होजाय।

जिस समय सुशीला रो २ कर जगत्पिता परमेश्वरसे इस महा दुःख-सागरसे पार पानेकी प्रार्थना कररही थी, जिस समय रोर कर आपही घब-डाती और आपही मनको ढाढस बंधाती जातीथी, जिस समय ईश्वरके सिवाय उसकी रक्षा करनेवाला कोई न था भगवान्कीही प्रेरणासे सज्जन सज्जनलाल इनकी खबर लेनेके लिये धर्मशालामें आ पहुंचे । आकर सुशीलाकी दुर्दशा देखतेही यहभी घबडाउठे । सुशीलाके रोनेसे, पुलिससे पूंछकर और तमाशाइयोंसे जाननेपर जब इनको सारी बात मालूम हुई तब लगभग दश मिनटतक तो यह पत्थरकी मूर्तिकी तरह चुपचाप खडे-रहे । इतनी देरतक यह न सोच सके कि क्योंकर सुशीलाका छटकारा कराकर पतिके पास पहुंचाना चाहिये । जब यह सोचहीसोचमें सुशीलाके पास खडे होकर आंखोंसे दयाके आंसू वहा रहेथे तार घरका चपरासी "सुशीला सुशीला पंडितमोहनचंद्र डिपुटीकलक्टरकी स्त्री सुशीला" को पुकारता हुआ भीडको चीरकर सुशीलाके पास आ खडा-हुआ । तारका नाम सुनतेही भीडमें सन्नाटा छागया पुलिस और डाक्टर भौंचकसे रहगये और सज्जनलाल तथा सुशीला तार पढनेके लिये आतुर होगये । तार पातेही सुशीलाने रसीदपर पेन्सिलसे हस्ताक्षर किये और शिर नीचा कियेहुए पढनेके लिये सज्जनलालको दिया । जिस समय वह मनहीमन तार पढने लगे सुशीला डाक्टर पुलिस और

भीडके आदमी टकटकी लगाये उनके चेहरेपर तारका मतलब पढ रहेथे। तार पूरा करतेही उनकी चिन्ता एकदम ढाढसमें बदल गयी। उन्होने सुशीलासे कहाः—

"बहुत घबडाव नहीं। तार अच्छा आयाहै। तुम्हारा काम सिद्ध होगया।"

इस बातके सुननेसे चाहे सुशीलाके जीमेंजी आगया परंतु "बाबू सज्जनलालकी सुशीला बहन क्योंहै? सुशीलाका कौन ऐसा काम था जो सिद्ध होगया?" इस तरहके अनेक प्रश्न लोगोंके हृदयमें उठकर तर्कोंके घोडे दौडने लगे। उनके मनमें चाहे जितने घोडे दौडें परंतु जबतक बाबूसाहबने तार पढकर न सुना दिया दूसरे प्रश्नको कोईभी हल न करसका। उन्होंने आप तार पढकर डाक्टरको दिखाया डाक्टरने पुलिसके दारोगाको दिखाया और दोनोंके पढतेही सुशीलाकी खातिर होने लगी जिस समय पुलिस चार कहारोंको बुलाकर रामदास कहारकी लाशको ठिकाने लगानेका प्रबंध कररही थी, जिस समय उसके कपडे इकट्ठे करके होली जलाई जारही थी, घोडा दौडाता हुआ एक यूरोपियन वहां आ पहुंचा। उसने उतरकर सुशीलासे पूंछाः—

"आपही पंडित मोहनचंद्र डिपुटीकलक्टरका औरट है। अब आप घबडाइये नहीं। आपको किसी तरहका टकलीफ नहीं होने डिया जायगा।"

यह यूरोपियन और कोई न था। यही वहांके कलेक्टरसाहब थे। कलक्टर साहबको देखकर भीड हटगई। उन्होंने चाहे सरकारी तारका आशय नहीं सुनाया था चाहेबाबू सज्जनलालनेभी सुशीलाके नामका तार लोगोंको सुनाया नथा परंतु मैं अपने पाठकोंको उसका भाषान्तर सुना देताहूं। तार कमिश्नरसाहबकी ओरसे सुशीलाके नाम था उसमें लिखाथा कि—

" तार पाया। पढकर मुझको बडा खेदहुआ। डाक्टरका बर्ताव खेदके योग्यहै। मैंने कलक्टरको तारदिया है। वह पंडितजीके लिये एक अलग

बंगलेमें रहनेका प्रबंध करेंगे। आप उनके पास प्रसन्नतासे रहकर उनकी सेवा करसकेंगी। किसीतरहकी आपके लिये रोकटोग न होगी । पंडित-जीका इलाज कराइये। घबडानेका समय नहीं है । भगवान् आपकी रक्षा करेगा।"

यद्यपि सरकारी तारमें सुशीलाकी पूरी २ सहायता करनेका पूरा २ उल्लेख था परंतु रामदासकी मृत्युका उसमें संकेत बिलकुल न था। होता कहांसे? यह घटना सुशीलाके तार भेजनेसे पीछे हुईथी । सुशीलाने नौकरके लिये जलाने और क्रियाकर्मका प्रबंध करनेकी इच्छा प्रकट की। बाबू सज्जनलालने पुलिसकी सहायतासे आगे पड़कर यह काम करवाया और चलते समय कलक्टरसाहबने उनकी ओर मुंह फेरकर पूंछाः—

"हैं! बाबू सज्जनलाल आपहैं ? आप यहां कैसे ? क्या आपका (सुशीलाकी ओर अंगुली करके) इनसे कोई रिश्ताहै।"

"नहीं हुजूर मेरा कोई रिश्ताविश्ता नहीं है। मैं बनियाहूं और यह गुजराती ब्राह्मणहैं। इन्हें कल अस्पतालके फाटकपर रोते देखकर मुझे दया आगई और मुझसे जो कुछ बनी इनकी सहयता की।"

सुनकर साहब बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने सज्जनलालकी प्रशंसा कर इन्हें धन्यवाद दिया और घोडेपर चढकर चाबुक फटकारते हुए वहांसे चले गये। भीड छटगई डाक्टरने अपना रास्ता लिया और पुलिसके दारोगा लाला माताप्रसाद किरायेकी गाडीमें सुशीलाको पर्देके साथ बिठलाकर अस्पताल पहुंचे। एक दूसरी गाडीपर दो कान्स्टेब्लोंके साथ बाबू सज्जनलालभी गये । जिस समय इन लोगोंने जाकर पंडितजीको देखा उनके होशहवाश ठिकाने न थे। वह सन्निपातमें अचेत थे और प्रला-पसे वाही तवाही बकते हुए बीच २ में बगल टटोलकर हाय २ करते जातेथे। इनकी भयानक दशा देखतेही सुशीला पछाड खाकर गिरपडी। गिरनेसे उसे मूर्च्छा आगई और दो तीन जगह हलकी भारी चोटभी आई। जिसतरह कमिश्नर साहबके तार कलक्टर साहब और सुशीलाके नाम आया था, उसी तरह उनकी आज्ञासे अस्पतालके अफसरका तार

डाक्टरसाहबके नामभी था। जो डाक्टर—प्राणकी रक्षा करनेका बीडा उठाकर इसी जीविकासे पेट पालनेवाले डाक्टर कल निर्दयताकी मूर्ति बनगये थे उन्हींने दवा सुंघाकर सुशीलाकी मूर्च्छा छुडाई। मूर्च्छा छूटतेही उसने कहाः—

"मेरे नसीबमें जो लिखा होगा भोगूंगी परंतु अब (पतिकी ओर संकेतकरके) इन्हें ऐसे निर्दय डाक्टरके इलाजमें रखना मुझे पसंद नहीं है आपलोग दयाकरके किसी और मकानमें ले चलिये और वहीं किसी अच्छे देशी डाक्टरसे अथवा मिलजाय तो अच्छे वैद्यसे इलाज करानेका जल्दी प्रबंध कर दीजिये।

यह बात सबने स्वीकारकी। पंडितजीके लिये पालकी मंगवाई गई। उन्हें सवार कराने बाद जब बाबू सज्जनलालने सुशीलासे पर्देदार गाडीमें चढने को कहा तब वह घूंघटमेंसे बोलीः—

"आज गाडीपर चढनेका मेरा समय नहीं है। पर्दा और गाडी सब इनके साथहै। मैं इनके साथ पैदल चलूंगी। अब एक मिनिटके लियेभी मैं इन्हें छोड नहीं सकतीहूं।"

जो सुशीला पर्देसे बाहर होकर कभी परपुरुषसे स्वप्नमेंभी बात नहीं करती थी, जिसे पांच पचास स्त्रियोंमें बैठकरभी बात करतेहुए लज्जा आतीथी वही आज पतिकी पालकीके साथ भागती हुई जारही है, पुलिस और बाबू सज्जनलाल उससे बारंबार गाडीपर चढनेका अनुरोध कररहे हैं, अभी मूर्च्छा मिटनेसे उसके शरीरमें पूरी दुर्बलताहै, कलसे अन्न जल न मिलनेके कारण उसका शरीर भूख प्याससे सनसना रहाहै, चोट लगजानेसे उससे चला नहीं जाताहै परंतु इन बातोंकी उसे इस समय कुछ पर्वाह नहीं है। वह पतिके दुःखमें अपना सारा दुःख भूलगई है, पर्दा भूलगई है और एक पतिके सिवाय वह सारे संसारको भूलगई है। उसे यादहै तो केवल दीनदयालु परमेश्वर और पति। परमेश्वरपरही उसका भरोसाहै। उन्हींसे वह प्रार्थना करती जातीहै, मिन्नतें मानती जातीहै और कभी पति की दशा देखकर रोती और कभी ईश्वरपर भरोसा करके ढाढस बांधती जातीहै।

प्रकरण १०.

पंडितजीकी मृत्यु ।

सरकारी प्रबंधसे पंडितजीके रहनेको अच्छा सुखद बंगला मिलगया, सेवा करनेको चार कहार और दो कहारिनें मिलगईं और नगरके नामी२ डाक्टर इलाज करनेके लिये नियत होगये। आज कलक्टर साहब पंडितजीकी खबर पूंछने आतेहैं, जंटसाहब आतेहैं, तहसीलदार आतेहैं और शहरके बडे२ रईस आतेहैं परन्तु सज्जनलाल क्यों नहीं आये ? उनके न आनेसे सुशीलाका जी घबडाताहै। वह अपनेही मनमें बारंबार उनके उपकारोंपर धन्यवाद देकर उन्हें याद करती और उनके लिये चिन्ता कररहीहै, इसका चिन्ता करना सत्य निकला। उसे रामचेरवा कहारसे खबर मिली कि कल रातको जबसे वह यहांसे गयेहैं उनकी स्त्रीको प्लेगने धरपकडाहै। वह इस रोगसे अबतब होरहीहै और उसके बचनेकी आशा नहीं है । सुशीलाको बाबू सज्जनलालका दुःख सुनकर हार्दिक वेदना हुई । उसने मनहीमन चाहा कि ऐसे उपकारकके कष्टमें संयुक्त होकर उनके उपकारका बदलादूं परन्तु आर्यमहिलायें पतिकी दासी होतीहैं। वह पतिको इस भयंकर स्थितिमें छोडकर कैसे जासकतीहैं। उसने सोचा--" इन्हें छोडकर एक मिनटके लिये टलना कदापि उचित नहीं है । मैं जब इनकी अर्द्धाङ्गिनी हूं तब आधे अङ्गसे जाही कैसे सकतीहूं । वह तो दो चार दिनसे उपकार करनेवाले अनजान आदमीहैं परन्तु इन्हें छोडकर मा बाप भाई बहनके पास भी नहीं जासकती । परन्तु खेद इस बातका है कि सरकारका इतना प्रबन्ध होजानेपर भी—पतिका इतना द्रव्य खर्च होनेपर इस गाढी भीडमें बाबू सज्जनलाल जैसा कोई सच्चा सहायक नहीं है । इनमें कोई लोभसे कोई खुशामदसे और कोई सरकारकी आज्ञासे सहायता करनेवाले हैं परन्तु विना मतलब सहायता करनेवाले बाबू सज्जनलालके सिवाय दूसरे कोई नहीं हैं वह सज्जन हैं और इनकी स्त्रीभी अच्छे प्रारब्धवाली है । तब ही तो उसे प्लेग हुआहै । स्वामीके बदले मैं बीमार होती तो मैं भी सौभाग्यवती कहलाती । हैं सौभाग्यवती ? क्या मैं

सौभाग्यवती नहींहूं ? आज मेरे मुंहसे अनायास यह क्या निकल रहाहै ? मैंने भूलसे अपने आपको गाली देडाली । भगवान् करै यह गाली झूंठी निकलै । हे ईश्वर ! मेरे अहिवातकी–मेरे सौभाग्यकी रक्षाकर । ''

आज पंडितजीकी चिकित्साका अच्छा प्रबन्धहै । बडे२ डाक्टर इलाज करनेके लिये मौजूदहैं । सेवा टहलकीभी कभी नहीं है परन्तु सुशीला दिन रात पतिके पलंगके पास बैठी रहती है । डाक्टरकी योजनाके अनुसार पतिको समयपर दवा देतीहै, पथ्य देतीहै और यहां तक कि चार २ कहार मौजूद रहनेपरभी उनका पायखाना पेशाब उठानेका काम भी स्वयं अपने हाथसे करतीहै । सुशीलाकी ओरसे सेवा करनेमें किसीतरहकी कसर नहीं है, डाक्टरोंके इलाजमें कसर नहीं है और सरकारी प्रबन्धमें भी कसर नहीं है परन्तु होनहारको मेटनेकी किसीमें शक्ति नहीं है । पंडितजीके इलाजका सब तरह सुविधा होनेपर भी उन्हें बढियासे बढिया दवा देनेपर भी आराम होनेकी आशा नहीं है । उनका रोग दिन २ बढता जाता है, शरीरका बल घटता जाताहै और साथही उनके जीनेकी आशा टूटती जातीहै । सचमुच ही आशा टूटगईहै । पंडितजी कालके गालमें पडचुकेहैं । उसमेंसे निकलना कठिनहै और जीजानसे इलाज करनेपरभी डाक्टर लोग आपुसमें कहतेहैं कि " पंडितजीके दिन भरचुके । ", हाय ! पंडितजीके दिन भरचुके ! !

वैद्योंको– डाक्टरोंको- हकीमोंको चाहे पंडितजीके दिन भर चुके कहनेमें कुछ कष्ट न होताहो क्योंकि सैंकडों– हजारोंको मारते जिलाते उनका हृदय कठोर होगया है परंतु इनकी कानाफूसीसे, इनके मुखोंके भावसे सुशीलाने समझ लिया कि येलोग मेरेही भाग्यका फैसला कररहे हैं । हाय ! वह समय सुशीलाके लिये कैसा था ? " दिन भरचुके " की भनकार कानमें पडतेही सुशीलाकी जो दशाहुई लिखनेमें नहीं आसकती सुनतेही वह पछाड खाकर गिर गई । गिरतेही वह मूर्च्छित होगई और जो लोग पंडितजीके दिन भरचुके बतला रहेथे वे सुशीलाकी नाडी देख-

कर उसके जीनेमेंभी संदेह करने लगे। यदि उनके संदेहमें कुछ सत्यताका लेश हो तो इससे बढकर सुशीलाके लिये एक पतिव्रता हिन्दूरमणीके लिये सुखही क्याहै । परंतु सुशीलाके भाग्यमें यह सुख कहां? डाक्टरोंके दवा देनेसे-उसकी आंखोंपर पानी छिडकनेसे सुशीलाको चेत हुआ और चेत होतेही डाक्टरोंके बलपूर्वक उसके शिरमें पट्टी बांधलेनेपर उनके हजार रोकनेपरभी वह पंडितजीके पलंगकी पांटीके पास जाबैठी । उसके शिरमेंसे अभी रक्तका बहना बंद नहीं हुआ था, उसकी मूर्च्छा टूटनेपरभी उसे बार २ गोते आते थे उसे बारबार डाक्टरलोग सोर हनेकी सलाह देतेथे परंतु इससमय सुशीलाका भाग्य फूटनेकी अनीपर आरहा था, इस समय उसके जीवनसर्वस्व उसे सदाके लिये दुःखसागरमें डालकर इस असारसंसारसे कूच करनेवाले थे, इससमय उसके सुखका सूर्य अस्ताचलके निकट पहुंचकर सायंकालके बादलोंमें छिप रहाथा—ऐसे समयमें सुशीलाको चैन कहां? उसने पलक मारना बंद करके पतिके दर्शनमें मन लगाया । उससमय एक २ मिनट उसके लिये एक २ कल्पके बराबर था । परंतु हाय! भगवान्ने अब इन मिनटोंकोभी पूरा करदिया । सुशीलाका भाग्य फूटा और उसकी आंखोंके सामने फूटा । हजार प्रयत्न करनेपरभी उसका भाग्य फूटही गया । वह बहुतेरी रोई, चिल्लाई । उसने बहुतेरी दीनबंधुदीनदयालुको अपनी दीनता सुनाई परंतु "करमरेख ना मिटै करो कोई लाखों चतुराई ।" उसकी सब चतुराइयां व्यर्थ गईं।

जिस समय पंडितजीके प्राणपखेरूने शरीरपींजरेसे उडकर अपने कियेका बुरा भला फल भोगनेके लिये प्रयाण किया सुशीला उनके पास थी। उनके शरीरका अंत होतेही सुशीला बहुत जोरसे पुकारकर रोते२ बोलीः—

"हाय२ रे मैं लुटगई! हेनाथ, मुझ अभागिनीको छोडकर चलेगये। हाय! अब मैं क्या करूंगी? हे भगवान् अब मुझेभी समेटले। हे दीनबंधु मेरा यदि सच्चा पातिव्रतहै तो मुझेभी स्वामीके साथ जानेकी शक्तिदे । मेरा अब एक मिनटभी जीना नरकके बराबरहै । मैं अब कदापि न जीयूंगी । मुझे अब जीकर करनाही क्याहै ? हा नाथ! मुझेभी अपने साथ ले चलो। मैं

चलूंगी। मैं आपको अकेला कभी न जाने दूंगी। मुझे लेचलो नाथ! मैं चलूंगी।"इस तरहसे विलाप करते २ सुशीलाने छाती पीटना आरंभ किया। शोकसे विह्वल होनेसे उसे शरीरकी सुधि न रही उसके शिरके बाल बिखर गये, उसकी आंखोंसे आसुओंकी धार बहने लगी और शोकही शोकमें उसने तानकर अपना शिरभी भींतसे देमारा। थोडीदेर पहले उसको मूर्च्छा होनेपर जो चोट लगीथी और चोटपर डाक्टरोंने पट्टी बांधी थी वह टूट गई। सुशीलाको फिर मूर्च्छा आई और इतनी गहरी आई कि एकघंटेतक उसने आंखें न खोलीं। डाक्टरोंको इसबार निश्चय होगया कि यह अब न जियेगी परंतु अभागी सुशीलाके भाग्यमें मौत कहाँ? उसे फिर चेत हुआ और उसीतरह फिर वह रोने पीटने लगी। जब उसका करम फूटचुका था जब उसके जीवनसर्वस्वकी जीवनलीला समाप्त होचुकी थी तब रोने पीटनेके सिवाय उसके लिये उपायही क्या था परंतु इस भारी दुःखके समय उसे धीरज दिलानेवाला, उसके दुःखमें साझी होनेवालाभी कोई न था। पतिकी लाश दो डेढ घंटेसे पडी देखकर उसे लाचार होकर कहना पडा और शिर ठोंककर कहना पडा कि:—

"देखते क्या हो अब इनके पिछले कामकी तैयारी करो।"

यदि सुशीलाका भाग्य अपने गाँवमें फूटा होता तो इस कामको घरवाले करते, भाईबंधु करते, जाति बिरादरीके लोग करते, गावंवाले करते और इस बातकी भनकारभी सुशीलाके कानतक न पहुंचती परंतु यहां उसका कौन था? खैर उसने लाचार होकर कहा और अपनी जातिकी रीति तथा धर्मशास्त्रके अनुसार अंतेष्टि क्रियाका सब प्रबंध करवाया। केवल प्रबंधही क्यों उसने अपने हाथसे पतिकी क्रिया की और वहांवालोंके हजार समझाने बुझानेपरभी पतिके शवको किसीको स्पर्श न करने दिया मैं यह पहलेही कहआयाहूं कि पंडितजी गुजराती ब्राह्मण थे। उनकी जातिकी यह चालथी कि न किसीको अपना मुर्दा छुआना और न किसीका छूना। बस इसी चालके अनुसार उसने इस घोर दुःखके समयभी पतिके शवका किसीको स्पर्श न करने दिया। इस भारी दुःखके समयभी

इस चालकी रक्षा होनेके लिये उसने दुखिया कलेजेपर फौलादके तवे जडकर रोते झींकते कह सुन कर पतिको श्मशानतक लेजानेके लिये एक गाडी बनवाई और अपनेही हाथसे पतिको उसमें लिटाकर मरघटको लेचली। वह लेतो चली परंतु थोडीही दूर जानेपर गाडी टूटगई और अब उसे पतिकी गठडी बांधकर अपने शिरपर पीठपर लादकर लेचलना पडा। बीमार सुशीला, दुःखसागरमें डूबीहुई सुशीला रोती,झींकती, गिरती, पडती, किसीतरह चारमनके बोझेको लेकर श्मशानमें पहुंची। वहां पंडितजीके लिये चिता तैयार कीगई और चितामें उन्हें लिटानेसे पहले और पीछे जब शास्त्रविधि समाप्त होई तब सुशीलाने आग डालते समय रोतेरोते अपने मनमें सोचाः–

"पतिके साथ जानेका अबभी समयहै। इच्छा होतीहै कि अभी इस जलतीहुई चितामें कूदपडूं। कूद अवश्य पडूंगी और पडनाभी चाहिये परंतु आज कल राज्य उनलोगोंका है जो हिन्दूरमणियोंके पतिप्रेमका लेशभी नहीं समझते। यादि यही घटना गाँवमें हुईहोती तो कदाचित् ऐसा करभी सकती। नहीं २ वहांभी कौन करने देता। आजकलका समयही ऐसा आगया है। खैर इससमयभी कूदपडूं। कूद सकतीहूं परंतु मेरे साथमें जो सरकारी कर्मचारीहै पुलिसहै वह मुझे तुरंत निकालकर गिरफ्तार करलेगी और साथही मेरी भारी दुर्दशा होगी। मालूम होताहै कि भगवान्कोही मेरा पतिके साथ जाना इष्ट नहींहै। ईश्वरकी यदि ऐसी इच्छा होती तो मेरा प्राण प्राणनाथके साथही क्यों न निकल जाता। इस जन्ममें मैं जहांतक जानतीहूं मुझसे इस दंडके योग्य कोई पाप नहीं बनाहै। यह पूर्वजन्मके पापका फलहै। कियेका फल भोगनाही पडैगा। युगका धर्मभी तो यहीहै। भोगूंगी। पति कहा करतेथे कि जो सहगमन न बनसकै तो आजन्म ब्रह्मचर्य पालन करनेवाली विधवा मरनेपर स्वर्गमें उसी पतिको पातीहै। बस यही समयको देखतेहुए उचितभीहै। हे ईश्वर ! यदि तैंने प्राणनाथका वियोग कियाहै तो जबतक मैं जियूं मुझे अपने धर्मपालनकी शक्ति दे। हे प्राणनाथ!मैं अनाथिनी होकर आपके विना

कैसे जियूंगी । इस स्वार्थी संसारमें आपके विना मेरा कौनहै ? हे नाथ ! मुझे निराधार छोडकर जातेहो । मेरी आंखोंके तारे हेनाथ ! अब मैं क्या करूंगी ? मैं अबलाहूं नाथ सचमुच अबला ! हाय रे ! मैं क्याकरूं ? हाय !!!

पिछले शब्द प्रकाशरूपपर कहती हुई सुशीला फिर रोती २ धरतीपर गिरगई । इसके बाद क्याहुआ सो उसे खबर नहींहै । हां जब तीन चार घंटेके बाद उसे चेत हुआ तब उसने अपनेको उसी बंगलेमें एक पलंगपर लेटे उन्हीं कहार कहारिनोंको अपनी टहल करते और उन्हीं डाक्टरोंको अपना इलाज करते पाया । सचेत होतेही वह चारपाईसे उतरकर धरतीपर लेट गई । उसने अपने भाईका पता बतलाकर उसे बुलानेका तार दिलवाया । तार पानेपर भाई आया । सुशीलाने अपना जेवर बिकवाकर नौकरोंका वेतन, डाक्टरोंकी फीस, बंगलेका भाडा चुकाया और आनंदपुरमें रहनेके समय जो कुछ खर्च हुआथा उसका निपटारा किया । बस पतिकी मृत्युके तीसरे दिन, पतिके अस्थि, उनकी राखका गंगाप्रवाहकर सुशीला अपने प्राणाधारपति, अपना सौभाग्य, अपना जेवर और अपना सर्वस्व खोकर आनंदपुरमें अपने आनंदका नाशकर भाईके साथ अपने मैकेको विदा हुई । अपनी स्त्रीकी मृत्यु होजानेसे बाबू सज्जनलाल फिर उसके पास नहीं आये । और न उनकी खोजकरनेकी अब मुझे आवश्यकता रही ।

प्रकरण ११.

भौजाईका कलह ।

अभागी सुशीला आनंदपुरमें अपना सर्वस्व खोकर भाई शत्रुसूदनलालके साथ वसंतपुर गई तो सही परंतु इसबार उसे वहांभी सुख न हुआ । " आदर्शदम्पती " के नायक पंडित मधुसूदनलाल और उसी पुस्तककी मुख्यनायिका साध्वी सुंदरीके समय पीहरमें रहनेसे इसे जो सुख होता था वह भाई भौजाईके राज्यमें कपूरकी तरह उडगया । वसंतपुरका

वसंत इसे कांटेकी तरह चुभने लगा । वहांका शीतल मंद और सुगंधित पवन जेठ मासकी लूके समान, हरे २ आमोंके मोर अंगारोंकी तरह, कोयलोंकी मीठी बोली वज्रपातके सदृश और वसंतके सबही साज सामान मरघटकी तरह दिखाई दिये । जन्मसे तेरह चौदह वर्षतक पिता मधुसूदन और माता सुंदरीके आगे इसका जिस घरमें आनंदसे लालन पालन हुआ था, जहां माता पिताने इसका लडकी होनेपरभी अपने दोनों लडकोंकी बराबर लाड चाव किया था, जहां पुत्रोंसे बढकर इसे स्त्रियोंके उपयोगी शिक्षा देकर इसका प्यार कियागया था, जहां इसका मन कभी मैला न होने पावै–इस बातकी लडकोंके बराबर संभाल रक्खी जातीथी वही घर माता पिताके रामशरण होजानेसे अब इसे खानेको दौडने लगा । बहनका तार पानेपर भ्रातृस्नेहसे अथवा लोकलज्जासे भाई शत्रुसूदन इसे लाया तो सही परंतु भौजाई भुजंगिनीके मारे इस अथाह दुःखके समय एक मिनटभी कल पडनेका विचारी सुशीलाको अवसर न मिल सका विधवा ननंदकी सूरत देखतेही भौजाई प्यारीने आंखें चढालीं । वह लाल २ नेत्र करके इसकी ओर इसतरह देखने लगी मानों इसे अभी खाजायगी । क्रोधके मारे उसके होंठ फडफडाने लगे और दुखिया ननदकी आवभगत करके उसके दुःखित हृदयको शांत करनेके बदले उसने ननंदकी ओरसे मुख फेर लिया । घर पहुंचनेसे पहले इसे आशाथी कि प्यारी भौजाई प्यारसे मेरा आश्वासन करके मेरे शोकमें शामिल होगी परंतु यहां फल आशासे बिलकुल उलटा हुआ । आनंदपुरसे रेलमें सवार होकर वसंतपुर पहुँचनेतक खाना तो कहां बरन इसे छत्तीस घंटे तक पीनेके लिये एक चल्लू जलभी नसीब नहीं हुआ था । होता कैसे इस लाइन भरमें स्टेशनोंपर कहीं कुओंका नाम तक न था । स्टेशनोंपर जहां तहां पानीके नल अवश्य लगे हुए थे, और जहां कहीं नल न थे वहां पानीपांडे बालटियोंमें पानी लिये मौजूद थे--परन्तु गुजरातिन सुशीला विधवा होजानेकेबाद ब्रह्मचर्यके कठिन व्रतके पालन करनेकी मनमें पक्की ठान लेनेवाली सुशीलाके लिये नलोंका, बालटियोंका पानी किस कामका ?

डेढ घंटे तक राह देखकर दो तीन बार मांगनेपरभी जब भौजाई पानीके लिये सुनी अनसुनी करगई तब यह उठकर स्वयं हाथ धोनेके बाद ज्योंही मटकेमेंसे पानी भरने लगी उसने गरजकर कहाः--

"हैं! हैं!! खबरदार!!! मेरे मटकेको छुआ तो? आई है रांड अपना चापट करके मेरे यहां झाडू फेरने?"

इतना कहनेके अनन्तर वह क्या २ बकगई सो तो सुशीलाने सुना नहीं परन्तु उसकी जीभकी कतरनी बडी देरतक चलती रही। उसने बकते झकते एक मैलेसे ग्लासमें गंगालमेंसे नहानेका गर्म पानी भरके उसके आगे रक्खा और फिर बोलीः--

" ले, डाल अपनी नरहटीमें। मान न मान मैं तेरा महमान। उस निगोडेको देखोना जो बहनपर मरा मिटता है। इस रांडको अशकुन करनेके लिये मेरे घरमें ला ठूंसाहै। अपने बालबच्चोंके शकुनकीभी उसे कुछ चिन्ता है।"

भौजाईके इस कोपको भाई चुपचाप सुनता रहा। उससे यह भी कहते न बना कि "लायाहूं तो मैं लायाहूं। मेरी बहनहै, विपत्तिकी मारी है, इसे दुःखके समय कुछ सहारा देनेको मैं लायाहूं। इसमें तेरे बापका क्या जाताहै? तू इसपर नाहक लाल पीली क्यों होतीहै?" भौजाईके इस अत्याचारपर भाई यदि कुछ कहता यदि वह अपनी जोरूको फटकारनेके बदले बहनहीको कुछ ढाढस बंधाता तो सुशीलाका जलता हुआ कलेजा ठंढा होसकता था परन्तु भोंदू भाईके चुप्पी साध जानेसे उसने समझ लिया कि "इस लुगाईके गुलाम भाईके यहां मेरा गुजारा न होगा। अपना बचाखुचा जेवर बेचकर खानेसे भी यहां एक घडी टिकाव होना कठिनहै। कठिन अवश्य है परन्तु जब मेरा नसीब फूट गयाहै तब जैसा बर्ताव यहां हुआहै वैसाही ससुरालमें होगा। जब सगा माजाया भाई अपने घरमें रखनेसे आनाकानी करताहै तब सास ननद वहां कस घुसने देंगी। हाय! मेरा भाग्य फूट गया। इस लिये मेरा ऐसा निरादर होताहै। हे भगवन्! ऐसा दुःख देनेकी जगह तो मुझे इस दुनियासे

उठाले। भगवान के घरमें मुझ अभागिनीके लिये मौत कहां है ? भौजाईके डरसे, भाईके घरमें अशकुन होनेके डरसे सुशीलाने जो कुछ कहा अपने मनहीमें कहा था परंतु मुख अंतःकरणका आईनाहै। जो कुछ मनमें होताहै वह मुखपर झलक आताहै। सुशीलाका दुःख उसके मुखपर स्पष्ट झलक आया। भला उस झलकको तो वही जान सकताहै जिसपर कभी दुःख पडाहो परंतु रोकते २ भी उसकी आंखोंसे आंसूकी दो चार बूंदें गिरही पडी। सुशीलाकी आंखोंमें आंसूकी बूंदें देखकर भौजाई फिर गरजीः–

" खबरदार मेरे घरमें आंसू गिराया तो! अहो हत्यारी अपना तो सर्व-नाश करचुकी अब जरा अपने भाई भतीजेकी तो खेर मना। क्या मेरे बालकोंको खाने आईहै डायन! (पतिकी ओर लालपीली होकर) देखोजी मेरे यहां ऐसी न सधेगी। तुम लाये हो तो दश पांच दिन भलेही इसे रक्खो। मैं नाहीं नहीं करती परंतु मैं रोने हरगिजभी न दूंगी। जहां इसने एकभी आंसू गिराया और मैं चुटिया पकडकर घरसे बाहर निकाल दूंगी। "

" इस विचारीपर इतना कोप क्यों करती है ? यह पहलेही दुःखकी मारीहै। तुझे इसको ढाढस बंधाना चाहिये। तू इसकी बडी भौजाईहै–माकी बराबर भौजाईहै। इसकी विपत्ति काटनेके बदले इसे काटनेको क्यों दौडती है। जरा इसपर दयाकर। इसने तेरा बिगाडाही क्याहै। यदि दुःखसे तेरे निरादर करनेसे, तेरे फटकारनेसे इसकी आंखोंमेंसे दो चार बूंदें आंसू गिरही गईं तो तेरा क्या छिनगया ? तेरे यहां अभी कौनसी शादी है जो इसके आंसुओंसे अशकुन होगया। अभी तो उनके मरनेसे शोकके दिन हैं। यह रोतीहै तो तूभी इसके साथ रोकर इसका कलेजा हलका कर। "

त्योरियां चढाकर, दहने हाथको हिलाती हुई, चिल्लाकर प्यारी बोलीः–

"वाहजी! तुमभी कैसेहो। मुझे रुलाने आयेहो। मैं क्यों रोऊं ? खबरदार मुझसे रोनेका नाम लिया तो। रोवे, यह जिसका खसम मरगया है। मैं क्यों रोऊं? भगवानकी दयासे मेरे लडकेबाले मेरा अहिवात मेरे मा बाप भाई भौजाई सलामत रहैं। मैं क्यों रोऊं? तुमको बहनका दुःखहै तो तम रोओ। बस मैंभी

अब इस घरमें नहीं रहूंगी।निपूता ऐसा कहना किस कामका। सांझकी बेला ऐसा कहते हुए तुम्हें डर नहीं लगता। एकतो मुझसे पूंछे बिना मुझे पीहर गई पाकर इस रांडको यहां ले आयेहो और फिर मुझे रुलातेहो। यह बहन् और तुम भाई। दोनों जने बैठे २ इस घरमें रोया करो। मैं तो जातीहूं अपने बालकको लेकर अपने बापके यहां। तुम दोनों यहां बैठे २ रोया करना।"

इतना कहकर उसने छःमहीनेका लडका गोदीमें लिया और तीन वर्षकी लडकीका हाथ पकडकर अपने पीहरका रस्ता पकडा। पतिने बहुतेरा समझाया बुझाया, खुशामद मिन्नत की, दश पांच रूखी सूखी सुनाई परंतु उसकी एक न सुनी वह ज्योंही घरसे बाहर होनेलगी पतिने उसका हाथ पकडा। वह ज्यों २ हाथ पकडकर भीतर खेंचने लगा त्यों २ स्त्री बाहरको खींचने लगी। पांच मिनटतक इस तरह दोनोंमें खेंचा तानी हुई। जब स्त्रीने इसतरह न माना तब पतिने तानकर उसके गालपर एक थप्पड मारा थप्पड अवश्य खाया परंतु बदलेमें उसने पतिको पचास गालियाँभी देदीं। उसने पतिको गालियां दीं, ननंदको गालियां दीं और इस हल्लेको देखकर जब उसके बालक रोनेलगे तो उनकेभी दोचार चपत जमा दिये। इस लडाईको सुनकर अडौस पडौसके आदमी इकट्ठे होगये। लोगोंके इकट्ठा होनेसे पंडितशत्रुसूदन लज्जित होकर भीतर चले गये और उनकी स्त्री अवसर पाकर अपने मैकेको खसक गई।

पंडित शत्रुसूदन इसतरह अपनी जोरूसे हारकर अवश्य लौटे परंतु उनका मन न लौटा। वह जोरूका गुलाम बनाहुआ प्यारीके साथ गया। पंडित साहब भीतर आकर बहनके पास बैठे हुए माथा पकडकर रोने लगे। उनका इससमय रोना कुछ बहनके दुःखके लिये नहीं था, इससमय उन्हें यह सुधि न थी कि दुखिया बहन दोदिनकी भूंखी है,इससमय वह यह नहीं जानसके थे कि बहनके कलेजेपर पति मरणसेभी चौगुना कष्ट हुआ है। इससमय वह केवल इसलिये रोतेथे कि उनकी प्यारी जोरू रूठ गई है। इस समय वह बडी दुबिधामें थे। वह सोचते थे कि बहनको जबाब

दिये विना औरत न मानेगी और बहनको निकालदेनेसे निन्दा होगी।भाई के मनका भाव समझकर सुशीला बोलीः—

"भैया, मेरा करम फूटाहै तो मैं भोगूंगी । तू मेरे लिये क्यों क्लेश सहताहै ? मेरा सर्वस्व गयाहै । मुझे मौतभी नहीं करम फूटनेपरभी पेट नहीं मानता । भूंखके मारे आंते बैठी जाती हैं । खाये विना काम नहीं चलैगा। ले मेरे पाससे दो पैसे लेकर बाजारसे सूखे चने लेआ । उन्हींको चबाकर मैं रात निकालदूंगी । मेरी ससुरालवाले अब नारायणगंजको लौट आये- है । कल मुझे चलकर मेरे घर रख आना । तुझपर मेरा क्या जोरहै । सुसरालवाले हजार दुःख सहैंगे और मुझे रक्खैंगे । मेरी सासु ननंद बडी अच्छी हैं । वे मुझे आखोंकी पलकोंपर रक्खैंगी । मुझे पहलेसे मालूम होता कि यहां मेरा इतना निरादर होगा तो मैं भूलकरभी यहां झकमारनेके लिये न आती । भैया मुझे क्षमा कर । मेरे लिये तुझे कष्ट हुआ । हाय ! मैं अभागिनीहूं ! जब वही मुझे छोडकर चलेगये तब इस मतलबी दुनियांमें मेरा कौनहै ? एक वह दिन था कि तू बडाभाई होनेपरभी उनके द्वारा अच्छी नौकरी पाकर लाभ उठता था—उनका आश्रय तकता था और एक आजका दिनहै कि मैं निकाली जातीहूं— उस घरमेंसे निकाली जातीहूं जहां मैंने जन्म लियाहै ! अब मुझे मालूम होगया कि इस घरमें मुझे हाथभर जमीन बैठनेके लिये भी नहीं मिल सकतीहै । जब भावज मेरे घरमें आनेहीसे अशकुन समझतीहै तब यदि वह सुनलेगी कि मैं उनका क्रिया कर्म करना चाहतीहूं तो वह काहेको मुझे फटकने देगी ? अच्छा हुआ जो उसने यह बात न सुनी । नहीं तो वह कभीकी झाडू मारकर निकाल देती और तेरीभी पूरी २ खबर लेती । पंडितजीके घरमें—माता जैसी गृहिणीके ऐसी बहू ? अच्छा हुआ जो वे विचारे जल्दी मरगये । नहीं तो भगवान जाने उनकी क्या दशा होती !"

भाई इसका उत्तर देनेभी नहीं पाया था कि इतनेहीमें मकानके भीतर दोस्त्रियां क्रोधसे चिल्लाती— गालियां देतीहुई घुसीं । इनमें एक प्यारी और

दूसरी उसकी मा थी। दोनोंने पंडित शत्रुसूदनपर, सुशीलापर गालियोंकी खूब गोलियां चलाईं। दोनोंने किवाडेकी ओटसे सुशीलाका एक २ शब्द सुनलिया था। बस दोनोंने मिलकर उसके अक्षर २ का खंडन किया। दोनोंने इन बहन भाईयोंको गालियां देते २ उनके माता पिताको गालियां दीं। सुशीलाके पतिको गालियां दीं और पंडित शत्रुसूदनके श्वसुर पंडित राधारमणको भी बुरा भला कहा। कहा अवश्य परन्तु उस बिचारेको गालियां देनेका कारण? कारण यही कि उन्होंने प्यारीकी रिपोर्ट सुनकर उसे फटकारा, खसमसे रूठकर आनेपर प्यारीको अपनें यहां न रहने दिया। प्यारीकी माने जब लडकीका पक्ष किया तो उसे भी खूब डाँटा और इसीलिये उनसे रूठकर दोनों यहां चली आईं। इस तरह दोनों मोरचोंपर चार पांच घंटेतक जब खूब गोलियां चलचुकीं तब बकते २ दोनों थक गईं। दोनोंके गोली बारूद पूरे होगये। और वेभी अब ऐसे निशानेपर लगकर पूरे हुए जहां आदमीकी जगह केवल मिट्टीका तोंदा था। इन दोनोंकी गालियोंका बहन भाईने कुछ उत्तर न दिया। दोनों बैठे २ चुपचाप सुनते रहे। जब माबेटी बकते २ थकने लगीं तब पंडित शत्रुसूदनने केवल इतना सा कहा किः—

"वृथा इतनी ख़फ़ा क्यों होतीहो? यह यहां रहनेको थोडीही आईहै? आज रातभर रहकर सबेरे अपने घर चली जायगी। तुम घबराती क्योंहो? ऐसे क्लेशमें मैंही इस विचारीको रखना नहीं चाहता और न यह यहां रहनेको आई है। यदि आजकी रातके बसेरेमेंभी तुमको कष्ट होता हो तो मैं इसे धर्मशालामें जा ठहराऊंगा।"

बस पंडितजीकी ये बातें सुनकर दोनों चुप होगईं। उनकी सास अपने घरगई और प्यारीने दुःखपाते बडबडाते क्रोध करते झिडकते रोटी करके सुशीलाको खिलाई।

प्रकरण १२.

ससुरालमें तिरस्कार ।

चाहे थोडेही दिन सही परंतु जिस घरमें सुशीलाने स्वर्गके समान सुख भोगा था, जहांपर दम्पती भोगविलासमें मग्न रहेथे, जहांपर सुशीला हथेलीपर रक्खी जाती थी, जहां सास ननंदके होतेहुएभी इसकी इकडंकी बजती थी वहां सुशीला इसबार रोनेके लिये गई । पहलीबार गौनेके समय यह जब आनंद भोगनेके लिये गई थी तब इस बार अवश्यही रोनेके लिये गई और गई क्या झखमारकर गई । इसने हजार चाहा कि अब ससुरालमें जाकर मुंह न दिखलाउंगी परंतु यह विचारी स्वाधीन थोडीही थी । इसे लाचारीसे जाना पडा । जाती नहीं तो क्या करती ? जब पीहरमें भौजाईने पैरभी न रखने दिया तब ससुराल जानेके सिवाय इसके लिये उपायही क्या था । यह भाईके साथ वहां गई । पंडित मोहनचंद्रजीके मरनेकी खबर तो गावँमें पहलेही होचुकी थी । इसके पहुंचनेपर उनके घरमें बस कुहराम मचगया । सास, ननंद, जेठानी, सखी, सहेली, नातेदार, अडौस पडौसकी, और जाति बिरादरीकी औरतें मिलकर भरपेट रोईं कोई अंतःकरणके दुःखसे रोई,कोई लोकलाजसे रोई, देखादेखी रोई, और कोई बनावटी आंसूसे रोई परंतु रोई इतनी कि बस्तीभरमें हलचल मचगई । खूब छाती पीटकर,शिर पीटकर,बाल नोंचकर रोईं और इस ढंगसे रोईं कि उनके रोनेका उनके पीटनेका खासा समा बंधगया। इतने परभी उनकी जातिकी एक बुढियाने कहा कि—"ऐसी कडी मौतको देखतेहुए स्यापा अच्छा नहीं हुआ" होता कहांसे ? उस गांवमें गुजरातकी तरह किरायेपर रोनेवाली मिलनेकी चाल न थी । खैर उस बुढियाने कुछभी कहाहो परंतु मेरी समझमें इसतरह रोना—इसतरह रोनेका समा बांधना अच्छा नहींहै।आदमी मरजानेका दुःख अवश्यही रोनेसे हलका होजाताहै और इसीलिये यह चाल पडीहै परंतु जिन लोगोंमें सरे बाजार औरतें खडी होकर रोतीहैं छाती पीटतीहैं जिनमें एक मरनेवालेका गुण कीर्तन करती जातीहै और गानेकी तरह उसके रागको

और सब दुहराती जातीहैं उन्हीमें किरायेपर रोनेवाली औरतें मिलतीहैं। इस गांवमें यदि इसतरहकी स्त्रियां मिलजातीं तो अवश्यही बुढिया स्वापेकी प्रशंसा करती। अस्तु वह चाहे प्रशंसा करै वा न करै परंतु उसदिन वस्तीभरमें शोक छागया था। गावंकी स्त्रियां शोकके लिये सुशीलाके पास और पुरुष पंडितजीके भाईके पास आये। इसतरह रोना धोना समाप्त हुआ और शास्त्रविधिसे पंडित मोहनचंद्रका क्रियाकर्मभी होगया। यदि यह कार्य वसंतपुरमें किया जाता तो सुशीला अपने हाथसे करती क्योंकि उसकी इच्छा ऐसीही थी और इसीलिये वह ससुराल आनेके बदले भाईके यहां गईथी। यहां पंडित मोहनचंद्रका कियाकर्म उनके भाईने सुशीलाको न करने दिया। उन्होंने किया और भाई मरनेका बहुत दुःख होनेपरभी उन्होंने बडी भक्तिसे किया। शास्त्रविधिसे क्रियाकर्म हुआ, ब्राह्मण भोजन-हुआ, जाति भोजन हुआ और इसतरह सारा काम समाप्त होनेपर उनके घर वाले अपने २ काममें लगकर पंडितजीको भूलने लगे।

औरलोग चाहे जैसे भूलें परंतु सुशीलासे कभी भूलना थोडाही बन-सकता था। वह खाते रोती पीते रोती, सोते रोती, और पहले सुखकी याद कर२ के रोती थी। उसका जीवन रोनेके लिये था और वह रोती थी परंतु इसतरह रातदिनका रोना और घरवालोंको पसंद न था। इस बातको सुशीलाभी जानती थी। उसने यही समझकर धीरे २ मनको शान्त किया। समय२ पर उसकी घरवालियोंने बडी बुढियोंने और सखीसहेलियोंने उसे समझा बुझाकर शान्त किया और इसतरह उसके दिन कुछकालतक जैसेतैसे अच्छीतरह बीतने लगे। महीना डेढ महीना अवश्यही अच्छीतरह बीता परंतु अभागिनी सुशीलाके भाग्यमें इतना-साभी सुख कहां! थोडा अवसरमें सुशीलाकी ननंदकी लडकीका विवाह आया। छोटी ननंद दलारी इसीलिये कुछ रुपया ऐंठने अपने ससुरालसे पीहर आई। उसके आतेही यहांका ढंग बिलकुल बदलगया। वह बातर में सुशीलाको झिडकने उसे फटकारने लगी। रामायण पढते समय जानकीजीके दुःख देखकर सुशीलाने दो चार बूंदें आंसू डाले और

दुलारीने उसे फटकारा। घरका धंदा करते २ विश्राम लेनेके लिये उसने दोचार मिनट खडे २ पडौसिनसे बातें कीं और उसने डांटा। दुलारीके बालकोंको रोटी देनेमें, उनका पायखाना साफ करनेमें आधे मिनटकी देरी हुई और उसने बकना आरंभ किया और अधिक क्याकहें जो दुलारी एकसमय भौजाई सुशीलासे रुपया, कपडा, खाना, पीना पानेके लिये, उसकी हरदम खुशामद करती थी वही अब उसका निरादर कर भाईके घरमें अपना डंका बजाने लगी। वह अपना दबदबा जमानेके लियेही ऐसा करतीहो तो सुशीलाको इससे कुछ प्रयोजन नहीं क्योंकि घरका धंदा करके आठपहरमें एकबार ज्वार, बाजरेकी, जौकी, बेझडकी जैसी रूखीसूखी, बासी कूसी रोटी मिले उसे खालेना और अवकाशके समय भगवत स्मरण करनाही उसे इष्ट था। उसे चाहे भगवान्‌का स्मरण, भजन और ईश्वरचर्चा इष्ट हो परन्तु दुलारी न मालूम क्यों स्वभावसेही इन बातोंको देख २ कर जलती थी। जिस समय सुशीला रामायण, सुखसागर, विनयपत्रिका अथवा इस तरहकी कोई पोथी पढनेको बैठती, जब वह दिनभर कामकी चक्कीमें पिसकर आठ पहरमें एकबार रातके नौ बजे खानेको बैठती दुलारी उसे अवश्य काम बतलाती और उसके आज्ञा पालनमें यदि एकभी मिनटकी देरी हुई तो उसपर गालियोंकी गोलियां चलाने लगती।

एक दिन सुशीलाको जुकाम होकर ज्वर होआया। ननन्दके कोपसे बचनेके लिये उसने किसीको जतलाया नहीं। वह ज्वरहीमें दिनभर काम करती रही। रातको जब कामकाजसे निपट चुकी तब उसने उस दिन कुछ खाया पीया नहीं। वह एक तो ज्वरसे पीडित थी और दूसरे दिन-भरकी थकी मांदीथी बस वैसेही नित्यसे घंटा आधघंटा शीघ्र सोगई। सोनेसे उसे जब निद्रा न आई तब पडी२रामायणका पाठ करने लगी। उसे समयसे शीघ्र सोकर पाठ करते देखतेही दुलारी आगबबूला होगई। उसने क्रोधके साथ कहा कि:—

" भाभी, तूभी बडी नटखटहै । अभीसे सोगई । देखो ! इसका आदमी कमाकर रखगया है जो अभीसे सोगई है । घरका काम अभी योंही पडा हुआहै और आप सोगई । सोतेहुए तुझे लाज न आई । ऐसा निपूता सोना क्या ? कामसे इतना घबडाना तो मैंने तेरी बराबर किसी में न देखा । खबरदार फिर कभी इतनी जल्दी सोई तो । मुझे तेरी ये बातें पसंद नहीं हैं ।"

बिचारी सुशीला ननंदका कोप उसके ताने सहते २ थकगई थी । वह पहलही दुःखिया थी और उसदिन उसपर दो दुःख विशेष आयेथे इस लिये अपने मनके दुःखको दबाते २ उसके मुखसे निकल-गया किः—

" बाईजी, तुमभी बडा अत्याचार करतीहो । जरा आंख खोलकर देखो तो काम कौनसा बाकीहै ? दिनभरकी थकी मांदी हूं आज मुझे ज्वर आयाहै । इसीलिये मैंने आज खाया नहीं । अब तुमही न्यायसे बत-लाओ कि आज कामसे निपटकर कुछ जल्दी सोगई तो मैंने कौनसा अनर्थ करडाला ? मेरी जगह यदि तुमही होती तो क्या तुम न सोजाती ? तुम तो ऐसेमें अंगुलीभी न हिलाती । "

इतना सुनतेही दुलारी बहुत भडकी । क्रोधसे उसके होंठ फडफडाने लगे उसने लालपीली होकर कहाः—

" देख रांड ! मुझे अपनीसी करने आई है । अपने खसमको खाकर मेरा बुरा चींतने आई है । रातकी वेला मुझे कोसतीहै । मैं तो पहलेही फूंक २ कर पैर रखती हूं । गालियां देना हो तो अपने भाई भतीजों को दे । इन्हीं लक्षणोंसे तो भौजाईने घरसे निकाल दिया । आई है रांड ! हमारे भाईको खाकर इस घरका चौपट करने । जा हमारे घरमेंसे, निकल हमारे घरमेंसे । "

" बाईजी, जब मुझसे रुपया, कपडा पाती थी तब खुशामद करकरके मेरे तलुए चाटतीथी और आज मुझ दुखियाको घरसे निकालतीहो । मैं तुम्हारे ससुरका क्या खातीहूं जो मुझे निकालती हो । मैं इस घरमें

व्याही आईहूं । कुछ मोलकी लीतो हूँही नहीं जो मुझे निकाल दोगी । घर मेरा नहीं है तो तुम्हाराभी नहीं है । घर मेरी सासकाहै और रोटी कपडेका जन्मभर मेरा भी हिस्साहै । "

" हां हिस्साहै ना ! तेरा खसम धरोहर रखगया है । देखोरे हिस्सा मांगने आईहै । हिस्सा ! देखा अम्मा तैने ? तेरी बहू तुझसे हिस्सा मांगतीहै समझलेना । यह पढी लिखीहै । जो तू हिस्सा न देगी तो यह तुझपर नालिश करके हिस्सा लेलेगी । समझा तैने । समझलेना । खूब समझे रहना । बहू तुझपर नालिश करके हिस्सालेगी । तुझे अदालत जाना पडैगा और नाहीं करैगी तो कैदभी भोगनी पडैगी । अच्छी सुपूत बहू है जो सासको कैद करावैगी । "

सुशीलाकी बहरी सासने ननंद भोजाईकी लडाई कुछ भी न सुनी वह बहुत देरतक बैठी २ देखतीरही । देखते २ जब उससे न रहागया तब उसने अपनी लडकीसे पूंछा । दुलारी भौजाई से पहलेही चिढ तो रही थी । बस उसने बहुत कुछ उलटा सीधा पिरोकर सुशीलापर सासको क्रुद्ध कर दिया । अब लडकीके साथ माभी मिलगई । दोनोंनें मिलकर सुशीलाको बहुत गालियां दीं, दोनोंने मिलकर उसे बहुत मारा, उसकी रामायण छीनकर फेंकदी. उसकी माला तोड डाली और उसकी गरदन पकडकर घरसे निकाल दिया । लडाई बढनेके डरसे, मुहल्लेवाले सुनेंगे तो क्या कहेंगे--इस डरसे सुशीलाने एक शब्दभी मुखसे न निकाला। वह वहांसे निकलर दर्वाजेमें जा बैठी । वहां बैठे २ बहुत देरतक रोतीरही जब वह कुछ जोरसे रोने लगी तब ननंदने उसे फिर डांटा दो एक लकडी भी जडदीं । अब वह विचारी क्या करती ? रोनेके सिवाय स्त्रियोंके पास शस्त्र ही क्या है ? जब उसने समझा कि यह शस्त्र भी छीनाजाता है तब एकवार उसने आत्मघात करनेका विचार किया इस विचारसे वह कुएमें गिरनेके लिये उठीभी परन्तु कुछ सोच समझकर ठिठकगई । उसने अपने मनमें कहाः--

"भगवान्‌को यदि मुझे मारनाही होता तो पतिके साथही मुझे क्यों न उठा लेता मेरे पूर्वजन्मके कोई भारी पापका दंड देनेके लिये मुझे जब उसने जिलायाहै तब आत्मघात करके एक महापातक और गले क्यों बांधूं ? जीकर ब्रह्मचर्य पालन करनेसे परलोकमें प्राणनाथके फिर दर्शन करनेकी जो आशाहै वह धूलमें मिलजायगी। और फिर यही क्या निश्चय है कि कुएमें गिरनेसे तो मैं अवश्य मरजाऊंगी। यदि जीती बचगई तो सरकार सजा देगी। जियूं चाहे मरूं प्राणेश्वरकी बदनामी होगी, दोनों कुलोंको भारी कलंक लगेगा और परमेश्वरके यहांसे दंड मिलैगा सो जुदा।"

प्रकरण १२.

जेवर लेलिया।

"उस दिन भाईने चाहे भाभीको लोकलाजके डरसे रखलिया परंतु वह कहांतक लोकलाज बचावेंगे। वह जानहारको कहांतक रोकेंगे। वह एक दिन जायगी और अवश्य जायगी। अम्मा! भाभी अब वह भाभी नहीं रहीहै जैसी भाईके समयमें थी। बस और मैं क्याकहूं ? कहनेमें मेरीही जांघ लजातीहै।"

"हैं ! कह तो सही बात क्याहै ? तेरी बात सुनतेही मेरा कलेजा धडकने लगाहै। तेरे कहनेसे मालूम होताहै कि उसकी किसीसे कुछ सैनपैठहै परंतु मैं इस बातको झूंठ समझतीहूं। तेरी उससे लडाई होगई है इसीलिये तूं उसपर कलंक लगातीहै। बस चुपरह ! खबरदार इसतरहकी झूठी सच्ची बातें बनाई तो।"

"अच्छा मैं झूंठीही सही। फिर तू मुझसे पूंछती क्योंहै ? तूं मेरी बात सुने विनाही मुझे झूंठी बतलातीहै तो बतलायाकर परंतु देखलेना। थोडेही दिनोंमें यह तेरा बुढापा बिगाडकर किसीके साथ न निकलजाय तो मेरा नाम फेरदेना। तूं मेरी बात आज नहीं सुनतीहै तो जगत तुझपर थूंकै तब सुनियो।"

"अरे सुभागिनी ! बकती क्याहै ? कह तो सही बात क्याहै ?

" बात कुछभी हो तुझे क्या ? तूं तो उसे भली समझतीहै ना । फिर मैंही अपने मुंहसे क्यों कहूं ! तूं भोलीभालीहै ! तूं क्या जाने कि वह जन्मसेही पहुंची हुई है ?"

"हैं ! जन्मसे ? क्या जन्मसे पहुंची हुई है ?"

हां हां ! ! जन्मसे ! जन्मसे पहुंची हुई न होती तो व्याहसे पहले अपने पीहरहीमें छिपछिपकर मेरे भाईसे बातचीत न करती, उनसे मिठाई गहना, किताबें, कपडे न लेलियाकरती । "

" यह निर्लज्जता अवश्यहै परंतु आजकलक पढेलिखे आदमी इन बातोंमें बुराई नहीं समझते और मेरी समझमेंभी बेशर्मीके सिवाय बुराई, क्याहै ? बरन एकतरह अच्छा है जो विवाहसे पहलेही दोनोंका प्रेम होजाताहै । "

"तूभी सठियागइ । भला ऐसी बेशर्मीसेभी कहीं प्रेम होताहै । खैर प्रम होताहै तो जानेदे न सही परंतु पराये आदमीसेभी"

बस इतना कहकर दुलारी चुपहोगई । उसके चुप होनेपर माताको संदेह औरभी बढा उसने असल बात जाननेकेलिये बेटीकी बहुत खुशामद की छतीसी बेटी सहजमेंही कहदेने वाली थोडीही थी । उसने बहुत देरतक माको उडाया, बहुतदेरतक और २ बातोंमें टलाया और अंतमें जब समझ लिया कि अब अपना कथन तीरकी तरह माताके कलेजेके पार होजायगा तब बोलीः—

"अच्छा जब तूं पीछेही पडगईहै तब कहतीहूं । सुन । और बात तो क्या कहूं ? यह पहली बार गौने आई तबकी बात तुझे यादहैं ना ? उस समय इसने अपनी फजीहती बचानेके लिये ही तो भाईको बहकाकर नौकरोंका रोज़गार बढवायाथा । क्यों समझी ?"

"हां मुझे याद तो आया परंतु उस समय तो बात झूंठी निकली थी ना ?"

" अरे झूंठी क्या ? यह सब इसका प्रपंच है । भला उस समयकी बात झूंठीथी तो अब? अब यह क्यों छिप २ कर जानकीके आदमीसे बात-चीत करती है ? यदि सचमुचही वह उसका जीजाहै तो उससे खुलाखुली बातें क्यों नहीं करती ? सबके सामने यह हाथभरका घूंघट निकालतीहै और जब जानकीके यहां जाकर उनसे अकेलेमें मिलतीहै तब खूब हंस २ कर बातें करतीहै । इससे अधिक मैं क्याकहूं ? तूं मेरी माहै । उसे जो काम करतेहुए लाज नहीं आती वही कहतेहुए मुझे लाज आतीहै । हमारे करम फूटगये । और मैं क्याकहूं ? यदि अभी भाई होते तो इसे मारजूते निकाल देते । यह पढी लिखी हैना । इसे डर किसकाहै? एक जरासा भाई का कांटा था सोभी निकलगया और वह थ तबही क्याथा ? इसने न मालूम कैसे उन्हींको उल्लू बनालियाथा । पढी लिखी स्त्रियां बडी छतीसी होतीहैं तबही तो बडे लोगोंने लुगाइयोंका पढना बुरा बतलायाहै । "

दुलारीकी बात मातापर असर करगई । उसने बेटीके कहनेसे समझलिया कि छोटी बहू जब यहां नहीं आईथी तबहीसे इसका रघुनंदन (जानकीके आदमी) से मेलहै । दुलारीने केवल मातासे इतना कहकरही संतोष न किया वरन उसने मिसरानीके इजहार दिलाकर, माताके सामने कहलादिया कि बहू जानकीको छिप-छिपकर कुछ न कुछ दिया करतीहै, जब कभी अवसर पातीहै अंधेरे उजेले उसके यहां जातीभीहै । इसतरहके प्रपंचसे जब माको सुशीलाका व्यभिचार अच्छीतरह निश्चय होगया तब उसका क्रोध भडका । उसने खूब अपना करम ठोका वह भीतरहीभीतर बहुत कुछ रोई धोई और उसने अंतमें क्रोधकरके दुलारीसे कहाः—

"बडा लडका चाहे जो कहै । वह बाहर आवै तब चाहे जो मुझसे कहलेगा परन्तु मैं इस रांडका अभी हाथ पकडकर निकाले देतीहूं । फिर जैसा होगा वैसा देखलिया जायगा ।"

"है हैं! मा यह क्या करती है? इसमें फजीहती किसकी होगी? किसके कुलमें कलंक लगैगा? जरा सोच समझकर काम कर।"

"अच्छा तब मैं उसेही बुलाकर पूछतीहूं कि रांड तैने ऐसा क्यों किया?"

"नहीं२ ऐसाभी न कर। वह बडी चलतीहुई रकमहै। अभी हजार बातें बनावैगी और तुझेही झूंठी ठहराकर लज्जित करदेगी। ऐसीसे कुछ चाल चलना चाहिये जिससे न सांप मरै और न लाठी टूटै।"

"अच्छा तो बता तब वह चाल कौनसीहै? मैं साठवर्षकी होगई परंतु कभी चाल नहीं सीखी। अब इस लडकीसे चाल सीखनी पडैगी। आज कलकी लडकियां बडी चालबाज होतीहैं। भला तू इतनी चाल किससे सीखीहै?"

"हैं तू मुझेही चालबाज बतलातीहै? तो जा अब मैं कुछ न करूंगी। तेरी इच्छा हो सो कर। मुझे क्यापडीहै मैं तो चारदिनमें अपने घर चली जाऊंगी। बदनामी तो तेरीहै। तू जवान पढा लिखा लडका मरजानेपरभी बदनामी सहनेके लिये जीतीहै।"

"अरी तू तो जरासी बातमें रूठगई। भला बतलातो सही वह कौनसी चालहै?"

"चाल यही है कि काम ऐसा करना चाहिये जिसमें न सांप मरै और न लाठी टूटै—वह घरसे निकलजाय उसका जेवर सब लेलियाजाय और उस जेवरको बेचकर तू मेरेयहां विवाहपर भात देसके।"

"हां२! बात तो ठीकहै तेरा भैया रुपयेकी तंगी बतलाकर इस समय भात देनेमें आनाकानीभी करताहै।"

"वाह! वह आनाकानी क्यों करताहै? तेरे यहां तो उमरभरमें भात देनेका यही काम पडाहै। वह खर्चसे तंगहै तो मैं क्याकरूं? मैं भात न्योंतने आईहूं सो क्या कोरी जाऊंगी? ऐसा कभी न होगा। मैं लेकर जाऊंगी और दोनोंका जुदा २ लूंगी। भातमें बडेभाई अपना हिस्सा दें और छोटेके हिस्सेका मैं उपाय बतलाही चुकी। हां! इतना होसकताहै कि बडे भैया

यदि खर्चसे तंगहैं तो अभी थोडा दो । छोटी भाभीका जेवर बेंचकर वा गिरों रखकर मुझे भात दियाजाय। उसे मोटे खाने और मोटे पहननेके सिवाय अब जेवरसे मतलबही क्याहै? सोभी वह नेकचलन रहती तब।"

"सो सब ठीक परंतु उससे जेवर लेनेकी चाल कौनसी है? सो तो बतला।"

"तूं इस बातकी चिन्ता न कर। यह काम मैं सब करलूंगी। तुझसे मैं जैसे कहूं वैसे करना। अपने भोलेपनसे मेरे काममें पत्थर न डालदेना।"

"अच्छा बीर! तू कहैगी सो करूंगी परंतु अब ऐसी रांड घरसे निकलजाना चाहिये। जबसे तैंने उसकी वह बात कही उसकी सूरत देखकर मेरे कलेजेमें आग लगजाती है।"

"हां हां!! यही मेरा हालहै। मैंभी चाहतीहूं कि उसका यहांसे काला मुंह हो और ऐसा कुकर्म करनेपर वह दाने २ के लिये तरसे। तबही रांडको इस घरकी इज्जत धूलमें मिलानेका मजा मालूम होगा।"

इस तरहकी बातचीत होनेके बाद दुलारीने पहले भाईको बहकाना चाहा परंतु भाई सहसा उसके झांसेमें आनेवाले आदमी नहींथे। वह इस बातको जानतीथी इसलिये उसने भौजाईके कान भरे। भौजाई एकबार अपनी देवरानीपर इसतरहका अत्याचार करनेको राजी न हुई परंतु जब उसे यह मालूम हुआ कि यदि छोटी बहूका जेवर न लिया जायगा तो उसका जेवर बेंचकर भात देना होगा तब वह ननंदके प्रपंचमें शामिल होगई। इस प्रपंचमें शामिल होकर वह सुशीलाके स्नेहको भूलगई। अपना जेवर बचानेके लालचसे उसनेभी दुलारीकी बातमें आकर अभागिनी सुशीलापर अत्याचार करनेका मनसूबा किया। दोनोंकी सलाह पक्की होनेपर सुशीलाकी जेठानीने एकदिन अवसर साधकर पतिसे कहाः—

"कुछ फिक्रभीहै? ननद भात न्योतने आई है। विवाहमें अब केवल एकमहीना रहगया। भातमें लगभग पांचसौ रुपये खर्च होंगे। आपकी जो कमाईहै वह आप जानतेहीहैं। इतने दिन मैं उसीमेंसे काम चलाती थी अब देवरानीकाभी खर्च बढाहै और जन्मभरकेलिये उसका बोझा मेरे

ऊपरहै। फिर भातकेलिये क्या मैं अपना शिर बेचूंगी आपको भात देना हो तो दो और न देना होतो न दो। मुझसे कुछ नहोगा।"

"इससमय जवान भाई मरगयाहै। अभी उसकी राखभी हमारे मुंहमेंसे नहीं निकलीहै। हमारे घरमें अभी शोकके दिनहैं। हमसे भातवात देना नहीं बनैगा। दुलरियाको समझादे। बडी भानजीके विवाहपर न बनै तो न सही हम छोटी भानजीके विवाहपर देंगे।"

"शोककी बात सच्चीहै परंतु दुनियादारीके लिये बुरा और भला सब करना पडताहै। भात नदोगे तो घरमें कलह होगा। आपकी बहन रूठजायगी आपकी मा नाराज होगी और जातवाले बदनाम करेंगे। जन्मभरके लिये ताना रहजायगा। इस घरमें ऐसा कभी नहीं हुआहै। भात न देकर लोगहँसाई न करो।"

"तो खैर भात देंगे परंतु इस समय रुपया कहांसे आवैगा? कोई दोसौ रुपये तो छोटे भैयाके क्रियाकर्ममें खर्च होचुके, चारसौ पहलेहीका देना है। मुझे मिलताहै सो तो तूं जानतीहीहै। फिर क्या प्रबंध करें? अच्छा हवेली गिरों रखदेंगे। परंतु इसमेंभी कष्ट होगा। मकान गिरों रखकर भातदेना तो अच्छा नहीं। खैर तेरा जेवर बेंचकर अभी काम चला लिया जायगा फिर तुझे बनवा देंगे।"

जेवर बेंचनेका नाम सुनतेही श्रीमती लाल होगई। क्रोधके मारे उसके होठ फडकने लगे, उसकी आंखें लाल होगई और उसने तिवरियां चढा कर कहाः-

"मेरा जेवर! मेरा जेवर बेंचना नहीं होगा। आगमें जाय तुम्हारा भात और तुम्हारी बहन। एक भली बात कहनेपर मेराही गला घोंटनेको तैयार होगये, वाहजी! तुमभी बडे भोलेहो। क्या मुझे अपनी कमाईमेंसे बनवादियाहै जो मेरा जेवर बेंचतेहो। मेरे पास जो जेवर है वह चढावेकाहै। उसमें हाथ डालनेवाले तुम कौन होतेहो। दैवसंयोगसे तुम्हाराही कुछसे कुछ होजाय तो मैं अपने बच्चोंको क्या खिलाऊं?"

पिछली बात सुनकर पंडितजीके कलेजेमें बडी चोट पहुंची। उन्होंने समझ लिया कि यह केवल धनकी भूखी है। मेरे प्राणोंसेभी जेवर इसे प्याराहै। जगत्में जितनी स्त्रियां हैं वे सब सबसे बढकर अपने सौभाग्यको समझती हैं परंतु इसे रांड होनेकाभी कुछ डर नहीं। वह स्त्रीको बातके उत्तरमें गर्महोकर बोलेः—

अच्छा रहनेदे तेरा जेवर मैं मरजाऊं तब उसे बेंचबेंचकर खाना मुझे नहीं चाहिये। भगवान् कुछ न कुछ ढंग निकालदेगा। भाडमें जाय तेरा जेवर और तूं।"

पंडितजीका कोप देखकर उसने समझलिया कि अब मामला बिगडना चाहताहै इस लिये वह नर्म पडगई। उसने आखोंमें आंसूं लाकर पूंछा—

"प्राणनाथ इतनी रिस क्यों करतेहो? मैंने ऐसा क्या कहदिया?"

"तैंने क्या कहदिया? तूं नहीं जानती तैंने क्या कहदिया? बडी भोलीहै! तैंने कहदिया ना कि तुम्हारा कुछसे कुछ होजाय.... तू मेरा मरजाना चाहतीहै।"

"हाय! हाय!! मैंने यह कब कहा? मैं चाहती हूं? आपकी दासी चाहतीहै? मेरे तो आप सर्वस्वहैं। क्या मैं ऐसा चाहूंगी? मैं अपने हाथसे अपना करम फोडने चाहूंगी? भगवान् न करै यदि ऐसा हुआ तो उसी दम मरजाऊंगी। आपने भी भली अंगरेजी पढी [जरा मुसुंकुराकर] क्या बी, ए. पास करके यही सीखाहै? ऐसा कहनेसे मेरा मतलब यही था कि आपका रोजगार बिगडजाय भला मैं अपनेही लिये बुरा चाहूंगी। जब आप मेरे मालिक हैं तब जेवरभी आपकाही है जेवर क्या यदि आप मुझे भी बाजारमें खडी रखकर बेंचदें तो मैं बिकनेको तैयारहूं परन्तु "तोसा सो भरोसा है" और उपाय होते हुए अपने पासकी चीज देदेनाभी तो बुद्धिमानी नहीं है भात देना बो साझेका काम है इसमें जेवर बेंच दोगे तो अपने लडके लडकीके विवाहमें कहांसे लाओगे? घरमें क्या खजाना रक्खाहै?"

"अच्छा तो बतला और क्या उपाय है ?"

"सोचो तुमही उपाय । पढे लिखे हो ? मुझ कुपढसे क्या पूछतेहो ? मैं तो उस समय बतलाती जब आप मेरे जेवर लेनेकी बात न कहते। अब मैं क्यों बतलाने लगी। बस मैं जातीहूं। मेरा बच्चा रोताहै चूल्हेपर दूध उफन जायगा, बिल्ली लड्डू खा जायगी, । मैं जातीहूं । सोचाकरो बैठे२!"

इतना कहकर ज्योंही वह नयनबाण मारती,मुसकुराती, होठोंसे हंसीको दबाती उठी पंडितजीने उसका हाथ पकडलिया। उसने फिर दो एक कटाक्ष कर अपना हाथ छुडाया और वहांसे चलदी अब पंडितजीको लेनेके देने पडगये। उन्होंने वीस मिनटतक उसके पीछे २ फिरकर जैसेतैसे उसे राजीकिया। जब उसने समझलिया कि पति बिलकुल अपने हाथमें आचुका तब बोली:-

"दोसौ रुपये आप देवरजीके क्रियाकर्ममें खर्च करचुके हो सो देवरानी से लेनाहैही। उन्हें अब जेवर रखकर क्या करनाहै वह जन्मभर खावै पहने और घरमें बैठीरहै। उनके पास जो कुछहै सो अंतमें (अपने लडकेकी ओर संकेत करके) इन्हींका है फिर उनके जेवरसे भात देने और ऋण चुकानेमें क्या हानिहै ? रुपयोंका ब्याज लगनेमें क्या उनकी हानि नहीं है। वह और हम क्या अब जुदे२ हैं ? हमारा और उनका दुःख सुख एकहै।"

"भाईके क्रियाकर्मके खर्चका दंड तो मैं उसपर कभी न डालूंगा। ऐसे कामके रुपये मांगता हुआ मैं क्या अच्छा लगूंगा यह काम मुझसे न होगा।"

"अच्छा यह न होगा तो भातके लियेभी उससे सहायता न लोगे।"

"इसके लिये भी उस दुखियासे मांगनेमें मेरा जी नहीं चाहता।"

"यह मैं कब कहतीहूं कि आप मांगो। इसका प्रबंध मैं करलूंगी। आप केवल हां कहदो।"

"हां! तूं प्रबंध करसके तो करले। परंतु वह विचारी दुखिया पहलेही माता और दुलरियाके अत्याचारसे दुःखित होचुकीहै। वह काहेको स्वीकार करैगी।"

"हां, उनपर अत्याचार तो हुआहै परंतु आप उन दोनोंको समझा क्यों नहीं देते।"

इस बातचीतके बाद पंडितजीने एकदिन रात्रिको व्यारूसे निश्चिंतहो माके पास बैठकर सुशीलाकी शिफारिशकी। माको समझाया, बहनको फटकारा और सुशीलाका आश्वासन किया। पंडितजीके सुशीलाकी हिमायत करनेपर मा और बहन उनसे नाराजभी हुई परंतु उन्होंने समाझा बुझाकर सबका मेल करादिया। जब आठ दश दिन शान्तिसे,किसी तरहके लडाई झगडे बिना निकलगये तब जेठानीने सुशीलाकी खातिर कर २ के उसे फुसलाना आरंभ किया। भोली सुशीला न जानसकी कि जेठानी "शहद्की छुरी" है। उसने मुखिया जेठानीकी बातोंमें आकर अपने जेवरकी पिटारी उसे देदी। केवल जेवरही नहीं बरन उसके सिवाय जो कुछ उसके पास रुपया पैसा था वहभी देदिया। जेठानीने कपटसे और जेठने अपनी सज्जनतासे सुशीलासे स्वीकार करलिया और दशपांच भले आदमियोंके सामने स्वीकार करलिया कि इस पिटारीमें जो कुछ है वह सुशीलाका है। इसे जब यह चाहैगी पासकैगी। हमारा इसपर कुछ दावा नहींहै। उन्होंने सुशीलासे पूंछकर उसमेंसे उसके पतिके क्रियाकर्मका ऋणभी चुकाया और भातके लियेभी खर्च किया परंतु भोली सुशीला जेठानीके कपटको न समझसकी। और इसतरह अपने प्राणेश्वरको खोदेनेके डेढमास बाद अपने पेटकोभी फोडबैठी। पतिको खोदेनेपरभी अबतक उसके पास इतनी पूंजीथी कि जिससे जन्मभर वह सुखसे पेट भरसकतीथी परंतु अब उसके लिये रोटीकी खातिर औरोंके मुंह ताकनेका समय आया।

प्रकरण १४.

ससुरालसे निकालीगई।

पंडित मोहनचंद्रकी मृत्युका शोक होनेपरभी आज घरमें बधाइयां बजरही हैं। जगह २ बंदनवारें बंधी हैं, घरके बाहर नक्कारे शहनाई झांझ बजरहीहैं। रंगबिरंगे जरीके सादा बढिया घटिया कपडे पहने युवतियां झुंडकेझुंड इकट्ठी होकर बधाईके गीत गारहीं हैं। जाति बिरादरीके बालक युवा वृद्धोंका आवागमन लगाहुआहै। आनेवालोंको पान दियाजाताहै।इलायची दीजातीहै,सुपारी दीजातीहै उनके इतर लगाया जाताहै और इस तरह उनका आदरसत्कार कियाजाताहै।सब लोगोंको भातकी सामग्री दिखानेके लिये आंगनमें सजाई गई है।एक थालमें एकसौएक रुपया चहरेशाही, दूसरीमें लडकीके, दामादके लिये कपडे, तीसरीमें दुलरियाके लिये, उसके पतिके लिये कपडे,दोतीनमें समधियोंके लिये कपडे और चार पांच थालोंमें मेवा मिठाई धरीहुई है। जो आताहै भातका सामान देखकर प्रसन्न होताहै, प्रशंसा करताहै और बस्तीभरमें "भात अच्छादिया, भात अच्छा दिया!" की वाहवाही फैलरहीहै। कोई कहताहै–"बस्तीभरमें ऐसा भात आजतक किसीने नहीं दिया" कोई कहताहै–"यदि आगे किसीने दिया भी हो तो हमने इतना भारी भात अबतक नहीं देखा" कोई कहताहै–"दिया तो क्या हुआ,पंडितजीने इसमें खर्च थोडाही कियाहै। इसमें पंडितजीकी क्या प्रशंसा है? यह तो सब सुशीलाके जेवरकी करामातहै।" कोई कहताहै–"सुशीलाको धन्यहै! वह वास्तवमें सुशीलाहै। उस विचारीने छातीपर वज्रका घाव सहकर भी घरकी प्रतिष्ठा रखनेके लिये अपना सारा जेवर देदिया।" कोई कहताहै–"वास्तवमें सुशीलाको धन्यहै। यदि वह अपना जेवर देनेमें जरासीभी नाहीं करती तो पंडितजीका मुंह बिगडजाता।" कोई कहताहै–" अजी मुहँ क्या बिगडजाता? उनकी मजाल नहीं थी जो इसका चौथाईभी भात देसकते।" कोई कहताहै–"हैं? चौथाई चौथाई क्या बिलकुलभी देना कठिन था। वह बिचारे पहलेही कर्जके

बोझसे लदरहे हैं। " कोई कहता है-" उन्हें बिचारे न कहो। बिचारे होते तो भोली सुशीलाको बहकाकर उसका जेवर कैसे लेलेते। " कोई कहताहै-" इसमें पंडितजीका दोष नहीं है। उसने अपनी इच्छासे दियाहै। " कोई कहताहै- " अजी! इच्छासे क्या दियाहै। औरतोंने बहंकाकर लेलिया।" कोई कहताहै-" बहंकाकर लियातोहै परन्तु उस बिचारिको कष्ट न दें तब! "

जिस समय बस्तीमें इस तरहकी चर्चा होरहीथी घरके एक कोनेमें सुहासिनी स्त्रियोंके पास बैठीहुई सुशीला उनके मंगलगीत सुन रहीथी। पतिकी मृत्युसे यद्यपि उसके हियेमें होली जल रहीथी परन्तु जेठ जेठानीके, सासके, ननंद ननदोईके सुखमें अपना दुःख न प्रकाश हो इसलिये वह अपने मनकी बात मनहीमें छिपाकर बाहरसे हर्ष प्रकट करती हुई इस हर्षके काम काजमें लगी थी। काम करते २ उसकी आंखसे एकाध आंसू निकलगया। उसका आंसू कुछ इसलिये नहीं निकलाथा कि वह ननंदके सुखको देखकर दुःखित हुई हो परन्तु भीतरसे उसका हृदय फट रहाथा, ताजा घाव था। यदि इसलिये दबाते २ एकाध आंसू टपक पडा तो उस बिचारीका दोष क्या? परन्तु आंखोंमें आंसू आनाही उसका बडा भारी दोष समझागया। आनेवाली स्त्रियोंको पान इलायची देनेके लिये सुशीलाके हाथमें जो थाल था उसे छीनते हुए ननंद दुलारीने सुशीलासे गर्जकर कहाः--

" निकल यहांसे, रांड मेरे मंगलके समय रोने आई है। रोना होतो अपने पीहर जाकर अपने भाई भौजाईको रो। हरामजादी, छिनाल कहींकी। मेरे सुखको देखकर जली मरतीहै। तैनेभी बेटे बेटी करममें लिखाये होते। अब रोनेसे क्या होताहै। "

सुनतेही हाथका काम छोडकर सासभी " निकलजा, निकलजा! " कहती हुई आई। एकने उसका हाथ और दूसरीने उसकी टांग पकडी दोनों उसे लातोंसे, घूंसोंसे मारती हुई जाति बिरादरीकी स्त्रियोंके बीचमेंसे घसीटती हुई पोलतक ले आईं। ननंदने कहाः-" मैं तो पहले-

ही कह चुकीथी कि ऐसे मंगल समयमें इस विधवाका: क्या कामहै । ऐसे समय तो विधवाका मुंह देखनाभी पाप है। मैं तो पहलेही चाहतीथी कि यह इस समय यहांसे अलग होजाय परन्तु बडी भाभीने मेरा कहना न माना । मैं अपनी लडकीका व्याहकर हजार वर्षकी नीव देतीहूं और यह रांड इस हर्षके समय रोकर अपशकुन करतीहै। निकल हमारे यहांसे । छिनाल कहींकी ! औरोंसे आंखें लडानेमें तुझे अपना आदमी याद नहीं आता और इस शुभ समयमें याद आयाहै । " यह सुनकर दुलारीको मानेभी इन्हीं बातोंको दुहराया । मा बेटीकी ओरसे गालियोंके गोले बरसने लगे । जब तक सास ननंदने और २ गालियां दीं सुशीला चुपचाप सुनती रही । उसने उत्तरमें उनसे एक शब्दभी न कहा परन्तु जब उन्होंने इसपर व्यभिचारका कलंक लगाया इससे बोले विना न रहागया । इसने रोते २ कहा:--

"अजी मैं हाथ जोडकर कहतीहूं । और गाली तुम्हारी मनमें आवे सो दो परन्तु ऐसी झूंठी बातें कहकर मुझपर कलंक न लगाओ । मैं कहीं मुंह दिखाने योग्य न रहूंगी । हे भगवन् ! ऐसी बातें सुनानेसे पहलेही मुझे मौत देदे । हे धरती माता ! अभी मुझे रस्ता देवे तो मैं उसमें घुस जाऊं । हे प्राणनाथ ! क्या मुझे ऐसेही झूंठे कलंक सहनेके लियें छोडा है। ?हे राम ! मैं अब क्या करूं ! हे दीन बंधु ! मुझ दीनपर दया करो । "

" देखो रांड, रोकर सच्ची बनतीहै । छिनाल कहींकी । निकल हमारे घरमेंसे । चलीजा उसीके यहां जिससे तेरा प्यारहै । अरी रांड छःमहीने तो कलसे रही होती । लुच्ची कहींकी । अपने प्राणनाथको याद करतीहै तेरा प्राणनाथ तो वह है ना वह.......निकल, निकल, अब हमारी फजीहती न कर । निकलजा यहांसे अपना काला मुंहकरके । "

" हां, निकलतो जाऊंगी परन्तु दो बात लेकर निकलूंगी । एक इस कलंकका मुद्दा और दूसरे अपना जेवर। पहले फुसलाकर मेरा जेवर

छीनलिया और अब मुझे निकालतीहो यदि मैं अपना जेवर न देती तो लोग देखते कि कैसा भात लेकर यहांसे जाती।"

"हां मुद्दा और जेवरके लिये अब तू अदालतमें हमपर नालिश करना [भाईसे] देखोजी, भैया यह तुमसे जेवर मांगतीहै। छिनाल कहींकी। तुझ छिनालको जेवर! जेवर क्या तेरे बापका था जो मांगतीहै।"

सुशीलाके जेठ जो इन लोगोंका हल्लागुल्ला सुनकर वहा आखडे हुएथे दुलारियाकी बात सुनकर सन्न रहगये। उन्होंने बहनको एक ओर लेजाकर इस लडाईका मतलब पूंछा। उसने अन्तःकरणका द्वेष छिपाकर सुशीलाके मिथ्या व्यभिचारकी बात भाईके कानमें डालदी। मानें इस बातकी तसदीककी और पंडितजीकी स्त्रीने इसपर खूब रंग चढाकर पक्का करदिया। भोले पंडितजी यह न समझसके कि सुशीलाको निकालनेके-लिये तीनोंने प्रपंच रचाहै। उन्हें अपनी बुद्धिकी अपेक्षाभी अपनी जोरू-पर अधिक विश्वासथा, वह उसके कथनको वेदवाक्य समझतेथे। जब उसने कहदियाकि-" हां हां! मैंने इन्हें....से बातचीत करते देखाहै।" तब पंडित राधामाधवके हृदयमें यह बात लोहेकी लकीर होगई। उन्होंने सब घरवालोंके सामने मुंह खोलकर सुशीलासे कहदिया कि:-" अब तेरा हमारे घरमें गुजारा नहीं है। ऐसा कलंक प्रकट होजानेपर तुझे हम अपने घरमें नहीं रखसकते। तेरी इच्छा हो जहां जा। हमें अब तेरा इसघरमें रहना स्वीकार नहीं। जा हमें अब अपना मुंहभी मत दिखलावे। रही जेवरकी बात सो जेवर वास्तवमें तेराहै परंतु वहभी अब तुझे नहीं मिलसकता। तेरा जेवर तबहींतक था जबतक तैंने ऐसा खोटा कामकर हमारे बापदादोंको बदनाम न किया। हां! जो जेवर तूं अपने बापके यहांसे लाईहो उसे अवश्य लेजा। शेष जेवर तुझे नहीं मिलैगा। वह हमारे घर-सेही दियाहुआहै और उसी समयतकके लिये दिया गयाहै जबतक तू हमारे कुलकी इज्जत न बिगाडती।"

सुशीला यद्यपि लाजकरके जेठके सामने कभी किसीसे बोलती न थी परन्तु उस दिन अपने पर भारी कलंक लगता देखकर उसने पंडित राधामाधवसे हाथजोडकर, रोते २ कहाः—

"मुझपर इन तीनोंकी शत्रुताहै। आप जरा निश्चयकरके मुझे निकलनेकी आज्ञादें। ये तीनों मिलकर मुझे निकालना चाहतीं हैं बस इसलिये इन्होंने प्रपंच रचाहै। आप जो कुछ करें तहकीकात करके करें। यदि मैंने वास्तवमें पापकियाहै तो मैं घरसे निकालने योग्यही क्यों प्राणदंडके योग्यहूं। आप निश्चय जानिये सुंदरीकी लडकी होकर मुझसे कभी ऐसा पाप न होगा। आप इनसे इसबातके प्रमाण तो लें। यह सब ननंदके द्वेषसे प्रपंचहै।"

उसने सब कुछ कहा, उसने शपथ खाई उसने बहुतकुछ चिरोरीकी परंतु उसकी एकभी न सुनीगई। द्वेपका नाम लेतेही सास ननंद और जेठानी तीनोंही खूब उछलीं उन्होंने मिलकर सुशीलाको सैकडों गालियां दीं। पंडित राधामाधवके सामने तीनोंने मिलकर उसे खूब मारा पीटा और तीनोंहीने उसे घरसे निकाल दिया। वह जिस धोतीको उस समय पहने हुईथी उसके सिवाय उसे एकभी कपडा न दिया, पानीपीनेके लिये एक फूटा लोटा न दिया, और जहर खानेके लिये एक पैसातक न दिया। जैसे भौजाईके प्रकोपसे सुशीलाका पीहरसे तिरस्कार हुआथा उससेभी बढकर उसका यहांसे तिरस्कार हुआ। वहांसे सुशीला अपनी इज्जत और पैसा लेकर निकली थी किन्तु यहांसे दोनों गँवाकर निकली। कलंक चाहे झूंठाही क्यों न हो परंतु शिरपर भारी कलंकका टीका लगाकर निकली और—

"अतथ्यं तथ्यं वा हरति महिमानं जनरवः"

इस लोकोक्तिकी शिकार बनकर निकली। सुशीला जिससमय घरसे बाहर निकली पंडितजीके घरमें भातका दिखावा देखनेके लिये जो जाति बिरादरीके लोग लुगाइयां इकट्ठी होरहींथीं। उनका सत्कार करके पंडितजीने, पंडिताइनने बिदाकिया। वे बिदा अवश्य होगये परंतु भातकी

सामग्रीकी प्रशंसाको भूलकर वे लोग इस घटनाकी निन्दाको साथ लेगये। इनमेंसे किसीने पंडितजीको दोषी बतलाया, किसीने स्त्रियोंका अपराध समझा और किसीने सुशीलाका कलंक सच्चा माना परंतु जातिके इतने स्त्री पुरुषोंमेंसे, बस्तीके इतने भले आदमियोंमेंसे जो भात देखनेके लिये पंडितजीके यहां इकट्ठे हुए थे किसीका साहस न हुआ कि सुशीलाकी प्रार्थना सुनै, उसके दुःखपर ध्यानदें और वह वास्तवमें व्यभिचारिणी है वा नहीं इसका निर्णय करै। सबकी बुद्धिपर पत्थर पडगये। एकजातिके होकर सब एक अभागिनीको झूंठे कलंकसे बचानेके लिये अपने कर्त्तव्यपर लात मार बैठे। बिचारी सुशीला रोती पीटती घरसे निकलगई। कितनेही लुच्चे लफंगोंकी आशा थी कि सुशीला और कहीं न जाकर थानेमें रिपोर्ट करैगी। परायेकी फजीहतीमें आनंद माननेवालोंने उसके घरसे निकलने बाद उसे बहकायाभी परंतु सुशीलाने सत्यके निर्णयका परिणाममें भगवान्‌पर भरोसा करके अधिक फजीहतीसे बचनेके लिये उनकी एक न सुनी। वह चुपचाप वहांसे चलकर बस्तीसे बाहर होगई।

प्रकरण १९.

वड़े भाईका आश्रय।

सुशीला घरसे निकली तो सही परंतु अब जाय कहां ? इस समय गावंभरमें एकके सिवाय उसका कोई नहींहै। यदि होसकै तो वह एकही ऐसाहै जो तन मन धनसे इसकी सहायता करनेमें तैयारहै परंतु सुशीलाको इस समय उससे सहायता लेना इष्ट नहीं है सुशीला इसबातको भलीभांति जानती है कि सखी जानकीके घरका आश्रयलेनेमें जन्मभर नहीं तो वर्ष दोवर्ष उसका अवश्य गुजारा होसकताहै। उसे वर्ष दोवर्षतक जानकीकी सहायता अपेक्षितभी नहीं है क्योंकि उसे निश्चयहै कि यदि भौजाईके भयसे वडे भाईने उसे अपने घर न रहने दिया तो क्या हुआ उसका छोटाभाई रिपुसूदन अवश्य बहनकी विपत्ति सुनकर दौडाआवैगा। परंतु हजार कोसपर बैठे हुए छोटेभाईकी सहायता आज किस कामकी। उसने छाती चलाकर

एकवार सखी जानकीके यहां जानेका बिचारभी किया परंतु समझगई कि जिसके पतिके विषयमेंही मुझपर कलंक लगाहै उसके यहां केवल भेंट-नेकेलिये जानाभी इससमय उचित नहीं है। वह इसबातको अच्छीतरह जानती थी कि यदि मैं जानकीके घरकी ओरको मुंहभी करूंगी तो ननंद और जेठानी मुझपर जो झूंठा कलंक लगाकर मेरा सर्वनाश कियाहै वह सच्चा होजायगा इसलिये उसने जानकीसे मिलनेका विचार छोडदिया। उसके जानेकी खबर पाकर जानकी उसके पास दौडीआई। उसने सुशीला को अपने घर लेचलनेके लिये बहुतेरा समझाया,बहुतरी कसमें दिलाई परंतु सुशीला रचसे मच न हुई।उसने जानकीसे साफ कहदिया कि-"बहन इससमय मुझे बिलकुल न सता।मुझे किसी पूर्वजन्मके भारी पापका दंड मिलाहै और उसे भोगकर समय आनेपर ससुरालवालोंको यह दिखलादेनाहै कि मैं सौ नंबरके सोनेकी तरह बेमेल हूं। जिसमय मैं अपनी सचाई प्रमाणित कर दूंगी तब ही तेरे यहां आऊंगी। इससमय तेरे घर जाकर मैं अपनी विपत्ति बढाना नहीं चाहती और न तुझे, तेरे पतिको गालियां दिलाना चाहतीहूं।" जब सुशीलाने ऐसा उत्तर देकर किसीतरह जानकीकी प्रार्थना न सुनी तब उसने कुछ खर्च देनेकेलिये, खानेको मिठाई और पहननेको कपडे देनेके लिये चिरौरीकी परंतु इसबातकाभी उसने कोरा जवाब दिया। उसने कहा:-"क्या तू बावली होगईहै। जब मैंने अबतक सुखके समय तुझ छोटी बहनके यहांसे भूलकरभी कभी एक ग्लास पानी नहीं पियाहै तब अब विपत्तिके समय, ऐसे समयमें जबकि तेरा मेरा खोटा संबंध बतलाया गयाहै मैं तेरी क्या सहायता लूंगी?बहन तू अब जा।अधिक मेरे पास ठहरकर मेरे कडे कलेजेको नर्म न कर। भगवान् यदि मुझे किसी दिन सच्ची सिद्ध करदेगा तो तुझसे फिरभी मिलूंगी। नहीं तो आजहीसे तू मुझे मरी समझलेना।" बस इतना कहकर सुशीला रोनेलगी। जानकीभी बहुत रोई। दोनोंने खूब रो २ अपना २ कलेजा खालीकिया और इसतरह दोनों अलग हुईं।

जानकीसे बिछुडनेके बाद एकबार सुशीलाने किसी वनमें सघन वृक्षोंकी छायामें रहकर अपने दुःखके दिन काटनेका मनसूबा किया परंतु उसके लिये यह बात उचित नहींथी। अवश्यही जंगली पशुओंके खाजानेसे उसे मरनेका डर नहींथा क्योंकि पतिहीन,आश्रयहीन, द्रव्यहीन सुशीलाकेलिये मरजानाजीनेसेभी बढकरथा परन्तु कलंकिनी सुशीला जबतक सच्ची सुशीला न साबित होले तबतक उसे मरना इष्ट नहींथा।वह नहीं चाहतीथी। कि कलंकिनी होकर मरनेमें सदाकेलिये पिता और श्वसुरके विमल कुलकी श्वेत चादरपर कलंकके काले दाग लगाकर मरूं वह नहीं चाहतीथी कि पिता मधुसूदन लाल और माता सुन्दरीके पवित्र यशमें वट्टालगाकर मरूं।वह नहीं चाहतीथी कि स्वर्गवासी पतिका नाम उसके दुराचरणके कारण बदनामहो। चाहे ससुरालवालोंने उसपर घोर अत्याचार किया परन्तु उन्हें कलंकित रखकर दुनियामें मुंह दिखाने योग्य न रखनाभी उसे इष्ट नहींथा। इसलिये मरजानेकी हजार इच्छा होनेपरभी उसने कभी आत्मघातका स्वप्नमेंभी विचार न किया। भूखके, प्यासके, निरादरके घोरतर कष्ट जब उसे बहुत दबानेलगे तब उसने कलेजा कडाकरके अपने मनसे स्पष्ट कहदिया कि– 'जबतक मेरे शिरसे यह झूंठा कलंक दूर न हो मैं कभी नहीं मरूंगी। मैं जियूंगी और माता पार्वतीकी तरह–हैं हैं! इतनी दूर क्यों जाऊं माता सुंदरीकी तरह वनके पत्ते खाकर जियूंगी। यदि वास्तवमें मैंने कोई पाप नहीं कियाहोगा, यदि मेरा कलंक मिथ्याहै तो भगवान् मुझे जिवायेगा और मेरी सचाई देखकर किसी दिन मुझे इस कलंकसे छुडावेगा। तबही मैं सुखसे मरूंगी। जब मेरे प्राणनाथ मुझे छोडकर चलेगये तब मुझे जीकर क्या करनाहै। हे भगवान्! हे दीनदयालु!हे अनाथोंकेनाथ! मेरी रक्षाकर। इसतरह अपने मनको समझाकर उसने ईश्वरसे प्रार्थना करनेके लिये, प्रार्थना करके अपना कलेजा हलका करनेके लिये यह गायाः–

" विपत विदारण तुमहो गिरधर सुखमें मित्र घने,
मैं आधीन कछू नाहिं जानों तुमबिन कौन गिनै

कैसेही तुम पारकरोगे व्रजनँद शरणजनै
अब हरि भूले नाहिं बनै । ''

× × × × × × × ×

''नाथ मोहि अबकी बेर उबारो,
तुम नाथनके नाथ स्वामी दाता नाम तिहारो,
करमहीन जन्मको अंधो मोते कौन न करो,
तीनलोकके तुम प्रतिपालक मैं तो दास तिहारो,
तारी जात कुजात प्रभूजी मोपर किरपा धारो,
पतितनमें इक नायक कहिये नीचनमें सरदारो,
कोटि पापी इक पासंग मेरे अजामिल कौन बिचारो,
नाठो धर्मनाम सुन मेरो नरक दियो हरि तारो,
मोको ठौर नहीं अब कोऊ अपनो बिरद संभारो,
क्षुद्र पतित तुम तारे रमापति अब न करो जियगारो,
सूरदास सांचो तब मानै जो होय मम निस्तारो ।''

× × × × × × × ×

इसतरह जाकर जब सुशीला अपना कलेजा हलका करचुकी तब वहांसे चली । अपनी युवावस्था देखकर किसी दुष्ट दुराचारीका मन न बिगडजावै, माताकी तरह मार्गमें कोई आपत्ति न आपडै इसलिये वह गांवोंको छोडकर निरे जंगलके मार्गसे वसंतपुरको रवानाहुई । एकबार भौजाईने अवश्यही उसे घरमें नहीं रहने दियाथा परन्तु इस समय वसंतपुर जाकर भाईका सहारा लेनेके सिवाय इसके लिये कहीं ठिकाना न था । वहां जानेमें इसके मननें बहुतेरा आगापीछा किया,पैरोंने आगे बढनेसे अवश्यही उत्तर देदिया परंतु मार्गके दुःखोंकी,भाईके यहां पहुंचनेपर निरादर-तिरस्कार होनेके दुःखोंकी किंचित्‌भी पर्वाह नकर इसे लाचारीसे वसंतपुर जाना-पडा।अवश्यही मार्गमें सुशीलाका शील लूटनेवाला कोई न मिला परंतु रात्रिको चलनेमें दो तीनबार जंगली जीवोंके आक्रमणसे मरते२बचगई।कांटोंके मारे पैर छिदगये।ठोकरें खाते २ अंगुलियां फट२कर लोहू निकलने लगा । दुपहरीकी कडी धूपसे उसके गुलाबी गाल पिचकगये । लूने शरीर झुलसकर इसे अलगही हैरान करडाला प्यासके मारे जी घबडाने लगा ।

पास लोटा डोर तो थाही नहीं जो कहीं कुएंसे पानी खैंच पीलेती। यह जातिकी गुजरातिनि थी इसलिये यदि संयोगसे कोई मार्गमें मिलभी जाता तो उसके लोटेसे पीनाभी बननहीं सकताथा। खैर प्यास बुझानेका काम तो कभी २ तालावोंके पानीसेभी होगया परंतु तीनदिन और तीन रातमें इसके मुंहमें अन्नका एक दानाभी न गया। मौसिम गर्मीका था। पेडोंकी पतझड होकर अभी कोपलें नहीं निकलींथीं इसलिये पत्ते खाकर भी गुजर होना कठिनथा। जंगलही जंगलमें जानेसे कहीं फलकाभी ठिकाना नहीं और इस ऋतुमें फलके दर्शनभी कहां! खैर! यह भूंखी, प्यासी, थकी मांदी, गिरती पडती, घबडाती हुई जिस समय वसंतपुर पहुंची रात्रिके बारह बजेथे। बस्तीमें पैर रखतेही घंटेसे "टनटन" बारह का शब्द इसके कानमें पहुंचा, जब अभागिनी सुशीला अपने प्राणाधार पतिको अपने जीवन सर्वस्वको खोचुकीथी तब इसे शकुन अपशकुनसे मतलबही क्या था परंतु जिस पवित्र व्रतके पालन करनेके लिये इसे जीना-था उसे याद करके इसने इस शकुनको गनीमत समझा।

जिससमय यह भाईके द्वारपर पहुंची घरमें सन्नाटा छारहाथा, टोले मुहल्लेमेभी कहीं जागनेका आहट नहीं। भौजाईके डरसे इसने कईबार चाहा कि रात चलकर धर्मशालामें जा काटूं परंतु धर्मशालाका रक्षक इसे पहचानलेगा तो भाईकी निन्दा होगी इस विचारसे यह वहांसे न डिगी। इसने जोर २ से पुकारकर भाईको तीनवार आवाजें दीं। आवाज सुनकर भाई शत्रुसूदन जागे और इसका स्वर पहचानकर नीचे आये। भौजाईभी जागी। उसने ननंदका आगमन जानकर मुंह चढाया और वह न मालूम क्या बडबडाने लगी। उसने पतिको नीचे जानेकी नाहींभी की परंतु भाईने बहनके प्रेममें आर्द्र होकर उसकी एक न सुनी। उन्होंने नीचे उतर-कर घरका किंवाडा खोला और बहनको भीतर लेकर किंवाडा बन्द-किया। बन्द तो किया परंतु कलहकी साक्षात् मूर्तिने हल्लागुल्ला मचाकर बहनका रुदन अच्छीतरह सुनने न दिया और जबतब उन्होंने भरपेट उसे न डांडडपटा तबतक वह चुप न हुई।

प्रकरण १६.

तारसे घबडाहट।

रात्रिके ग्यारह बजेहैं। दिनभरके कामकाजसे निपटकर एक युवती अपने पतिके पास बैठीहुई उनके पैर चांप रहीहै। एक छोटा बालक पासही बैठा हुआ खेलरहाहै। दम्पती आपसमें मीठी २ बातें करके हंसतेहैं, कभी बच्चेकी तोतरी बाणीपर प्रसन्न होतेहैं। दोनोंमें आमोद प्रमोदकी बातें होरहीहैं। पति चाहे दिनमें मालिकके यहां ग्यारह घंटा सत्ताईस मिनट तक लिखने पढनेका कठिन परिश्रमकरके थकाहुआ हो, मिहनतसे थककर चाहे वह निद्रादेवीकी शरणमें शीघ्रही जाना चहताहो चाहे उसकी आंखोंमें नींद घुलरहीहो परंतु वह इस सुखके आगे राजा महाराजाके सुखकोभी तुच्छ समझताहै। वह इस सुखको थोडीदेर और लूटनेके लिये अपनी नींद उडानेका प्रयत्न कर रहाहै। दोनोंमें हंसी होतीहै, हंसते २ कहकहा होताहै और सच पूंछो तो संसारमें जो सर्वोपरि सुखहै जिसको पानेके लिये गृहस्थीके अनेक क्लेश अनेक कष्ट सहन होता है वह सुख इस समग्र इसघरमें विद्यमानहै।चाहे पति खर्चसे तंगहो, चाहे उसे पैसा कमानेके लिये बडे २ कष्ट सहने पडतेहैं परंतु दम्पती इससमय उन कष्टोंको बिलकुल भूलगयेहैं। पति पत्नीकी ओर मुसकुराकर अपने लडकेको गोदीमें लेताहुआ, उसे पुचकारकर उसके गालोंको चुंबन करते २ कहताहै "रात बहुत गई है। गधैयाके बच्चे। अब सोजा" यह सुनतेही पत्नी हंसतीहुई तिरछी नजरोंसे अपने पतिपर एक कटाक्ष करके धीरेसे पूछतीहै–"जब इसकी मा गधैया है तब बाप कौन हुआ जरा कहिये तो।"

"हैं बाप? बाप घोडा।"

"जब मा गधैया हुई तब बाप घोडा कैसे हुआ? बापभी गधा होना चाहिये।"

"खच्चर घोडे और गधैयाके मेलसे ही तो होताहै।"

"नहीं साहब, घोडी और गधेके मेलसे होताहै।"

"तब क्या मैं गधा हूं । "

"आपही सोचिये ।"

"नहीं २ तू गधैया और मैं घोडा । "

"अच्छा आप घोडाही रहिये परंतु घोडा बननेमें घास चरनी पडैगी ।"

"मैं घास चरूंगा तो तुझे कुम्हार वा धोबीके यहां लदना पडेगा ।"

"हां लदूंगी और लदतीही हूं । आपके यहां । "

" भला तबभी, कुम्हारही सही परंतु आदमी तो हुआ । तू तो गधैया हुईना! "

"हां गधैयाही सही परंतु आपकी गधैया । आपकी गधैया क्या, जो कुछ कहो, बननेमें मेरा कुछ हर्ज नहीं । आपकी गधैया हूं परन्तु जब गधैयाहूं तो आपके दुलत्तियांभी मारूंगी । अच्छा हुआ । अहाहा ! दुलत्तियां । "

" वाहरे गधैया ! खूब तेरी दुलत्तियां । दोनो लातें। हा ! २ दोनों लातें! मेरे शिरपर । "

"शिरपर ? मेरी लातें आपके शिरपर ! नहीं २ शिरपर नहीं । कहीं औरही ।"

बस इतना कहतेही दोनों हँसपडे । दोनोंकी हंसीका जिससमय खूब कहकहा मचरहा था घरके द्वारपर आकर किसीने जंजीर खटखटाते हुए जोरसे पुकारा—"पंडितजी,पंडितजी,पंडित रिपुसूदन!तार आयाहै! तुम्हारे नाम तार आयाहै । लो तुम्हारा तार ! " तारका नाम सुनतेही घरमें सन्नाटा छागया । दम्पती अपने आमोद प्रमोद हंसी दिल्लगीको भूलकर चिन्तामें—घोर चिन्तामें पडगये । दोनोंका सुख किरकिरा होगया। गृहस्थाश्रममें सुख थोडा और दुःख बहुतहै।सुखकी बातें स्वप्नकी तरह आती हैं और योंहीचली जातीहैं किन्तु दुःख दिनरात लट्ठलिये तैयार रहताहै।तारका नाम सुनतेही दोनोंका चित्त अपने प्यारे,भाई,भौजाई भतीजे और सगे संबंधियोंकी ओर गया। दोनोंही अपने २ मनमें कभी किसकी ओर कभी किसकी कुशल मनातेहुए घबडा उठे। चिन्ताके मारे दोनोंकी आंखोंमें आंसू भरआये । आंखोंमें आंसू

भरकर घबडाते हुए पंडितजी लालटैनलेकर नीचे उतरे उन्होंने किंवाडा खोलकर तार लिया, रसीद्पर हस्ताक्षर किये । तार तो लेलिया परंतु रातके बारह बजे पढवाना किससे ? इस बातकी चिन्ता हुई । दोनों पंदरह बीस मिनटतक इसी सोचमें रहे कि, पढवाना किससे ! अन्तमें पत्नीकी सलाहसे पंडितजीने बाबूब्रजमोहनलाल पडोसीको जगाकर तार पढवाया । बाबूजीने तार पढा । एकबार, दोबार, चार बार पढा परन्तु उसमें क्या लिखाहै सो पंडितजीसे न कहा । पंडितजीने बहुतेरा पूंछा परतु "क्या कहूं ! कुछ ध्यानमें नहीं आता । कहनेको जीभही नहीं चलतीहै । कैसे कहू !" कहकर बाबूजीने कईबार आगा पीछा किया, आनाकानी की ! ज्यों २ उन्होंने आनाकानीकी त्यों-२ पंडितजीकी घबडाहट बढने लगी । उन्होंने समझ लिया कि निश्चय इसमें किसीके मरनेकी खबरहै । वह रोने लगे। रोते २ उन्होंने फिर बहुत आग्रहके साथ बाबूजीसे कहाः-"कुछ भी हो,मेरे शिरपर चाहे वज्रही गिरा हो परन्तु अब तो मुझे सुननाहीपडेगा आप आनाकानी नकरो आप छिपावो मत मैं पत्थरका कलेजाकरके सुनूंगा।मैं सुननेको तैयारहूं।आप कहो और जो कुछ इसमें लिखाहै बेधडक कहडालो।" जब उनका ऐसा आग्रह देखा तब बाबूजीनें तार पढकर सुनाया । सुनतेही पंडितजी छातीपर एक घूंसा मारकर, माथा पकडकर बैठगये । बाबूजीने उन्हें समझाया । कदाचित् बात झूंठीही हो । एकबार निश्चय तो करलो । कहकर उन्होंने समझाया और समझा बुझाकर पंडितजीको अपने घर भेज दिया । पंडितजी अपने घर गये तो सही परंतु स्त्रीके बीसबार पूंछने परभी उन्होंने तारका मतलब उसको न सुनाया । वह तारको देखदेख कर रोनेलगे । उन्हें रोते देखकर स्त्री रोई । मातापिताके रुदनमें अबोध बालकभी साथी हुआ । जब बच्चेको रोते देखा तब स्त्रीने पतिसे फिर जोरदेकर कहाः-" अब रोनेधोनेसे क्या होगा ? रोना तो जन्मभर है ! जो कुछ पडाहै उसे जन्मभर सहेंगे । अपने नसीबका लिखा भोगेंगे । जो कुछ पडाहै उसे लोहेका कलेजाकरके सहेंगे परंतु कहो तो सही क्या बातहै ? " पत्नीका बहुत आग्रह देखकर पंडितजीने तारका आशय कहा ।

आशय सुनकर दोनों फिर दुःखमें, चिन्तामें मग्न होगये । लडकेको किसीतरह बहलाफुसलाकर सुलाया परंतु दोनोंको रातभर नींद न आई। दोनों कभी इस तारको सच्चा समझकर आपसमें कहते थे कि–"अब दुनियामें किसीको मुंह दिखाने योग्य न रहे ।" कभी–" मरनेसेभी बढकर होगये ।--कभी--" ऐसी बदनामी सहकर जीनेसे मरनाही अच्छाहै ।" और कभी-"कदाचित् किसी लुच्चे लफंगेने पंडित राधामाधवजीके नामसे हमें सताने, बदनाम करनेको झूंठाही तार देदिया हो तो इस बातका निश्चय तो करना चाहिये ।" और कभी--"नहींजी अब निश्चय क्या खाक करें । किस मुंहसे किसीको चिट्ठी लिखें । हमारा तो अब पूंछनेमें हियाव नहीं होताहै । " इसी तरहकी बातें करते कराते दोनोंने दुःख और चिन्तामें रात बिताई ।

दुःखमें, चिन्तामें तारे गिनते गिनाते रात तो बीती परंतु इनके हृदयका दुःख न बीता सबेरा होतेही दोनोंकी फिर सलाह हुई। इस सलाहके अनुसार फिर तार पढवानेकेलिये बाबू ब्रजमोहनलाल बुलाये गये। बाबूजी पंडितजीके स्वदेशीथे, अंतरंग मित्रथे और इनकी घरेलू बातोंके जानकारथे इसकारण उनके सामने घरकी बुरी भली बातें करनेमें कोई हानि नहीं थी । यह सज्जनभी परले शिरके थे । बाबूजीने आकर वह तार फिर पढा उसमें लिखाथाः–

"मत आओ आपकी बहन एक बदमाशके साथ निकलगई ।"

इसबार पढनेपर बाबूजीकी सलाहसे निश्चयहुआ कि देशकी यात्रा अभी रोकदेना चाहिये । बिचारे पंडित रिपुसूदनलाल तबसे अपनी पत्नीको लेकर रंगून आयेथे उन्होंने घरका मुंह नहीं देखाथा । मालिकसे कहसुनकर बडी कठिनतासे इन्होंने छुट्टी लीथी बहनोईके देहान्तकी खबर पाकर उसके शोकमें साथी होने, उसे आश्वासन देनेकेलिये इन्होंने घर जाकर चार मास वहां रहनेका विचार कियाथा । विचारकरके चलनेकी पूरी तैयारी करलीथी । घर पहुंचनेकी तिथि नियतकरके सुशीलाके जेठको तारदियाथा कि "उसदिन बहनको बसंतपुर भेजदेना।" भाईको तार दिया था

कि "हम आतेहैं । मकानकी सफाई करवारखना ।" भाईके उत्तर आनेमें देरीहुई किन्तु सुशीलाके जेठका जो तार आया उसने इनके होशउडादिये। बाबू ब्रजमोहन लालकी सलाहसे सुशीलाके जेठके तारकी पक्कावट करनेके लिये उन्हें फिर तार दियागया । पहले उस तारसे इस तारका हवाला देनेकी सलाह हुईथी परन्तु पंडितायनने इस बातको पसंद न किया । अंतमें उनको तार दियागया कि:-

"बहनका स्वास्थ्य कैसाहै ? तारदो ।"

एक दिन गया, दो दिन गये और तीन दिन निकलगये परंतु सुशीलाके जेठका उत्तर न आया । तार आना तो एक ओर रहा किन्तु अवधि निकलजानेपरभी उनकी चिट्ठीतक न आई । तब इन्हें निश्चय होगया कि अवश्य कुछ दालमें कालाहै । अब ये भाईके उत्तरकी आँखें फाड २ कर राह देखनेलगे । राह देखते २ जब इन्हें इकलक दश दिन होगये तब तारके उत्तरमें भाईकी चिट्ठी मिली । चिट्ठी पढतेही पंडित पंडितायिन बडी उलझनमें पडगये । उससे ये निश्चय न करसके कि मामला क्या है परंतु दालमें काला" अबभी बनारहा । चिट्ठीमें गिनतीके पंद्रह बीस शब्दथे । उसमें केवल इतनाहीथा कि:-

"मकान तैयारहै । जल्दी आओ । बहनभी यहां आगई है । और बातें चिट्ठीमें लिखने योग्य नहीं हैं भाग्यका दोषहै ।"

इस पत्रको पाकर दो तीन दिन दम्पती निश्चय न करसके कि क्या करना चाहिये । इसके बाद इनका जो मनसूबा हुआ उसके अनुसार बसंतपुरको, नारायण गंजको फिर पत्र लिखेगये । उन पत्रोंमें क्या था सो आगे चलकर मालूम होगा ।

प्रकरण १७.

बडे भाईसे बातचीत ।

जिस आदमीने सुशीलाके चरित्रकें विषयमें रंगूनको तार देकर पंडित रिपुसूदनके घरमें घबडाहट डालदीथी उसने बसंतपुरमें पंडित शत्रुसूदनकोभी न छोड़ा । इसका पंडित रिपुसूदनके नाम तार संक्षेपसे

था। उससे घटनाका पूरा स्वरूप नहीं मालूम होताथा किन्तु उसने पंडित शत्रुमूदनके नाम पत्र लिखा। डाकसे पत्र पातेही इनके घरमें बहुत हलचल मची।वहां पंडित रिपुसूदनकी स्त्री समझदार थी, ननंदके चरित्रकी बात सुनकर लज्जित हुईथी और तार पाकर दम्पती मनहीमन कुढकर बैठरहेथे। यहां शत्रुसूदनकी कलह कारिणी स्त्री इस पत्रका आशय सुनकर अपना कोप संभाल न सकी। इस बार ननंदके आनेपर पतिके अधिक समझाने बुझानेसे, सुशीलाके रोने झीकनेसे उसके कठोर हृदयमें कुछ दया आगईथी। सुशीलाके, अपनी सारी कहानी सुनानेपर उसने मान लियाथा कि ननंदका विशेष दोष नहीं है और उसकी ससुराल वालोंनेही उसपर अत्याचार करके उसे घरसे निकाल दियाहै। यही समझकर इसबार उसने सुशीलाको घरमें कलसे बेठने दियाथा किन्तु चिट्ठी सुनतेही उसकी कृपा कोपमें बदलगई। उसने सुशीलासे बोलचाल बंद करदी,अपने बालकका उसके पास जाना आना बंदकरदिया और सुशीलाको अपने रहनेके मकानसे निकालकर घरकेही भीतर मर्दानी बैठकके पास एक कोठरीमें रहनेको जगहदी। इस बार उसकी इतनीही कृपा समझो कि उसने सुशीलाको झाड़ू मारकर घरसे न निकाला, इस बार उसकी इतनीही दया समझो कि उसने लोकलाजके डरसे उसपर गालियोंकी गालियां चलाकर हल्ला गुल्ला न मचाया। परन्तु इसबार उसने सुशीलाको ऐसी सजादी जिससे उसके जलते हुए कलेजेमेंसे ज्वाला उठने लगी। उसने कईबार चाहा कि भौजाईसे हाथ छोडकर इसका कारण पूंछू परंतु उसकी बदली हुई तिउरियां देखकर सुशीलाकासाहस न हुआ। उसने बहुतेरा चाहा कि भाईके आगे गिडगिडाकर उसके द्वारा भौजाईके कोपका कारण जानलूँ, उससे शिफारिश कराके भौजाईका कोप शान्त कराऊं परंतु इसतरहका संकल्पकरके जब इसने भाईसे कहनेकी इच्छाकी तो उसकीभी आंखें चढीपाईं। तब इसने समझलिया कि किसी बदमाश आदमीने मेरी निन्दा करके भाई भौजाईको बहकाया है। इसने समझ अवश्य लिया परंतु जब आठ सात दिनसें भाईभौजाईको घरसे बाहर निकलते हुए न देखा तब इसने सोचा

कि इन्हें बहकानेवाला कोई वसंतपुरका आदमी नहीं है । यह इस सोचही सोचमें जब दिन बितारहीथी तब इसकी नजर रद्दी कागजोंमें एक लिफाफेपर पडी । उसे देखतेही यह तुरंत भांपगई और इसने समझलिया कि इस आगको लगानेवाला कौनहै । इसने वह लिफाफा उठाकर रक्षाके साथ अपनी अंगियामें रखलिया और अब भाई भौजाईसे इसबातको प्रकाश करनेका समय साधनेलगी । एकही दिनमें इसे समय मिला और जिस समय भाई भौजाई खापीकर रातको निश्चिन्त हुएथे यह उन दोनोंके पास जाकर हाथ जोडेहुए खडीरही । खडेखडेही इसने प्रार्थना की:—

" आप दोनों मेरे माबापके बराबर हो । आपके नाराज होनेसे मेरा संसारमें कहीं ठिकाना नहीं है । आप दोनोंके बोलचाल बंदकरनेसे, बालकका मेरे पासतक आना बंद करनेसे मुझे संदेह हुआहै कि आप दोनों मुझसे नाराजहो । जब ससुरालवालोंने मुझे मारकर निकालदिया है जब मैं अपना सर्वस्वखोकर दुनियामें निराधार होचुकीहूं तब आपको नाराज रखकर मैं जी नहीं सकती । मेरा जो कुछ अपराध हो जी खोलकर मुझे सुनाओ और जो मैं वास्तवमें अपराधिनी ठहरूं तो मुझे आपकी इच्छा हो सो दंडदो । मैं आपकी गौ हूं । भाई मैं आपकी बेटी हूं । तुम मेरे माबाप हो । मुझ अनाथिनी दुःखियाकी रक्षा करो । मैं तुम्हारी शरण आई हूं । "

" मैं ऐसी कलंकिनीको अपनी बेटी नहीं बनासकती । मुझे बेटी तो क्या ऐसीसे ननंद कहनेंमेंभी लाज आती है । जबसे मैंने यह बात सुनी है तुम्हें कभीका चुटिया पकडकर घरसे निकाल दिया होता परंतु अपने घरकी फजीहतसे मैं डरगई । इसीलिये मनकी मनमें घुटकर बैठरही नहीं तो तुम जानती हो मेरे गुस्सेको । "

" हां ! मुझेभी ऐसी बात सुनकर क्रोध आयाहै । तैने हमारा कुल लजाया, माबापके विमल यशको कलंकित करदिया । तैने हमे संसारमें मुंह दिखानेके योग्य न रक्खा । हमारी माके तुझ जैसी बेटी । तुझे अपनी बहन बताते हुएभी मुझे लज्जा आतीहै । तुझसे और क्या कहें ? तैने अच्छा नहीं किया ।"

" मालूम होताहै कि नारायणगंजके किसी लुच्चेने तुम्हें चिट्ठीलिखकर बहकायाहै। वह दोनो कुलका शत्रुहै। वह औरोंकी बात बिगाडकर तमाशे देखनेवालाहै। मैं बिलकुल निष्कलंक हूं। यदि कलंकिनी होती तो जिस समय ससुरालसे निकालीगई इधर आनेके बदले कुएंमें गिरकर मर रहती। परंतु मरनेवालेके, दोनों कुलोंके ललाटपर कलंकका टीका लगाकर मैं मरना नहीं चाहतीहूं। बस इसीलिये मैं अपना कलंक धोने-को आपकी शरण आईहूं। तुम मेरे भाई हो, भौजाई हो मावापके बरा-बर हो मेरी रक्षाकरके मेरा उद्धार करो। कलंकसे मुक्त होनेबाद मुझे जीकर क्या करनाहै ? मैं तो उसी दिन मरचुकी जिस दिन मेरा करम फूटा। "

"जिसनें हमें पत्र लिखाहै वह तुझसे अधिक विश्वासपात्र है। उसका लिखना कदापि झूंठ नहीं हो सकता। धिक्कार है तुझे। तूं कलंकिनी होकरभी सच्ची–पाक दामन बनना चाहतीहै। बस और क्या कहूं? हटजा मेरे सामनेसे। "

"हां ! हट जाऊंगी। हटही क्या जाऊंगी यदि कलंकिनी साबित हुई तो कभी तुम्हें मुंह न दिखलाऊंगी परंतु मुझे कोई साबित तो करदे मैं कैसे कलंकिनी हूं ? देखूं तो तुम्हारा विश्वासपात्र पत्रलेखक कौनहै और उसने मुझ निष्कलंकपर क्या कलंक लगायाहै ? ससुरालमेंभी मैंने ननंदको कलंककी बातें कहते सुनाथा परंतु उन्होंनेभी मुझसे यह नहीं कहा कि तैने फलानेसे अमुक समय काला मुंह कियाहै।"

"तैने अवश्य काला मुंह कियाहै निर्लज्ज कहींकी ! और अब तू अधिक फजीहत करनेके लिये यहां आई है। दुष्टा, लुच्ची, हट यहांसे ! "

"हां ! मैं सच्चीहूं। भगवान जानताहै ! मैं सच्चीहूं और अपनी सचा-वट सिद्ध करनेके लियेही आईहूं। यदि परमेश्वरने चाहा तो किसी दिन सिद्धकरदूंगी कि मैं सच्चीहूं। मुझे चिट्ठी तो दिखाओ। "

" अच्छा देख, यह चिट्ठी ले। इसे पढकर, यदि तेरे मनमें फिरभी लज्जाहै तो डूबमर। "

इतना कहकर पंडित शत्रुसूदनने उसके आगे चिट्ठी डालदी। सुशीलाने "अथ" से लेकर "इति" तक चिट्ठी पढी। अंगियामेंसे निकालकर लिफाफेके अक्षरोंसे चिट्ठीके अक्षर मिलाये। चिट्ठी पढनेसे उसके हृदयपर जो वज्रकासा आघात हुआ था उसे आकके फलकी तरह सहगई। उसने समझ लियाकि इस समय रोनेधोनेसे ये दोनों मेरा फितूर समझेंगे इसलिये उसने कलेजेको दोनों हाथोंसे थामकर आँखोंमेंसे एक आंसूभी न गिरने दिया। उसने दृढ चित्त होकर कहा और जोरसे कहा कि "सब झूठहै। बिलकुल झूठहै। आपलोग जिसे परम विश्वासपात्र समझतेहैं उसके हाथकी चिट्ठी नहीं है। चाहे उन्होंने स्त्रियोंकी बहकावटसे मेरा सबकुछ छीन लियाहै। परंतु मेरे जेठ मुझपर झूंठा कलंक कभी नहीं लगासकते। वह महानुभावहैं। कभी ऐसा समय अवश्य आवैगा जब वह स्वयं मुझपर अत्याचार करनेसे पछतायेंगे।"

"क्या तुझे अबभी इस चिट्ठीमें संदेहहै? यदि संदेह है तो अच्छी बातहै। हम भी यही चाहतेहैं कि यह बात झूठी निकले। हमने इसी विचारसे इसकी सचाई झुटाईका निश्चय करनेके लिये उन्हें चिट्ठी लिखी थी परंतु उन्होंने उत्तर न देकर आदमीसे यही कहाकि– "मैं इस बातका क्या जवाब दूं? इससे साबित होताहै कि बात सच्चीहै।"

मुझे इसमेंभी चाल मालूम होतीहै। खेदहै कि मैं अब वहां जाना नहीं चाहती। भैया, यदि तुम वहां जाओ तो सब बातें निश्चय करके लासकतेहो। तुम चलो तो साथमें मैंभी चलनेको तैयारहूं।"

"तू जाना चाहे तो भलेही जा परंतु जब मैंने उनकी और चिट्ठियोंसे उनके अक्षर मिलाकर देखलियेहैं तब मुझे संदेह नहीं रहा। इसकारण अब मैं अपना काला मुंह कराने वहां न जाऊंगा। वहांजाकर किस मुंहसे बात करूं? अब वहां क्या यहां भी मैं किसीसे बात करने योग्य न रहा। तैने बहुत बुरा किया। तू अभी मेरे सामनेसे हटजा। चल परेहो निर्लज्ज कहींकी। मुझे मुंह न दिखला। पडी रह। उस कोठरीमें तू है

जो इसी योग्य परंतु हम अब फजीहती बढानेके लिये तूझे घरसे निकाल भी नहीं सकतेहैं।"

बस इतना कहकर पंडितजी वहांसे खसकगये। पंडितायनने * ननंदके कईएक घूंसे और चपतें जमाई और उसे ढकेलती २ वह सुशीलाकी कोठरीमें रखआई। उस समय वह अपने धैर्यको न संभालसकी। वह कोठरीके किंवाड बंदकरके खूब रोई। उसने वहांसे चुपचाप बाहर निकलकर कईवार कुएमें गिरजानेका मनसूबा किया परंतु जैसे ईश्वरही इसे ऐसे कुकर्मसे रोकनेकी प्रेरणा करताहो वैसे इसके मनने गवाही दी। अंतमें इसने परमेश्वरसे प्रार्थनाकी:—

"हे दीनदयालु! मैंने ऐसा कौन पाप कियाहै जो मुझपर झूंठा कलंक लगाया जाताहै! हे नाथ, हे घटघटके वासी, आप जानतेही हैं कि मैंने इस जन्ममें पराये आदमीकी ओर आंख उठाकरभी कभी नहीं देखा, मैं अपने पतिके सिवाय सबको अपने भाई बापके बराबर समझतीहूं। फिर मुझपर कलंक क्यों? नाथ, कलंक कृष्णावतारमें आप परभी मणि चुरानेका लगाथा परंतु वह चौथका चांद देखनेसे। हे दीन बंधु! मैंने तो कभी चौथका चांदभी नहीं देखा। फिर मुझपर कलंक क्यों? हे अशरण शरण! मैं आपकी शरण आई हूं। हे अनाथोंके नाथ, मुझे इस कलंकसे, इस मिथ्या कलंकसे उबारो। हे दयासागर, यदि मेरा पातिव्रत सच्चाहै तो मेरा मुख उज्ज्वल करो। हे भगवान्, आप सच्चे न्यायीहैं। मुझे बचाओ नाथ, मुझे बचाओ। मैं कलंकिनी होकर-कुलटा कहलाकर जीना नहीं चाहती। नाथ मुझे उबारो। हे जगदीश, मैं अनाथिनी हूं। मेरी रक्षा करो।"

ईश्वरकी प्रार्थना करनेसे सुशीलाके हृदयको कुछ ढाढस हुई। इसने दावात कलम, कागज लेकर भाई रिपुसूदनको चिट्ठी लिखी—लिफाफेपर उनका पता लिखा और इस तरह चिट्ठी तैयारकरके अपने पास रखली। थोडी देरमें जब इसकी भौजाई इसे जोकी चार मोटी २ रोटियां और तरकारी देने आई इसने उससे गिडगिडाकर-हाथ जोडकर कहा:—

"भाभी, यदि तुम मुझे इस कलंकसे बचानेके लिये मेरी परीक्षा करना चाहतीहो तो भैयासे कहना कि इस चिट्ठीको पढकर डाकसे रवाना करदें। उनके पढनेके लियेही इसका लिफाफा बंद नहीं कियाहै । बंद करदेती तो कदाचित् उन्हें और तुम्हें कुछ वहम पडता कि हमारी इसने चुगली खाईहै।"

भाभीने इसका कुछ उत्तर न दिया । वह जैसे त्योरियां चढाये आईथी वैसेही चली अवश्य गई परंतु रोटियां देगई और चिट्ठी लेतीगई। उसने चिट्ठी अपने पतिको दी। पतिने चिट्ठी पढी, अपनी स्त्रीको सुनाई और तब लिफाफेमें रखकर बंदकरनेके बाद डाकद्वारा रंगूनको रवाना कीगई। उस पत्रमें क्या था सो तो समयपर प्रकट होहीजायगा परंतु जब दम्पतीने इसे रोका नहीं तब समझलेना चाहिये कि इस चिट्ठीमें कोई बात उनकी इच्छाके प्रतिकूल न थी ।

प्रकरण १८.

ससुरालमें चर्चा ।

सुशीलाके ससुरालसे निकाली जानेबाद उसके विषयमें नारायणगंजमें क्या चर्चा हुई सो लिखना विशेष आवश्यक नहीं है क्योंकि वहां जितने मुंह उतनी बातें थीं। कोई सुशीलाको भलीकहकर उसके ससुरालवालोंका दोष बतलाताथा और किसीके विचारसे सुशीला वास्तवमें कलंकिनी कुलटाथी । जो भले आदमी थे वे इस बातका निर्णय करनेसे उपेक्षा करके पराई निन्दा सुननेसे कान मूंदतेथे, जो लुच्चे लफंगे थे वे इस बात पर तरह २ के रंग देकर बातका बतंगड बनाते थे और जिन्हें पराया घर जलाकर तापनेमें आनंद आताथा-जो सुशीलाकी ससुराल वालोंके शत्रुथे वे इधर उधर चिट्ठियां भेजभेजकर उसे अधिक २ फज़ीहत करतेथे।

जिस समय नारायणगंजकी वस्तीमें इसप्रकारकी चर्चाथी तब पंडित जीके घरमें बिलकुल सन्नाटाथा। सुशीलाके जेठने लोकलाजसे डरकर

लोगोंके अवाजेतवाजेसे डरकर घरसे निकलना छोडदिया था। वह आवश्यकताके सिवाय कभी अपनी स्त्रीसे, अपनी मातासे, अपनी बहनसे और अपने बालकों तकसे बातचीत नहीं करतेथे। उनके इस तरह चुप्पी साधलेनेसे उनके घरकी स्त्रियां घबडातीथीं, उनका मन बहलाकर उन्हें राजी करनेका प्रयत्न करती थीं और समय पाकर सुशीलाकी चुगलियोंसे उनके कान भरनेंमेंभी कभी कसर नहीं करतीं थीं। पंडितजी इनकी सब बातें चुपचाप सुन लिया करते थे परंतु उत्तर किसीको नहीं देतेथे। जिस समय पंडितजी घडीदोघटी के लिये इधर उधर होते जब वह सोजाते इन तीनोंमें खूब कानाफूसी होतीथी। ननंदको इस बातका बडा भारी घमंड था कि उसने प्रपंच रचकर सुशीलाको निकलवादिया और इसतरह भातमें इतना रुपया पालिया जितनेकी उसे स्वप्नमेंभी आशा न थी। सुशीलाकी जेठानी उसके निकालजाने पर इस कारण प्रसन्नथी कि उसके खर्चका बोझा टलगया और भातके खर्चमें उसका जेवरभी बच गया। सुशीलाकी भोली सासकी दशा बडी डावांडोलथी। जब बेटीके बहकानेसे सुशीलाका कुलटापन उसके सामने आता वह उसे सैंकडों गालियां देतीथी और जब वह अपने लडकेकी ओर नजर डालती थी-जब वह लडकेके मौन धारण करनेसे यह संदेह करती थी कि कहीं लडकीने बहूको निकालनेका प्रबंध तो नहीं कियाहै तब वह दुलारीसे रूठकर उससे कहदिया करतीथी कि-"बस तूही इस झगडेकी जडहै!" एक दिन इस बातपर माबेटीमें खूब कहा सुनी हुई। बात यहां तक बढी कि दोनों रोनेलगीं। पंडितजीकी स्त्री चाहे इन दोनोंकी लडाईमें उदासीनथी परंतु ननंदका अधिक कालतक अपने यहां रहना उसेभी पसंद न था। "ननंद जब भातमें गहरे माल मारचुकीहै-जब लडकीके विवाहमें खूब खर्च कराचुकीहै-जब विवाहके बाद दुबारा आकर कई महीनेसे यहां अडरहीहै तब उसेभी यहांसे किसीतरह निकालना चाहिये।" बस यही चिन्ता सुशीलाकी जेठानीके चित्तमें चक्कर लगाया करतीथी। वह अवश्यही लोभमें पडकर सुशीलाको निका-

लनेके लिये ननंदके प्रपंचमें शामिल हुईथी परंतु वह अपने मनमें जानतीथी कि सुशीला वास्तवमें कुलटा नहीं है और पतिके मौन होजानेसेभी उसने समझलियाथा कि उन्हें यदि किसी तरहका दुःख है तो केवल यही कि वह सुशीलाके विषयमें किसीको मुख दिखाने योग्य नहीं रहे। उसकी सास और ननंद आपसमें लड २ कर चाहे आजही मरजायं जब वह इस प्रपंचसे अपना जेवर बचासकीहै तब सुशीला चाहे एकबार कुलटा क्या हजारबार कुलटा बनजाय और पति चाहे रूठते रूठते चलेही जावें–उसे इन बातोंका कुछ कष्ट नहींथा क्योंकि चाहे वह कैसीही क्यों न हो परंतु उसकी पतिपर इतनी भक्ति नहींथी। हां केवल इस बातका दुःख अवश्य था कि यदि पति दुःखही दुःखमें रहकर बीमार पडजायंगे–आजकलकी तरह उनका बाहर जानाआना बंद होजानेसे अपनी नौकरी खो बैठेंगे तो मैं अपने बालबच्चोंको क्या खिलाऊंगी। बस इन्हीं विचारोंसे वह अपनी सास और ननंदके आपुसकी लडाईके बीचमें पडी। उसने सासकी मदद करके ननंदसे कहदिया और खुलाखुली कहदिया किः–

" हां! हां! यह सच कहतीहैं तुमही इस झगडेकी जडहो।"

" भाभी, यह क्या कहतीहो ? क्या मैंही झगडेकी जडहूं और तुम नहीं हो ?"

" हां ! तुमहो और हजारबार तुमने ही तो उस विचारीपर झूंठा कलंक लगाकर दीनदुनियांसे उसे निकालदिया।"

" हैं ! मैंने निकाला ? अच्छा मैंनेही निकाला सही परंतु लाभभी तो तुम्हाराही हुआ। तुम्हारा तो जेवर बचगयाना ?"

"मेरा क्या लाभ हुआ ? लाभ तो तुम्हारा हुआ जो उस बिचारीको लुटवाकर तुमने अपना घर भरलिया। जो उसका जेवर न बिकता तो मैं अपने पाससे एक पाईभी न देती।"

"न देती तो बदनामी किसकी होती ?"

"और अब क्या बदनामी कमहुई ? भात न देनेसे तो लोग दशपांच दिन बुराभला कहकर चुप होजाते परंतु अब तो हम किसीको मुह

दिखाने योग्यभी न रही। देखती नहीं हो अपने भाईकी क्या दशा होरहीहै? बस तुमहीं इस झगडेकी जडहो और तुमने अपना मतलब गांठनेके लिये हमारे घरका सत्यानाश करदिया।"

"मैंने करदिया! हैं! मैंने करदिया? अच्छा मैंनेही करदिया फिर अब क्या? जो होना था सो होचुका। अब इन बातोंको छेडकर नाहक तुम्हारी और मेरी थुक्का फजीहती क्यों करतीहो?"

"अरे थुक्का फजीहती! तुम तो थुक्काफजीहतीसे डरतीहो और यहां मेरे चूल्हेमें पानी पडा जाताहै।तुम देखो तो सही।बिलकुल स्वार्थमेंही स्वार्थमें न रहो। जरा आंखें खोलकर देखो तो सही (अपने पतिके लिये संकेत करके)उन्होंने कबसे बाहर जानाआना छोडदियाहै!इस दुःखही दुःखमें कहीं वह अपनी नौकरी न छोडबैठें। घरमें आठ दश दिनसे अधिकके लिये अन्न नहीं है। भला अपने बालकोंको तो मैं ज्वारबाजरेकीभी रोटियां कर खिलाऊंगी परंतु तुम्हें तो घी गेहूं चाहिये। मैं तुम्हारे लिये घीगेहूं कहांसे लाऊंगी?"

"तब क्या मेरेहीलिये तुम्हारे घरमें घाटाहै। देखरी अम्मा मेरेही लिये इनके घरमें घाटाहै। तुम पराये घरसे आई हुई आज मेरे लिये इसतरह कहती हो मुझे घरसे निकालती हो। तुम्हारा मुंह मुझे निकालनेका? तुम मुझसे ऐसा कहनेवाली कौन? जरा मुंह सँभालकर बातकरो।"

"मैं मुंह संभालकर? अरे कर्कशा मैं चाहूं तो आजही तुझे चुटिया पकड कर निकालदूं। मैं बहुत बुरी हूं। मैं सुशीला नहींहूं जिसपर तेरी चालें चलजायं। मैं छटी हुईहूं।"

"हां! छटी हुई है तबही तो तैने मेरे भाईको उल्लू बना रक्खाहै।"

."मैंने किसीको उल्लू बनायाहो इससे तुझे क्या? पर तू यह तो बतला, तू रोटी क्यों नहीं करती? क्या मैं तेरी दासी हूं जो तुझे रोटी करके दोनोंबार खिलाऊं। कर्कशा कहींकी! छतीसी कहींकी! उस विचारीको निकालकर अब आई है मुझसे अटकने!"

" मैंने समझ लिया, भाभी, मैंने अब समझलिया कि मेरे दिन भरगये। अब मैं यहां न रहूंगी। घबडाव मत भाभी, जो तुम्हारे घरमें मेरेही लिये घाटा आता तो मैं अपने घर चली जाऊंगी। अब इस छतीसी भाभीके आगे मेरा गुजारा नहीं है। "

मैं छतीसी, अच्छा मैं छतीसीही सही पर तू कौनहै? तू महाछतीसी! यहांसे चलीजायगी तो चलीजा। मेरा क्या नुकसान है? अच्छी बात है। पधारो। सत्यानाशकी जड! पधारो! यहांसे आपका पधारनाही भलाहै। बस जल्दी कूचकरो! नहीं तो मैं तुम्हारा सब भंडा फोडदूंगी।"

जिस समय इन ननन्दभौजाईके आपसमें इस तरहकी गर्मागर्मी होरहीथी दुलरियाकी मा चुपचाप बैठीथी। वह कानोंसे कम सुनतीथी इसलिये न तो इनकी पूरी बातें समझसकी और न इनके बीचमें बोली परंतु इतना अवश्य है कि सुशीलाके विषयमें उसने दुलरियाको और दुलरियासे कडी २ सुनानेपर उसने बडी बहूको दोषी समझा। उसने बस इतनाही कहा कि:—

" तुम दोनोंकी लडाईमें पकडनेकी मेरी ताकत नहीं है। मैं क्या कहूं? पर यह सच है कि तुम दोनों पहुंची हुई हो। तुम्हारी माया अपरंपार है। तुम्ही दोनोंने मिलकर मुझे बहंकाया—उस बिचारे भोलेको बंहकाया। तुमने इस घरको चौपट करदिया। तुमही सब झगडेकी जडहो। "

जिस समय इनकी बातें होरहीथीं पंडितजी सोरहेथे। उन्हें बिलकुल खबर नहींथी कि घरमें क्या होरहाहै। यदि वह इन बातोंको सुन लेते तो सुशीलाका आजही कल्याण होजाता परन्तु उस अभागिनीके भाग्यमें अभी बहुत कुछ दुःख देखना बदाथा। उन्होंने अपनी बहन और अपनी स्त्रीकी बात चीत बिलकुल न सुनी। उन्होंने सुना केवल अपनी माताका कथन और उसीसे समझलिया कि ये दोनों प्रपंचीहैं। इन्होंहीने प्रपंच करके सब अनर्थ कियाहै। माताका कथन पूरा होतेही वह अंगडाइयां लेतेहुए पलङ्गपर बैठे और बैठे २ ही उन्होंनेः—

" नृपस्य चित्तं कृपणस्य वित्तं मनोरथं दुर्जनमानसस्य
त्रियाश्चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं दैवो न जानाति कुतो मनुष्यः। "

यह श्लोक कहा। उनके जागतेही तीनों चुप होगईं तीनों अपने२ कामकाजमें लगीं। दुलरियाने समझलिया कि अब मेरे दिन भरगयेहैं। इस कारण भाई भौजाईसे छिपाकर उसने अपने पतिको चिट्ठी लिखी। उसका पति आया और उसे लिवा गया। जिस दुलरियाके लिये पंडितजीने इतना कष्ट उठाकरभी अनाप सनाप खर्च कियाथा उसकी बिदाईमें इसबार एक पाई न दी। उससे चलते समय बोलेभी नहीं और न उससे भौजाईनेही कुछ बातचीत की। उसके चलते समय उसकी माताका हृदय अवश्य भरआया। वह बेटीको गले लगाकर रोई और इस तरह दुलरिया अपनासा मुंह लेकर अपनी ससुराल चलीगई।

प्रकरण १९.

बहनकी चिट्ठी।

"हैं! आज यह क्या पढरहेहैं? हैं! आज यह चिट्ठी किसकी? अरे आप! रोतेहैं! हैं हैं!! आप न रोइये! ऐसी कौनसी आफत आपडी जो आप रोते हैं! घरमें सब कुशल तो है? न रोइये! प्राणनाथ न रोइये! आपको रोते देखकर मुझेभी रोना आताहै। न रोइये नाथ, न रोइये!"

"रोताहूं अपने कर्मको दोषदेकर रोताहूं। हमारे रोनेहीके दिन हैं न रोवें तो क्या करें! रोनेके सिवाय चाराही क्या है?"

"अच्छा कहिये तो ऐसी कौन बातहै जिसके लिये रोतेहो? जरा मुझसे भी तो कहिये चिट्ठीमें क्या लिखाहै?"

इतना कहकर पत्नीने पतिके हाथमेंसे चिट्ठी लेकर पढी। उसमें लिखा था कि-

" प्यारे भाई,

मैं अपना दुखडा क्याकहूं? तुम पास होते तो कहतीभी। संसारमें तुम्हारे सिवाय मेरी पुकार सुननेवाला कोई नहीं है इसलिये तुम्हीसे कहतीहूं । तुम मानना चाहे बडे भैयाकी तरह तुमभी जवाब देदेना परंतु एक बार अपने मनकी बात तुम्हें अवश्य लिखूंगी । दोष तो मेराही है जो मैं उस समय न मरगई जब मेरा भाग्यफूटा परन्तु करूंक्या? ऐसे दुःख सहनेके लिये ही मुझे मौत न आई । जब उनका पीछा हुआ मैंने समझाथा कि अपना गहना गुरिया बेचकर जन्मभर पेट भरलूंगी और नारायणका स्मरण-करके अपने दिन निकालदूंगी परन्तु मुझ दुखियाको इतनाभी सुख कहां ? जब मेरा भाग्य फूटा बडे भैया मुझपर कृपाकर वसंतपुर लिवा तो लेगये परंतु अपने कर्मके दोषसे मैं वहां न ठहरसकी । वहांसे ससुराल गई । वहां थोडे दिन अवश्य चैनसे बीते परंतु मेरी ननंदके प्रपंचसे मैं वहांभी न टिकने पाई । उसने भातमें खूब रुपया पानेके लिये मेरे जेठजेठानीको बहकाकर मेरा जेवर छिनवालिया । जेठ बिचारे भोलेराम हैं । मैं उन्हें दोष नहीं देती परंतु जेठानी और ननंदने मेरे जेठको बहकाकर मुझे घरसे निकलवादिया । जो मेरा जेवरही छीना होता तो कोई बात न थी । मैं महनत मजदूरी करकेभी पेट भरलेती परंतु मुझपर बहन जानकीके आदमीके साथ कुकर्म करनेका झूंठा कलंक लगाकर मुझे निकलवादिया । जब मैं वहांसे निकली तब मैं चाहती थी कि कुएँमें पडकर प्राण देडालूं क्योंकि बदनामी सहकर जीनेसे मरना भलाहै परंतु दोनों कुलके शिरपर कलंकका टीका लगाकर मैं कभी न मरूंगी । बस इसी विचारसे मैंने मरनेका मनसूबा बदलदिया । मैं अनाथ-गौ बनकर बडे भैयाके यहां गई । भगवान् भाईभौजाईका भलाकरै उन्होंने मुझ अभागिनीको आश्रय दिया । आश्रय तो दिया परंतु नारायणगंजसे किसी दुष्टने मेरे जेठके नामसे चिट्ठी लिखकर बसंतपुरमेंभी मुझे बदनाम करदिया । उस चिट्ठी लिखनेवाली कर्कशाकोभी मैं जानतीहूं । वह मेरी ननंदके सिवाय और कोई नहीं है । उसने जो बातें मेरे लिये लिखी हैं उन्हें कोई शिरकाटने-वाला शत्रुभी कभी नहीं लिखैगा । उसने झूंठी २ बातें बनाकर मुझे झूंठ-

झूठ बदनाम कियाहै। मैं और क्या कहूं? भगवान उसे दंड देगा। मैं केवल इतनाही चाहतीहूं कि तुम यहां आकर एकबार निश्चय करलो कि मैं कैसीहूं। यदि मैं कुलटा निकलूंगी तो उसी समयमें प्राण देदूंगी। मेरे प्राण बचानेकेलिये मतआओ परंतु अपने कुलको कलंकसे छुडानेके लिये शीघ्र आओ। मैं प्रतिज्ञाकरके कहतीहूं कि मैं सतीहूं। यदि मैं सती न निकलूं तो तुम मेरे उसी समय टुकडे करडालना। नारायणगंजसे बडे भैयाके नाम जो चिट्ठी आई उसे तुम्हारे पास भेजनेमें तो मुझे लज्जा आती है परंतु जब मैं झूठे कलंकसे बदनाम होचुकीहूं तब भेजनाही पडेगा। भेजतीहूं। इसे पढना और अपनी अनाथिनी बहनके सतीत्वकी परीक्षा करना।"

इस चिट्ठीको दम्पतीने पढा। चिट्ठी पढनेसे उनका हृदय दयासे भींग गया। उन्होंने शीघ्रही घरजानेका मनसूबा किया। उन्होंने केवल सुशीलाकी चिट्ठीही न पढी वरन उसके शत्रुकी चिट्ठीभी पढी। उसमें सुशीलाके जेठकी ओरसे पंडित शत्रुसूदनलालके नाम इसतरह लिखाथा:—

"प्रिय पंडितजी,

नमस्कार। मैं आपकी बहनके लिये क्या लिखूं? वह वास्तवमें कुलटा निकली। उसने हमें किसीको मुंह दिखलाने योग्य न रक्खा। मैं इस बदनामीसे कभीका मरजाता परंतु न मालूम मेरे प्राण कहां उलझ रहेहैं! वह तुम्हारी बस्तीकी जानकीके आदमीके साथ पकडलीगई। एक वही क्या उसके बीस यार हैं। मैंने इसी बातपर जब उसे डांटा वह घरसे निकल भागी। मैं यह खबर आपको लिखना नहीं चाहताथा परंतु वह वसंतपुर आकर न मालूम क्या २ झूंठी बातें बनावै इसीलिये मुझे आपको सूचना देनीपडी।"

दम्पतीने इस चिट्ठीकोभी पढा। इसके अक्षर देखनेसे उन्हें विदित हुआ कि चिट्ठी अवश्य सुशीलाके जेठकीहै। साथही बडे भैयाके पत्रसेभी उन्हें विदित हुआकि उन्होंने इस चिट्ठीकी सत्यताके विषयमें पक्का निश्चय करलियाहै। इन दोनों बातोंसे निश्चय होता था कि सुशीला अवश्य कलंकि-

नीहै-अवश्य कुलटाहै और उसने माबापका नाम धूलमें मिलाकर दुनियामें उन्हें मुख दिखाने योग्य नहीं रक्खा।इस बातकी सचावट उस तारसेभी मालूम होतीथी जो पंडित रिपुसूदनको नारायणगंजसे मिलचुकाथा परंतु सुशीलाका कहना इस बातके बिलकुल विरुद्ध था। उसके लेखमें दृढता थी और जब वह अपनी सचाई सिद्धकरनेके लिये सबतरहसे तैयार थी तब उन्होंने निश्चय करनेके लिये वसंतपुर जानेका पक्का विचार किया इसी विचारसे किया इसी विचारसे उन्होंने भाईको चिट्ठी लिखकर उसमें अपने आनेकी तिथि नियत की किन्तु सुशीलाकी ओरसे उनका चित्त संतुष्ट नहींथा इसलिये उसकी चिट्ठीका उत्तर न दिया।बडे भाईकी चिट्ठीमें उन्होंने सुशीलाके विषयमें केवल इतनाही लिखा।उन्होंने लिखा कि-"सुशीलासे कहदेना कि मैं अब शीघ्रही आताहूं।यदि वह झूंठी निकली तो जो गति तुम्हारी हुई है वही-उससेभी बढकर मेरी होगी। तुमने जितने दिन सहन कियाहै उतने मिनटभी मैं न सहसकूंगा। यदि कलंककी बात सत्य निकली तो समझलेना कि मैं मरनेके लिये आताहूं।

इस चिट्ठीके पिछले वाक्यको पढकर पंडित रिपुसूदनकी स्त्रीको बडा दुःख हुआ। उसने पतिसे हाथ जोडकर कहाः-

"प्राणनाथ, ऐसी बात न लिखो। ऐसा विचार भूलकरभी मनमें नलाओ। जो आपको इतनाही दुःख है तो मैं कभी जाने न दूंगी। मेरे विना आपका जाना कदापि न होगा। मैं हाथ जोडतीहूं-मैं आपके पैरों पडतीहूं। ऐसे भयकी जगह न चलो।"

"नहीं अब अवश्य चलना पडेगा। तूभी तो मेरे साथहै। यदि मुझे किसीतरहका अनुचित साहस होतो मुझे बुरा कामकरनेसे रोकना। मुझे बुराईसे रोकना तेरा कामहै। तू मेरी अर्द्धांगिनी है।"

"हां! नाथ, मैं आपकी दासीहूं परंतु आदमीका क्रोध बुरा होताहै। जब आदमीके शिरपर क्रोधका भूत सवार होताहै तब उसे कुछ भलीबुरी नहीं सूझती है।"

"हां! मैं यह बात जानताहूं परंतु जो कुछ होगा विना विचारे न होगा।"

"नहीं! नहीं!! विचारे और विनाविचारेकी बात मैं कुछ नहीं जानती परंतु आप मुझसे स्वीकार करलो कि मैं ऐसे साहसका स्वप्नमेंभी विचार न करूंगी।

पंडित रिपुसूदनने स्त्रीकी बातोंसे समझा कि उसकाजी बहुत दुखगया है इसलिये उन्होंने अपनी प्यारीका मीठे शब्दोंसे संतोष किया। उन्होंने उसके गलेमें बाँह डालकर आंखोंके आंसू पोंछे। उससे प्यार किया और हंसी खुशीकी बातोंमें उसे बहलाकर गुदगुदीसे उसे हंसादिया। उन्होंने उसके हृदयका भय दूर करनेके लिये कहदिया कि-"ये वाक्य मैंने केवल सुशीलाको दबानेके लिये लिखदिये हैं। मैं अबतक सुशीलाको सती समझताहूं। मुझे निश्चय है कि जिस माताके सतीत्वका दुनियाभरमें डंका बजरहाहै उसकी बेटी कभी कुलटा न निकलैगी। कहावत प्रसिद्ध है कि—"

"माता जैसा पूत और काता जैसा सूत।"

प्रकरण २०.

बागमें छेडछाड।

कार्तिकका महीना था। कृष्णपक्षकी अँधेरी रात बीतकर सवेरा होनेका समय आपहुंचाथा। भगवान भुवनभास्करके आगमनको देखकर क्षीणचन्द्रमा फीका पडगयथा। आकाशके तारे डरके मारे छिपनेको पश्चिमकी ओर दौड जातेथे। लालटैनोंके प्रकाशमें सफेदी आगईथी। बागमें शीतल और मंद पवन चल २ कर सुगंधित पुष्पोंकी सुगंधिसे सारे बागको सुगंधित कररहाथा। बागकी हरियालीके अँधेरेमें काली चादरके बीच२सडककी श्वेत लकीरके सिवाय उस समय कुछभी दिखलाई नहीं देताथा। फुलवाडीके बडे२कितोंकी आडमें बडे२पेड खडे होकर दूरकी नजरोंको रोक रहेथे। प्रातःकालकी धुँधलाहटको पेडोंकी परछाईंने छिपाकर बागमें कई जगह खासी अंधेरी रात कररक्खी थी। भगवान

दिननाथकी अगवानी करनेके लिये पेडोंपर बैठीहुई चिडियें अपना२ बसेरा छोडकर उड़नेकी तैयारी कर रहीथीं। चिडियोंकी चकचकाहट बागके पत्तोंकी खडखडाहट और कुत्तोंके भोंखनेसे बागका सन्नाटा नष्ट होरहाथा। ऐसे समयमें दश२पांच२रमणियोंके झुंड बागमें होकर नदी किनारे स्नानकरने जातेआतेथे। इनके हाथमें एक२तांबेका कलश था। ये भजन गाती हुई जातीं और भजन गातीहुईही आतीथीं। अँधेरेमें इनका मुख अच्छी तरह दिखलाई नहीं देसकताथा इस लिये नहीं कहसकतेहैं कि ये कौन थीं परंतु इतना निश्चय है कि ये हिन्दूरमणियां थीं और कार्तिकस्नानके लिये बागमें होकर नदीपर आतीजातीथीं। नदीपर जानेका मार्ग और भी था परंतु उधर जानेसे जानवरके चोट करनेका भयथा इसलिये थोडाबहुत फेर खाकरभी स्त्रियां बागकी राह नदी नहाने जाया करतीं थीं।

जिस समय चार पांच स्त्रियें बगलमें जलभरा कलश दबाये नदीसे स्नानकरके पेडोंकी झुरमुटमें होकर निकलीं किसी आदमीने एक पेडकी ओटमेंसे निकलकर उस स्त्रीका कलसा पकड़ा जो ठोकर लगनेके कारण उनमेंसे कुछ पीछे रहगईथी। कलशा छीनकर ज्योंही उसने उस स्त्रीका रास्ता रोका उसने "चोरहै२! बहन ठहरो! अरे दैया अब मैं क्या करूंगी? अरे मुझे अकेली छोडकर कहां जातीहो। हे राम बचावो। अब मैं क्या करूंगी?" की चिल्लाहट मचाई। चोरका नाम सुनतेही साथकी रमणियां उसे छोडकर भागगईं और वह उस आदमीके पास अकेलीही खडी रहगई। डरके मारे उसका शरीर कांपनेलगा, उसकी घिग्घियां बंधगईं और उसका वहांसे कहींकोभी एक पैर हटनेका साहस न हुआ। जब चार पांच मिनटतक वह योंही चुप्प साधे जगहकी जगह खडी रही उस आदमीने कहाः—

"प्यारी, मैं चोर नहीं हूं। तेरे प्यारका भिखारी हूं। तुझे दुःखित देखकर मेरा कलेजा फटाजाताहै। चल मैं तेरा कलशा तेरे द्वारतक पहुंचाये देताहूं। मैं चोर नहींहूं। जबसे मैंने तुझे देखाहै तैनेही मेरा चित्त

चुरालियाहै। प्यारी जरा मुझपर दयाकर। मैं तेरे विना मरा जाताहूं।"

"मेरा कोई प्यारा नहीं है। मेरे प्यारका अधिकारी गया। अब किसी भिखारीको भीख नहीं मिलैगी। तू चोर नहीं साहूकार सही मुझे तेरी दया नहीं चाहिये। तू मुझे कलशा दे दे और अपना रास्ता नाप। मैं दुखियाही अच्छी हूं मुझे तेरी ऐसी दया नहीं चाहिये।"

"तुझे दया नहीं चाहिये तो न सही परंतु मैं तुझपर अवश्य दया करूंगा। मेरे बैठे प्यारी–मेरे बैठे तू अपमान सहै, तू रोटियोंको तरसे और मैं देखता रहूं। यह मुझसे कभी न होगा। चल प्यारी, मेरे साथ चल और मौज उडा। ऐसे धर्मके ढकोसलोंमें क्या रक्खाहै?"

ऐसा कहकर ज्योंहीं उस युवाने युवतीकी धोती पकडी उसने डाटकर कहाः–

"क्योंरे दुष्ट तूं मुझे अकेली समझकर मुझपर हाथ चलाताहै? खबरदार! मेरे हाथ लगाया तो! मैं अभी चिल्लाकर तुझे पकडवादूँगी। बागके मालियोंको बुलाकर तुझे पकडवादूंगी।"

"नहीं प्यारी, मैं तुझपर कभी जबर्दस्ती न करूंगा! तेरी राजीमें मेरी राजी है परंतु बागके मालियोंका मुझे डर न दिखला। वे सब मेरे हैं। उनको मैंने मिलारक्खाहै और यदि मैं चाहूं तो एकही सीटीकी आवाजसे उन्हें बुलवाकर तुझे पकडवा सकताहूं। तेरेलिये बागकी फाटकपर एक गाडी खडी है। जो तू अभी मेरे साथ चलनेको राजी हो तो अभी चल। तेरे घरवालोंको स्वप्नमेंभी खबर न होगी कि तूं कहांगई और तू इस दुःखसे छूटकर जन्मभर मौज करेगी। बस मुझे तुझपर दया आती है"

"मुझे तेरी दया नहीं चाहिये। मैं हाथ जोडतीहूं! मुझे अपने घर जानेदे। मैं पहले ही बदनामीके बरछे सहरहीहूं। यहां देरी होनेमें मेरे घरवाले और नाम धरेंगे। मुझे घर जानेदे।"

प्यारी, बदनामी जब एक बार होचुकी फिर डर काहेकाहै। डरे मत

प्यारी, डरे मत । मुझपर दया कर । मैं तेरे विना न जियूंगा । मुझे अपना प्यारा बनाकर जीवदान दे ।

जिस समय इन दोनोंमें इस तरहकी बातें होरहींथीं दूरसे आदमियोंकी पैरकी आहट आई । आहट पातेही इस आदमीने फिर कहाः–

" बोल, अब क्या कहती है ? ये मेरे साथी तुझे पकडनेको आपहुंचे । तेरी अभी चलनेकी इच्छा हो तो चल। सवारी तैयार है । तू आज चलना न चाहे तो न सही।म तुझसे जबर्दस्ती न करूंगा परन्तु अभी मुझसे स्वीकार करले कि मैं तेरी बात मंजूर करतीहूं । मुझे तेरा विश्वासहै । तू अभी मंजूर करले । मंजूर करनेके बाद यदि तू मुकर भी गई तो मेरा कुछ नुकसान नहीं।मैं तुझे घरसे उठालेजाऊंगा।तुझे सात तालेमेंसे उठालेजाऊंगा। तुझे लेजाऊंगा और तुझपर दया करके, तुझे दुःखसे छुडाकर अपना कलेजा ठंढा करूंगा । "

इस पुरुषकी दयाका नहीं–इसके प्रेमका नहीं--इसकी आशाका नहीं किन्तु इसके भयका उस स्त्रीपर बहुत असर पडा । इसने समझ लिया कि अवश्यही यह मुझे पकडकर लेजायगा । बस इसलिये उस रमणीने कहा– और समय टलनेकेलिये दबे शब्दोंमें कहदिया कि--अच्छा फिर कभी"-- बस इतना सुनतेही वह पुरुष इसकी गगरी रखकर बोलाकिः--

" प्यारी, बस मुझे मारना जिलाना तेरे हाथहै मैं तेरी जूतियोंका चाकर हूं । तेरा दास बनकर रहूंगा । तूं सुख भोगेगी और इन सब दुःखोंसे छूट-कर ऐसे मजे उडायेगी जैसे कभी तीन जन्ममें भी तैने न देखे होंगे । बस प्राणप्यारी, एक बार मेरी ओर नजरभर देखले अब मैं जाताहूं । "

जिस समय उस युवाके मुखसे ये वाक्य निकले बागमें उन आदमि-योंके पैरोंकी आहट बहुत पास आगईथी । अब युवा वहां बिलकुल ठहर न सका । उसने एकबार फिर बडे प्रेमसे देखा और कहाः–

" अच्छा, अभी तो मैं जाताहूं मेरी बातको न भूलियो । मेरे प्यारकी याद रखियो । अपने सुखका विचार करियो और अपने वचनका निर्वाह करियो । "

सुनतेही सुशीला चुप होगई । उसने लज्जासे शिर नीचा करलिया और फिर समय टालनेके लिये कहा–"अच्छा तुम जाओ ।" बस इस बातसे कामान्ध युवाने समझलिया कि युवतीने मेरे प्रेमकी भिक्षा स्वीकार करली। उसने समझलिया कि युवती अब मेरी होचुकी । बस इसलिये वह वहांसे मनमोदक बनाता हुआ, मनके लड्डुओंका स्वाद चखकर मनहीमन प्रसन्न होता हुआ वहांसे चलदिया । चल न देता तो अब करताही क्या ? वह खूब जानताथा कि जिन आदमियोंके पैरोंकी आहट आरहीहै वे गश्तके सिपाहीहैं । उसे उनके हाथसे पकडे जानेका भयथा बस इस लिये दबे पांव वहांसे चलदिया और उसी बागमें कहीं लीन होगया ।

जब इसतरह सुशीलाका उस युवासे छुटकारा हुआ वह अपनी गगरी लिये हुए घर गई।गई तो सही परन्तु उसका इस घटनासे जी धडकता था, उसका शरीर कांप रहाथा, उसे रोमांच होआयेथे और वह लज्जाके मारे मरी जातीथी । यदि धरतीमाता उसे कहीं जगह देदेती तो वह उसी बागमें धरतीके पेटमें समाजाती । वह कभी घर न जाती परन्तु ऐसा होना असं-भवहै । बस इसलिये वह घरगई । गई अवश्य परन्तु उसके मनकी व्यथा न गई । वहां जानेपरभी उसका मन पूजा पाठमें न लगा । उसने जप करनेके लिये माला ली परन्तु उसका एकभी मनका न हटासकी । वह विष्णुसहस्रनामका पाठ करने बैठी परन्तु उसका एकभी पन्ना न उलट सकी । उसने गीता उठाई उसने रामायण खोली परन्तु उसका जी किसीमें न लगा । वह अपनी कोठरीमें इधरसे उधर ज्यों २ चक्कर लगाती थी उसके हृदयकी व्यथा बढती जातीथी । उसके मनमें बडे भयं-कर विचार उठने लगे । उसने कईबार सोचा कि इस जीनेसे तो आत्मघात करके मरजाना अच्छाहै । उसने अपने मनमें कहाः–

"हाय ! हाय ! ! मैंने बडा अनर्थ करदिया । मुझे धिक्कारहै । सौ बार धिक्कारहै मुझको । अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये ही सही-समय टालनेके लियेही सही परन्तु मैंने उस युवासे ऐसे ढंगकी बातचीत क्यों की जिससे उसे निश्चय होगया कि मैं उसके प्रेम की

भिक्षा स्वीकार करतीहूं । मैंने इतनाभी क्यों कहा कि-" अच्छा फिर कभी "-वास्तवमें मैंने बडा अनर्थ किया । इतना कहनेके बदले मैं वहां प्राण छोडदेती तो अच्छा होता । हाय ! माता सुंदरी, मुझे तेरी तरह उस दुष्टको मजा चखानेका साहस न हुआ । क्या माताकी तरह मेरे दो हाथ न थे, क्या उसकी तरह परमेश्वर मेरा सहायक न था ? सब कुछ था परन्तु एक साहस न था । इसी साहसने-इसी हृदयकी दुर्बलताने आज मुझसे यह अनर्थ करवाया । यदि वह मुझपर बलात्कार करना चाहता तो मेरा करही क्या लेता ? क्या मैं बिलकुल मिट्टीकी हूं जो उसके अंगुली लगातेही मरजाती । और यदि मरही जाती तो क्या मेरे विना संसार सूना होजाता । हाय ! मैंने बडा अनर्थ किया । मैं उस दुष्टसे झूठ बोली । खैर धर्मरक्षाके लिये झूठ बोलनेमें पापनहीं है परंतु झूठ बोलनेकी आवश्यकताही क्या थी ! मुझे अन्ततक स्पष्ट नाहीं करना चाहिये था । यदि वह मुझपर बलात्कार करता तो उसे दंडदेना चाहिये था । अवश्य ही भूल बडे २ से होतीहै तब मैं किस गिनती में हूँ परन्तु ऐसा हुआ क्यों ? हुआ इसी लिये ना कि मैं माता पिता और पतिके उपदेश भूलगई । यदि उनके उपदेशपर ध्यान देती तो कार्तिक स्नानको बाहर ही क्यों जाती ? मैं घरपरस्नान करके अपने व्रतका पालन कर सकती थी । मैंने पतिकी आज्ञा भंग करनेका दंड पालिया । खैर अब घरसे कभी ऐसे समयमें अकेली बाहर न जाऊंगी । आजभी मैं अकेली न थी परन्तु जो चोरका नाम सुनतेही भागगई उनका साथ किस कामका ? इस पापका प्रायश्चित्त अवश्य करना चाहिये । खैर प्रायश्चित्त तो करूंगीही परन्तु पहले यह बात अभी चलकर भौजाईको सुना देना चाहिये। मैं अभी उनको सुनाकर पश्चात्ताप करूंगी । यही अच्छा उपायहै।उपाय अवश्यहै परन्तु उन्होंने जी खोलकर कह देनेपरभी मुझे दोषी समझा तो यदि इस बातके सुननेसे उनका संदेह बढा तो ? कुछ भी हो मैं अवश्य कहूंगी । हां मैं कहूंगी और कहकर अपने हृदयका ताप मिटाऊंगी परन्तु मुझसे ऐसी भूल क्योंहुई ? "

जब सुशीला इस बातका विचार करने लगी उसकी एकाएक दृष्टि दीवारपर चिपके हुए कागजपर पडी। उसे पढतेही वह चौंकी। उसने उसे एक बार पढा, दो बार पढा और दशबार पढा और पढकर निश्चय किया कि बस यही कारण है। यही कारण कि मुझे आज ऐसा अवसर देखना पडा। वह उस कागजको लिये हुए अपनी कोठरीसे निकली। उसने भौजाईके पास जाकर "अथ" से "इति" तक बागकी सब घटना कह सुनाई। पश्चात्ताप उसने थोडी देर पहले अपने मनमें कियाथा, वही भौजाईके सामने किया। उसने उससे भी विशेष कहा। उसने रोरोकर कहाः—

"भाभी अवश्य मुझसे यह पाप बनाहै। अवश्य ही मैं अपने चरित्रकी उस दुष्टसे रक्षाकर सकीहूं परन्तु इस कामके लिये मैं उससे झूंठ बोली। झूंठ बोलकर मैंने अपनी जिह्वा कलंकितकी। झूंठ बोलकर अपना छुटकारा करनेके बदले में माता सुंदरीका अनुकरण करती। उसका अनुकरण करके उस दुष्टको दंड देती तो अच्छा होता।"

"नहीं, स्वधर्म रक्षाके लिये झूंठ बोलनेमें विशेष पाप नहीं है"

"हां यह मैं भी जानतीहूं परन्तु इस पापके बिनाभी तो मैं उससे बच सकतीथी। बस यही व्यथा मेरे हृदयको दुखारहीहै। इस कारण मैं कृच्छ्र चांद्रायणव्रत करूंगी। केवल मुझसे मिथ्या बोलनेका, मिथ्या बोलकर उस दुष्टको यह जतला देनेका ही पाप नहीं बनाहै वरन मैंने वहां अकेली जाकर इस श्लोकका उपदेशका अनादर किया। स्त्रियोंके धर्मकी रक्षाके लिये यह श्लोक-इसके अनुसार बर्ताव बहुत अच्छा उपाय है। यदि मैं इसके अनुसार चलकर बागमें अकेली न जातीतो आज ऐसी घटनाका क्यों अवसर आता? इसका अवश्य ही कडा बर्ताव होना चाहिये। जो स्त्रियां इसके अनुसार चलती हैं वे कभी धोखा नहीं खातीहैं। क्यों कि "न रहैगा बाँस और न बजैगी बासुरी" यह कहावत ठीक ही है। न वे घरसे बाहर जाती हैं, न वे अकेलेमें परपुरुषोंसे मिलती हैं और न उन्हें ऐसे कामका सामना करना पडताहै। मेरी समझमें यही प्रणाली अच्छीहै।

जो लोग पर्दा प्रणालीकी निन्दा करतेहैं वे भूलतेहैं झखमारतेहैं । पर्देका प्रयोजन यह नहीं है कि स्त्रियोंको सात तालेमें बन्दरखना चाहिये। इसका मतलब यही है कि उन्हें ऐसे कुकर्मकरनेका अवसर न देना चाहिये।"

जिस समय उसने इसतरह भौजाईके आगे पश्चात्ताप किया वह रो २ कर आंसुओंकी धारा बहाती रही, अपने आपको कोस २ कर छाती पीटती रही और इसतरह अपने कलेजेकी होलीको ठंढा करतीरही। इसने इसबातके प्रायश्चित्तके लिये कृच्छ्रचांद्रायणव्रत किया तब पतिकी आज्ञाकी उपेक्षा करनेके दुःखसे उसका संतोष हुआ। यह स्त्री और कोई नहीं इस चरित्रकी नायिका सुशीलाथी और जिस श्लोकने उसे ऐसे पाप कर्मसे बचाया वह यह था:--

"मात्रा स्वस्रा दुहित्रा वा न विविक्तासनो भवेत्।
बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वान्समपि कर्षति।" *

प्रकरण २१.

कुटनीका जाल।

"कई दिन हुए। प्यारीकी कुछ खबर नहीं मिली। जब वह बागम मिलीथी उसने "फिर कभी" मिलनेका प्रण कियाथा--प्यार करनेकी आशा दीथी परंतु अब उसकी खबर नहीं है। तबसे उसने बागका आना कार्तिक नहाना छोडदिया। पहले, उसकी कोठरीकी खिडकियां खुली रहतीथीं तब उसकी ओर ताकझांक करनेका अवसर मिलताथा। और कुछ नहींतो आंखें सेकनाही नसीब होताथा। यदि अबभी उसकी कभी खिडकी खुली देखूं तो इशारेसे उसे समझा सकताहूं-- उसे हरतरह पिघला सकताहूं--अपनी आखोंका जादू डालसकताहूं परंतु करूं क्या? क्या उसने सचमुचही उससमय सच्चा प्रण किया था? नहीं २ वह अवश्य सस समय टाल बतलागई। वह उस माकी बेटीहै। वह कभी हाथ आने-

---

* माता बहन और बेटीके साथभी अकेलेमें न मिलना चाहिये। इन्द्रियां बडी बलवान् होतीहैं। विद्वान्कोभी खैंचकर पापमें प्रवृत्त करदेतीहैं।

वाली नहीं है। खैर उसने टाल बतलाई तो क्या हुआ ? मैं कैसाहूं ! मैं उसे अवश्य हाथमें लूंगा। उसके साथ मैं अवश्य मौज उडाऊंगा। उसे अपनी प्यारी बनानेके हजार उपायहैं। एकमें " मैं सफल न हुआ तो खैर ! दूसरा उपाय ! दूसरेसे न होगा तो तीसरा उपाय करूंगा परंतु उसे छोडूंगा नहीं।"

इसतरहका विचारकर बाबू रसिकविहारीने अपनी एक बुढिया पडोसिनको बुलाया। बुढियाके बत्तीसों दांत गिरकर मुंह पोपला होगयाथा, आंखें, बैठकर, गाल सूखगयेथे। मुंहपर झुर्रियां पडरहींथीं। कमर लचकर शिर धरतीसे बातें करताथा।लकडीके सहारे चलतीहुई ऐसी बुढिया बाबूके पास पहुंची। बाबू रसिकविहारीने उसका बहुत सत्कार किया,पांच रुपये बुढियाकी मुट्ठीमें थमाकर पचीस और देनेका प्रणकिया। बुढिया इस बातपर राजी न हुई तो उन्होंने दश और दिये। बुढियाने इसपरभी बहुत कुछ शिर हिलाया। उसने कहाकि ऐसी लडकीके आगे मेरी दाल न गलेगी।" खैर बाबूने दश और दिये और काम होजानेपर सौ रुपये देनेका प्रण किया। तब बुढिया राजीहोकर वहांसे चलदी। वह चलीतो गई परंतु पांच सात दिन तक बुढियाने बाबूकी बिलकुल खबर न ली। इसपर बाबू बडे घबडाये। स्वयं बुढियाके मकानपर दौडेगये। उससे हाथजोडे--अपनी बेहिसाब बेकली दिखलाई और भरपूर लालच देकर बुढियाको इस कामपर खडी किया।

बाबू रसिकविहारी पूरे रसिकथे। वह सदा बांकी अदासे रहकर स्त्रियोंको फंसानेका फंदा अपने पास रखतेथे। उन्हें इस बातका घमंड था कि कैसीभी कोई स्त्री सती क्यों न हो उसे बिगाडदेना हमारे बायें हाथका खेलहै। वह जब अपने इष्ट मित्रोंमें बैठते इस बातकी खूब डींगें हांका करतेथे। बस्तीमें ऐसी कोई वेश्या न थी-- ऐसी कोई कुटनी न थी-- ऐसी कोई कुलटा न थी जिससे बाबूकी दोस्ती न हो। खानेपीनेमें धर्मका आडंबर करना उनकी नजरमें वाहियात था। वह व्यभिचारमें पाप कभी स्वप्नमेंभी नहीं समझतेथे परंतु इसपरभी बाबू बडे सभ्यथे। वह

नये २ समाजोंके मेम्बर बनकर खूब लेकचर फटकारते किन्तु अपने व्याख्यानोंमें जिन दुर्गुणोंकी निन्दा करते उन्हींको काममें लाना अपना कर्तव्य समझतेथे । यह बाबूसाहबके गुणोंका केवल नमूनाहै ।

बाबू रसिक विहारीके बहुत कुछ कहने सुनने--बहुतेरी खुशामद मिन्नतकरने और बहुत २ लालच देनेपर बुढिया राजी तो हुई परंतु इस कामका पैगाम लेकर सुशीलाके पास जानेका उसे साहस न हुआ । साहस न हुआ तो न सही परंतु लालच बार २ उसे दबारहाथा । अंतमें एक दिन वह समय साधकर उसके पास गई । उस समय पंडित शत्रुसूदनके घरमें सुशीलाके सिवाय कोई न था । सुशीलाके भाई भौजाई और भतीजे भतीजी कहींका न्योता पाकर भोजनकरने गयेथे । विधवा सुशीलाकी न तो कभी पराया अन्नखानेकी इच्छाथी और न ब्रह्मचर्य पालन करनेवाली विधवाओंके लिये पराये घर भोजनकरनेकी उन लोगोंमें चालथी । इसपर विशेषता यह कि पंडित मोहनचंद्रको मरे अभी छः मासभी नहीं हुएथे। बस इसलिये मैदान सूना पाकर बुढिया सुशीलाके पास पहुँची । सुशीला–विधवाका शिर मुंडा देखकर-उसे श्वेतधोती पहने विधवाओंके वेशमें देखकर बुढिया बहुत रोई।उसने दोचार बार इसीबातका शोक दिखलानेके लिये अपनी छाती पीटडाली । उसने इसतरह अपना सच्चा दुःख दिखलाते हुए कहा ।

"बेटी, तेरी ऐसी सूरत देखकर मेरा कलेजा फटता है । बचपनमें मैंने तुझे गोदखिलायाहै । मैं रांड तेरा दुःख देखनेको अबतक जीतीहूं । रामजी मुझे मौतभी नहीं देता । बेटी, मैं क्याकरूं ? मेरा जी जलताहै इसलिये आज तेरे पास आईहूं । मैं कई दिनसे सुन चुकीहूं कि तू यहां आई है, तेरे दुःखकी बातभी मुझे मालूमहै पर मैं क्या करूं ? मैं बीमारथी इसलिये अबतक तेरे पास न आसकी । अब मेरे लायक कोई काम हो तो मुझसे कहना । मैं आधी रातको तेरा काम करनेको तैयार हूं । बेटी ऐसा करियो जिससे इस दुःखसे छूटो ।"

"तुम्हारी मुझपर दयाहै जो तुम मेरे दुःखसे इतनी दुःखित होतीहो परंतु मेरा दुःख मेटनेवाला केवल भगवान् है। जब मैं मरकर मसानोंमें जलूंगी तब मेरा दुःख छूटैगा।"

"नहीं बेटी, ऐसा न कहो। मरनेके दिन मुझ रांडके हैं। मुझे मरने दो तुम्हारे बदले तुम्हारी बला मरै। मैं तुम्हारी बलैयां लेतीहूं। अभी तुम्हारे खानेपहननेके दिन हैं। अभी मरनेका नाम न लो। अभी तुमने दुनियांमें आकर देखाही क्या है? बेटी जो कुछ होनाथा सो हो चुका। संसारमें ऐसाही होता आयाहै पर क्या काम किसीके रुकते हैं? लोक-लाजका डरहै तो छिपकर सही पर बेटी तुम जैसी जवानसे कब रहा-जायगा? अभी तुम्हारी उमरही क्या है? बहुत होगी तो पंद्रह सोलह वर्षकी होगी। अभी तुमने क्या खाया, क्या पहना? खाओ पहनो और मौज करोः-"

"नहीं नहीं! कदापि नहीं! हरगिज नहीं! मेरे सामने ऐसी बातोंका नाम न ले। मैं हाथजोडतीहूं। मैं तेरी चिरौरी करतीहूं। तू यहांसे जा और ऐसी बातें किसी औरसे कर। मेरे यहां तेरी दाल न गलैगी। और यहांसे जाकर उस निपूते रसकियासे कहदे कि वह मेरा खयाल छोडदे। उसी दुष्ट, उसी पाजीने तुझे भेजा होगा। मैं उसे जानतीहूं। वह बहुतेरी विचारी अबलाओंको फंसाकर उन्हें बिगाडचुकाहै। वह बडा लुच्चाहै।"

"बेटी, वह कैसाही लुच्चाहैपर तेरे ऊपर मरामिटताहै। जबसे तैने उससे बागमें मिलकर प्यार करनेका बचन दियाहै बस उसका बहुत बुरा हालहै। उसे तेरेबिना न सोते चैनहै और न जागते चैनहै। उसने तबसे खाना पीना छोडदियाहै। जरा उसपर--क्या अपने ऊपर दयाकर। छोडदे ऐसे धर्मके ढकोसले और मौजकर। इन बातोंमें खूबा क्या है? तूं बाहरसे लोग दिखावेकी चाहे जैसी बातें बना पर मैं जानतीहूं तेरा कलेजा क्या कहताहै। बस ऐसी ऐंठकी बातें छोडदे। उस विचारेको-उस मरेको न मार। वह पहलेही तेरे नयन बाणोंसे मरचुकाहै-घायल होचुकाहै। भ-

ला तूंही कह, तेरा उसपर मन नहीं था तो तैने उसे बागमें वचन क्यों दियाथा, उससे खिडकीमें बैठकर आंखें क्यों लडाईथी ? मेरे आगे बातें न छिपा। दाईसे पेट नहीं छिपताहै। भला तूं पाकदामन ही है तो नारायणगंजमें तेरी फजीहती क्यों हुई ? ऐसी बदनामीसे तो एकको करलेना अच्छा है।"

"बस बस बुढिया (उसका मुहं पकड कर) बस अब अधिक मत-बक। तू बहुत बकचुकी। मैंने उस लुच्चेको कब वचन दियाथा ? मैंने कब आंखें लडाई थीं ? झूठी कहींकी, लुच्ची रांड आई है मेरे पास कुटनीपन करने। जा यहांसे। निकल मेरे घरमेंसे। खबरदार ! फिर कभी मेरे पास आईतो ! मैं भैयासे कहकर तुझे जूते पिटाऊंगी।"

"अरी छोकर्डा ! देखो कलहकी छोकडी मुझसे जाले करती है। मैं चाहूं तो अभी तुझे फजीहत कर डालूं और तुझे झखमारकर मेरी बातें माननी पडें। मैं तेरे भलेके लिये कहतीहूं। तूं जिद छोडदे और उससे प्यारकरके मजे उडा।"

"देखो रांड मुझे फजीहत करनेकी धमकी देतीहै। मैं तेरी घुडकी में आनेवाली नहींहूं। जरा कह तो, वह कौनसी बातहै जिससे मुझे झख मारना पडेगा ? बतला।"

"हां ! हां ! बतलाऊंगी। तैने पहले तो चिट्टियां भेज २ कर उस बिचारेको फंसायाहै और अब मुझे डरातीहै। मैं डरनेवाली नहींहूं। मैं तुझसे कभी न डरूंगी। यादरख मैं तेरे भलेकी कहतीहूं। मैं तेरा भला चाहती हूं। मैं तेरा भला न चाहती तो तेरे पास गालियां खानेको ही क्यों आती ? हां मैं रांड हूं, हजार बार रांडहूं, पर तेरी भरी जवानी देखकर तुझपर दया करने आईहूं। नहीं तो मुझे क्या पडीथी जो मैं यहां आकर तेरी गालियां सुनती। खैर ! तूं मेरा कहना न मानेगी तो न सही, मैं चली जाऊंगी पर तूं पछतावेगी। नारायणगंजकी तरह झाडोंमें जोबन लुटानेसे किसीकी होकर रहना अच्छाहै।"

"रांड! तू बार २ नारायणगंजकी दुहाई देतीहै परंतु किसी दिन दिखलादूंगी कि सब बातें झूंठी हैं। किसी शत्रुने मुझे बदनाम कियाहै। बस तू जा यहांसे, चलीजा यहांसे। अब तो मेरा पिंड छोड। मैं तुझसे अब बात करना नहीं चाहती। तूं जा! तू जा बस अब जा!!"

"हां हां! मैं चलीजाऊंगी! मैं यहां रहकर तेरा क्या छीनतीहूं। मैं आदमी तो नहीं हूं जो तुझसे जबर्दस्ती करूंगी। पर देख फिरभी कहतीहूं। मेरी बात न मानैगी तो तुझे पछताना पडैगा। एकबार अपने कलेजेपर हाथ रखकर पूंछ जो वह क्या कहताहै। इस जोबनको योंही मत जला। दुनियांमें आईहै। मजे उडा क्यों रो२कर अपना जी जलाती है? तू खुलाखुली कामकरना चाहै तो वह तुझसे शादी करनेको तैयारहै। आजकल विधवाओंकी शादीभी होनेलगी है और तुझे इसमें लाज आती हो तो मैं तुझसे उसके अकेलेमें मिलनेका ढंग निकाल सकती हूं जो किसीको जरासीभी खबर होजाय तो मेरे नाक कान काटलेना। बस और तुझे क्या चाहिये? मैं तेरे लिये—तुझपर दयाकरके नाक कान—शिरतक कटवानेको तेयार हूं। बेटी मानजा! बेटी जिद्द न कर। नहीं तो पछतावैगी। और जब कामदेव सतावैगा मुझे हजार निहोरे करके बुलावैगी। आजकल क्या कोई मनको रोकसकताहै? जब देवताओंसे नहीं रुका तब तुझसे तेरी जैसी जवान छोकडीसे सकसकताहै? हाय! हाय! तेरे शरीरसे जवानी टपकी पडती है। यह देख तेरे गोल२ गुलाबी गाल। यह देख तेरी हिरनीकीसी बडी २ मदभरी आंखें, यह देख तेरे अनारके दानेसे लाल होंठ जरा इन्हींपर रहम कर। मुझे कौडी पैसा नहीं चाहिये। मेरी लकडियां मसानोंमें जापहुंचीहैं। मुझे रुपया लेकर क्या करनाहै? मैं तेरे भलेके लिये कहतीहूं।जरा सोच फिर सोचले। तू आज कलेजेको चाहे जितना कडाकरके बातें बना पर जिस दिन वह काकडा जवान वह गुलफाम आशक तेरे सामने आवैगा तू सब भूलकर उसकी चेरी बनजायगी। तेरी सब बातें धरीं रहैंगी। तू पिघलैगी और फिर पिघलैगी। तैने देखाहै।तू आप जानती है कि वैसा जवान वैसा रसिक हजारोंमें लाखोंमें नहीं है

उस वस्ती भरमें कोई है तो बाबू रसिकलाल। मैं क्या करूं। मैं रांड बूढी होगई। मुझे अब कोई छदामकोभी नहीं पूछता मेरे हाथके कोई करेभी नहीं खाता पर उसे देखकर मेरा भी जी पिघलताहै। मैं जवान होती तो तुझपर डाह खाती–तुझे अपनी सौत बनती देखकर मैं मरामिटती पर क्या करूं ? मेरा जमाना गया। मुझे अब कोई सूंघताभी नहींहै। तेराभी दिन ऐसा आवैगा। जवानी चार दिनकीहै। इसके लिये इतना घमंड न कर। फिर मेरी तरह तुझेभी कोई न पूंछेगा। चारदिनमें जो कुछ करनाहो करले। चांदनी चारही दिनकी होतीहै।"

"बस बस अब बहुत बकली ! अब जा ! अब यहांसे जा ! मुझे तेरे उपदेश नहीं चाहिये। निकलजा मेरे यहांसे। अभी भैया आवैंगे तो क्या कहैंगे ! जा ! मैं हाथ जोडतीहूं। जा यहांसे। फिर मुझे अपनी सूरत न दिखलाना। बस अब जा !"

जब इतना कहनेपरभी बुढिया वहांसे न टली तब सुशीलाको अधिक क्रोध आया। उसने बुढियाका हाथ पकडकर घसीटा और घसीटकर घरसे बाहर निकालदिया। बुढिया अवश्य वहांसे गई परंतु जाते२ इतना फिरभी कहगई कि "एकबार इसबातको अकेलेमें फिर सोचना। जो मेरी बात न मानैगी ? तो तुझे पछताना पडेगा–झखमारकर उसकी बनना पडेगा। बस इतनेहीमें समझलेना। बुढियासे पिंड छुडाकर जब सुशीला अकेली हुई तब उसने रोनेका लग्गा लगाया। वह लुच्चे रसिकविहारीकी बातें यादकरके बहुत घबडाई। वह अपने दुःखोंको अपने कष्टोंको यादकरके बहुत रोई। ससुरालसे निरादरकरके बदनामी उठाकर वह निकलही चुकीथी ! गहनागुरिया छिनजानेसे उसके पास खानेको मुट्ठीभर चनेकाभी ठिकाना नहीं रहाथा। छोटे भाईको चिट्ठी लिखनेपरभी उसका उत्तर जब न आया तब वह उधरसे निराश होबैठी थी और बडे भैयाकाभी बर्ताव अच्छा नहींथा। उसने सब ओर टटोलकर जब देखलिया–जब उसे कहींसे सहारा मिलता न दीखा तब वह रोती नहीं तो क्या करती वह रोई और विशेषकर रसिकविहारीसे डरकर रोई क्योंकि वह अच्छीतरह जानतीथी कि

वह बडा लुच्चाहै।वह कभी पिंड छोडनेवाला नहीं है।वह हजार तरहके झगडे उठावैगा वह,न मालूम क्या २ आफत बरसावैगा। बस इसलिये वह रोई।उसने रोरोकर अपना कलेजा खाली किया। जब रोनेधोनेसे उसे कुछ विश्राम मिला तब भगवानकी स्तुतिमें यह भजन गाया। निराधार सुशीलाके लिये भगवानकी शरणजानेके सिवाय उपायही क्याथा। उसने यह भजन गायाः-

"मेरी अधबिच अटकी नाव नाथ बिन अब को पारकरै,
अटकी नाव पार नाहिं पावै सागर बीच तरै,
केवटिया कोउ नजर न आवै आयें नाथ सरै,
नीत भई विपरीत सभामें कोउ न दया धरै,
जलसों भरलिये नैन द्रौपदी येही अरज करै,
टेर सुनो जदुनाथ साँवरे संकट कौन हरै,
मुझ अबलाकी यही बीनती आयें दुःख टरै।"

प्रकरण २२.

विधवा विवाहका प्रस्ताव।

वसंतपुरके नव्य समाजका आज वार्षिकोत्सवहै। आज सभाभवन झाड फानूश, मेज कुर्सियोंसे खूब सजायागयाहै। आज जगह २ ध्वजा-पताकायें, उडरहीं हैं। जगह २ बंदनवारें बंधी ह और आज जगह २ समाजके नियमोंके मोटो, मोटेमोटे अक्षरोंमें लिखकर लटकाये गये हैं। आज तेली, चमार, धोबी, जुलाहे और भंगी चूहडोंको वेदमंत्रोंके गान-करनेकी छूटहै। सभाभवन आज स्त्रीपुरुषोंसे खचाखच भराहै। भरा अवश्य है परंतु इनमें समझनेवाले बहुत थोडेहैं। इनमें दश बीस अधकट्टे शिक्षि-तोंके सिवाय प्रायः सबही तमाशाई हैं। प्रस्ताव करनेवाले, समर्थन करनेवाले और अनुमोदन करनेवाले अपने २ लेकचर फटकारनेके लिये पहलेसे अपने २ व्याख्यान रट २ कर तैयार होरहेहैं। समाजके समस्त मेंबर, अनुयायी जब इकट्ठे होचुके तब कार्यका आरंभ हुआ। पहले

मंगलाचरण होकर लेकचर बाजी होनेलगी। सभामें मनगढंत वेदमंत्रोंकी दुहाई देकर जो और २ कार्यवाही हुई उन्हें लिखकर इस पोथीको विषयान्तरमें लेजानेकी मेरी इच्छा नहीं है। परन्तु: उपदेशक मातादयालुका विधवाविवाहपर बहुत बढिया व्याख्यान हुआ। दश मिनट तक विधवाओंके दुःख दिखा २ कर दश दशायम सौबार रोये। उन्होंने रो २ कर अपना कोट भिगोदिया। अपने व्याख्यानमें पचास बार आंखोंसे चश्मा उतार २ कर उन्होंने अपनी आंखें पोंछीं। वह रोये और सारे सभ्योंको उन्होंने रुलादिया। उन्होंने बिचारी अनाथिनी विधवाओंको व्यभिचारिणी बतलाकर एक दिनमें तीनबार कपडे बदलनेकी तरह एक उमरमें ग्यारह खसम करनेकी सम्मति दी परंतु उनके फूटे मुंहसे यह कहतेहुए न बना कि सधवायें कब व्यभिचारमें विधवाओंसे कमहैं। उन्होंने यह भी नहीं कहा कि सधवाओं और विधवाओंका व्यभिचार रोकनेका उपाय क्याहै। उन्होंने विधवा विवाहकी राय देते समय विलायती समाजकी प्रशंसाकर उनकी नकल करना अच्छा बतलाया। परंतु उन्होंने इस बातको छिपादिया कि जो दुःख, जो कलंक हिन्दू विधवाओंपर लगाया जाताहै उससे विलायती कुमारिकायें वचीहुई नहीं हैं। उनके कथनका पंडित रामदीनने समर्थन और मि. फकीरचंद्रने अनुमोदन किया। अंतमें सर्व सम्मतिसे विधवाविवाहका मंतव्य स्थिर हुआ परंतु यह केवल बातोंनी जमाखर्च था क्योंकि उस सभामें जितने कहनेवाले थे उनके हजारवें हिस्सेभी करके दिखलानेवाले न थे। इस मंतव्यका खंडन करनेके लिये पंडित राममोहन खडेभी हुए परंतु किसीने उनकी बात तक न सुनी। बीचमें सभाके नियमकी टांग अडाकर उन्हें बिठला दियागया। समाजमेंसे शास्त्रार्थ करनेकी तो दश आदमियोंने डींगे हांकीं परंतु नियमोंकी उलझन डालकर कोईभी पंडित राममोहनका सामना करनेको तैयार न हुआ।

इसतरह तालियां पीट २ कर जब लोग सभामेंसे चलेगये तब विसर्जन होनेके बाद बाबू रसिकविहारीको अपना मतलब गांठनेका अवसर

मिला। उसने पंडित शत्रुसूदनके साथ अपने आठ दश समाजीमित्रोंको घेरा। ये लोग कुर्सियां मोड २ कर एक जगह आजके व्याख्यानोंकी चर्चा करने बैठगये। बात चलनेपर अपना अवसर साधकर बाबू रसिकविहारी सबको "विधवाविवाह" पर खैंचलाया। सबहीने इसपर जोर दे २ कर कहा कि--"इसका बर्ताव अवश्य होना चाहिये। यदि हमारे समाजके उद्योगसे एकभी विवाह होजाय तो दुनियाभरमें हमारे यशका डंका बजजाय। सबके साथ पंडित शत्रुसूदनभी थे। वहभी इस समाजके मेंबर थे। उन्होंने औरोंके साथ जब इस बातको स्वीकार किया तब बाबू रसिकविहारीका दांव पहुंचगया। उसने जोर देकर कहाकि "केवल ठीकहै, ठीक है, कहनेसे क्या होताहै? कोई करके दिखलावे तबहै? हमारे समाजपर यह बडा भारी कलंकहै कि हमलोग कहते तो हैं परंतु करते नहीं हैं। यदि आप लोगोंमेंसे कोई इस बातके करनेको खडा हो तब तो आपकी प्रतिज्ञायें सच्ची, आपकी बात सच्ची, नहीं तो तीन कौडी की है। खाली बातें बनानेसे क्या होताहै? जो विधवाओंपर सच्ची दया है तो अपने २ घरसेही पहले आरंभ करो।" इतनी बात सुनतेही सब एकस्वरसे बोलउठे-" हां २ सचहै! हां २ ठीकहै!" जब सबने इस तरह कहदिया तब फिर बाबू रसिकविहारी बोला-"तब कौन पहले खडा होताहै?" मि०जी०सी० दत्त बोले:-"पंडित शत्रुसूदन! इन्हींके यहांका मामला ताजाहै। यही पहले! यही पहले! यही पहले करेंगे।" लाला अशरफीलालने कहा:-बेशक! बेशक! यही मुनासिब है। उस विचारीकी हालत देखकर हमें रहम आताहै। अफसोस! सद अफसोस! हिन्दू सख्त जुलम करतेहैं! बिचारी बेवाओंपर सख्त जुल्म होताहै!" सब लोगोंके कहने सुननेसे पंडितजी घिरगये। उन्हें लाचारहोकर कहना पडा:-"आप लोगोंका कहना ठीकहै। मैं बहनसे कहूंगा परंतु मुझे आशा कमहै। वह पुराने विचारकी पाबंदहै। वह दुःखपानेपरभी इस बातको स्वीकार करै-यह कठिनहै। असंभवहै।" बस! बस!! कठिन और असंभवका पचडा डालकर बात न उडाइये। वह आपके हाथमेंहै। वह समझदारहै।

आपकेसमझायेंसेअवश्य समझजायगी ।" इस तरह कहकर सब लोगोंने बीचहीमेंसे उनकी बात काटदी। उन्होंने सुशीलासे कहना स्वीकार किया और तब सबलोग अपने अपने घर चलेगये ।

पंडित शत्रुसूदन घर तो आये परंतु बडी देरतक इस विचारमें पडे रहे कि आजका प्रस्ताव बहनको सुनाऊं वा न सुनाऊं। उन्होंने बहुत देरतक सुनानेमें आनाकानीकी आगापीछा किया परंतु जब वह अपने समाजी भाइयोंसे प्रण कर आयेथे तब लाचार होकर उन्हें बहनसे कहनाही पडा। जबसे इसबार बहन ससुरालसे आई पंडितजी उससे अच्छी तरह बात नहीं करतेथे उसे बात२पर झिडक दिया करतेथे और सदा उसकी ओर तिउरियां चढाये रहतेथे परंतु आज उन्होंने मिलतेही बहनसे बडे सत्कारसे बातचीतकी। पहले उन्होंने सुशीलाकी कुशल पूछी उससे दुःखदर्दकी बातें सुनीं और उसके कष्टपर खूब सहानुभूति दिखलाने पर उसके दुःख दूरकरनेका प्रणकिया । जब उन्होंने इसतरह समझलिया कि वह अब राजी होगई है तब बडे गंभीरभावसे बोले:-

"बहन, तेरेलिये इसघरमें दालरोटीकी तो जन्मभर कमी नहींहै परंतु तेरा दुःख देखकर मेरा हृदय भरा आताहै। संसारमें रहकर मनुष्यका एक खानेहीसे तो निर्वाह नहीं होसक्ताहै" इसपरभी तेरी अभी उमर बहुत कमहै । मृत्युके लिये कहतेहुए तो मेरी जीभ जलतीहै परंतु जमानेको देखते हुए तेरे इतने वर्ष निकलना कठिनहैं ।"

"भैया कठिन कैसेही हों परंतु पतिव्रता विधवाके लिये वे कठिन नहीं हैं। मैं ईश्वरकी कृपासे उन्हें सहजमें निकालदूंगी। आप बेखटके रहिये । मेरी ओरसे चिंता न कीजिये। जो मैं वास्तवमें मातासुंदरीकी सच्ची लडकी हूं तो आपको बिलकुल आँच न आने दूंगी।"

"हां! तेरा कथन ठीकहै परंतु जमानेको देखतेहुए मुझे डर लगता है। बात चाहे झूंठभी हो परंतु नारायणगंजकी घटना यादकरके मेरा कलेजा कांपताहै क्योंकि शास्त्रमें लिखाहै कि-'अतथ्यं तथ्यं वा हरति महिमानं जनरवः(बात सांची हो चाहे झूंठी ही क्यों न हो परंतु लोगोंकी गप्पेंभी मनुष्यकी महिमाको हरलेतीहैं)"

"मैं पहलेहीसे कहाकरतीहूं कि नारायणगंजकी बातकी आप एकबार अच्छीतरह जांचकरलें फिर गर्व्व मरनेवाले आप झखमारेंगे।"

"खैर, यही ठीक सही परंतु आगेका क्या प्रबंधहै? बहन तेरा समय निकलना कठिनहै-असंभवहै क्योंकि तेरी अभी भरजवानी है।"

"तब आप क्या चाहतेहैं?"

"मैं यही चाहताहूं कि तू दूसरा (कहते २ रुककर) विवाहकरले।"

"भैया, यों तो तुम बडे भाईहो, पिताकी बराबर हो। तुमसे क्या कहूं? परंतु ऐसी बात कहते हुए तुम्हें लाज नहीं आती है, तुम्हारी जीभ फटकर नहीं गिरजाती। खबरदार! फिर मुझसे ऐसी बात कही तो। क्या मुझसे व्यभिचार करवाते हो। तुम आगे होकर मुझे पापके गढे में ढकेलते हो? बस क्षमा करो। फिर कभी ऐसा मुझसे न कहो।"

"यों तो तूं स्वतंत्र है। तूं मेरा कहना न मानैगी। चाहे न मानकर कष्टही उठावेगी निन्दाकी टोकरी अपने शिरपर लादैगी परंतु जब शास्त्र में विधवाविवाहकी आज्ञाहै तब तुझ जैसी पढी लिखी स्त्रीको हठ न करना चाहिये।"

"हैं! शास्त्रमें आज्ञाहै? विधवाविवाहकी शास्त्रमें आज्ञाहै? कहां आज्ञा है? मुझे दिखाओतो?"

"हां २! आज्ञाहै। भला किसी छोटी मोटी पोथीमें लिखा हो तो कोई न भी मानै परन्तु वेदभगवानकी आज्ञाहै। ऋग्वेदमें लिखाहै कि:-

"उदीर्ष्वनार्य जीवलोकं गता सुमेतमुपशेषएहि,
हस्तग्रामस्यदिधिषोस्तवेदंपत्युर्जनित्वमभिसंबभूथ।"

इसका अर्थ यह है कि विवाहित पतिके समान नियुक्त पतिको ग्रहणकरके विधवा स्त्री सन्तानोत्पत्ति करलेवे।"

"नहीं! नहीं! यह तुम्हारा भ्रमहै। इसका अर्थ स्वार्थियोंने अपना मतलब गांठनेके लिये बदल दियाहै। इसका अर्थ जैसा मैंने अपने पतिसे सुना, जैसा संस्कृत ग्रंथोंमें देखा-यह है-" हे स्त्री, तू इस निकले प्राण-

वाले देहको पति मानकर उसके पास पडी है । उठ यह देह तेरा पति नहीं है। इसका अधिष्ठाता जीव जहां मौजूद है । इस मनुष्यलोकसे जहां वह गया उसे देख और जा। वहां जाकर, इस लोकमें हाथ पकडने वाला पति जिस लोकमें है और फिर तूही मेरी स्त्री हो ऐसी इच्छा करताहै, उस इच्छा करनेवाले पतिकी तू स्त्री हो। तू जैसी इस समय उनकी स्त्री है वैसीही प्राप्त हो।"–इसका मतलब सहगमनके लिये है। इसका तात्पर्य यहहै कि तू अपने पतिके साथ सती हो। हाय! हाय! मैंने इस वाक्यका निरादर किया। मैं उनके साथही जलकर न मरगई। बस इसीलिये आज तुम्हारे वज्र सहरहीहूं । ऐसे वज्रसमान वचन सहकरभी जीती हूं।"

"भला, इस मंत्रका तात्पर्य विधवाविवाहसे नहीं है तो क्या शास्त्रमें नियोगकीभी आज्ञा नहीं? नियोगकी आज्ञाओंसे श्रुति और स्मृतियां भरी पडीहैं। तू कहै तो मैं एकनहीं–बीस बतलाऊं?"

"अच्छा तुम इस बातको तो मानतेहो ना कि शास्त्रोंमें विधवाविवाहकी आज्ञा नहीं है । तुम क्या तुम्हारे गुरुजीने अपनी पोथीमें इस बातको मानाहै । अब रही नियोगकी बात सो प्रथमतो व्यासस्मृतिमें देखोः–

" अश्वालंबं, गवालंबं संन्यासं फलपैतृकम् ।
देवराच्च सुतोत्पत्तिं कलौ पंच विवर्जयेत् । "

अर्थात् अश्वमेध, गवालंब, सन्यास, मांसश्राद्ध और देवरसे पुत्र उत्पन्न करना–ये पांच बातें कलियुगमें वर्जित हैं।"

"खैर देवरसे पुत्र उत्पन्न करना कलियुगमें वर्जित सही परंतु इसमें नियोगका निषेध कहांसे आया?"

"इसमें नियोगका निषेध नहीं मानते हो तो मनुस्मृति देखो। भगवान् मनु कहतेहैंः–

" नान्यस्मिन् विधवानारी नियोक्तव्या द्विजातिभिः,
अन्यस्मिन् हि नियुंजाना धर्मं हन्युः सनातनम् । "

"अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ज्ञातियां विधवा स्त्रीको ग्रहण न करें। जो नियोग करेगा तो सनातन धर्मसे पतित होजायगा।" इस के सिवाय 'अश्वलायन' देखिये। इसमें लिखाहै किः—

"अज्ञातश्च द्विजो यस्तु विधवामुद्वहेद्यदि।
परित्यज्य च तां चैव प्रायश्चित्तं समाचरेत्।"

"अर्थात् जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, बिना जाने विधवासे विवाह करले तो मालूम होनेपर उसे त्यागदेनेके बाद प्रायश्चित्त करनेसे शुद्ध हो।"

"भला. नियोग न सही परंतु अक्षतयोनि विधवाओंका विवाह? यह तो अवश्य होना चाहिये। शास्त्रमेंभी लिखाहै किः--

"पाणिग्रहे मृते बाला केवलं मंत्रसंस्कृता।
सा च त्वक्षतयोनिः स्यात्पुनः संस्कारमर्हति।"

"अर्थात् विवाहित पति मरजानेपर अक्षतयोनि कन्याका दूसरा विवाह संस्कार होसकताहै।"

"नहीं! नहीं!! यह बात शूद्रोंके लिये होगी। यदि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वश्यके लिये होती तो राजर्षि मनु यह न लिखते किः--

"न दत्वा कस्यचित्कन्यां पुनर्दद्याद्विचक्षणः।
दत्वा पुनः प्रयच्छन्हि प्राप्नोति पुरुषोनृतम्।"

"अर्थात् बुद्धिमान् मनुष्य एकबार कन्यादान कर फिर दूसरी बार न देवे। कदाचित् देवे तो पापी होताहै।"

"और पराशर स्मृतिमें फिर यह क्यों लिखाहै किः--

"नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीबे च पतितेऽपतौ।
पञ्चस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते।"

"अर्थात् मरजाने, नष्टहोजाने, चलेजाने, पतित होजाने और पतिके नपुंसक होजानेपर--इन पांच आपदाओंमें स्त्रीके लिये दूसरा पति करनेकी विधि है।"

"नहीं भैया, नहीं! इसका यह मतलब नहीं है। इसका प्रयोजन सगाईसे है क्योंकि मंगनी होजानेपर भी उसकी पतिसंज्ञा मान लीगई है।

यदि ऐसा न होता तो "पतौ" का प्रयोग न कियाजाता "पत्यौ" लिखाजाता। भाई, तुम पंडित मधुसूदनके पुत्र हो माता सुंदरीके पुत्र हो। जरा विचार करो। ऐसे भ्रममें मत पडो। स्वार्थियोंके बहकानेमें न आओ। देखो–जरा आंख खोलकर देखो! शास्त्रोंमें सर्वत्र यही आज्ञा है। यही लिखाहै कि, पतिके मरनेपर स्त्री उसके साथ चितामें भस्म होकर स्वर्गमें दम्पतीसुख भोगै। यदि भस्म होनेका समय अनुकूल न हो तो आजीवन ब्रह्मचर्य पालन करै। पति पत्नीका संबंध एकही जन्ममें समाप्त नहीं होताहै। मैं जानतीहूं तुम्हें किसी स्वार्थीने बहकाया है। तुमलोग विधवाओंपर व्यभिचारका कलंक लगाया करते हो परंतु जरा सधवाओंकी तो खबर लो। तुमलोग विलायती समाजकी नकल करना चाहतेहो परंतु वहांकी कुँवारियोंके दुःखका विचार करो। उनका दम्पत्य प्रेम देखो, उनके तलाकका व्यवहार देखो और उनमें देखो कि उनके समाजके दोष कितने हैं. उनकी चाल उनके लियेही अच्छी है। हमारे लिये नहीं।"

बस इतना कहकर सुशीला चुप होगई। उसने फिर शिर उठाकर भाईकी ओर न देखा। भाईभी निरुत्तर होकर चलागया। चला अवश्यगया परंतु अब उसकी शामत आगई। इन दोनोंमें जो बातचीत हुईथी उसे पंडित शत्रुसूदनकी स्त्री चुपचाप खडी सुन रहीथी। उससे अब बोले बिना न रहा-गया। उसका कोप अब ननँदसे उतरकर पतिपर जा अडा। उसने पतिको बहुत डांटा, बहुत फटकारा और स्पष्ट कहदिया कि "जो तुम ऐसी बातें करोगे तो मैं तुम्हारा साथ न दूंगी। मैं अपने बालकोंको लेकर पिताके यहां चली जाऊंगी।" उसने उसी समयसे ननंदका आदर किया और जब सुशीलाने नीचे लिखी कविता गाई तब वह सुनकर बहुत रोई"।

" सरजायगा पतिधर्म पै तबभी न मुडैगी,
जो टूटचुकी चूडियां वह फिर न जुडैगी,
जिस सरको कि पतिधर्मके चरणोंमें था डाला,
अब कौनहै उस शीसका फिर गूँथने वाला,
है कौन जिन्होंने यह नया वेद निकाला,

जो धर्म पतिव्रतका देखा न भाला,
पतिधर्म अगर सत्यहै सतसंगी है पतिकी,
विधवाके हुएपरभी तो अरधंगी है पतिकी,
किस मुँहसे कहूंगी नये पतिसे पतिव्रता,
जब मुझसे निभा धर्म न एक पहले पतीका,
ग्यारहके लिये रोज कहां सतका दावा,
इस व्याहसे तो पहलेही मरजाना है अच्छा,
किस सरसे नई सासके मैं पांव पडूँगी,
अरथीकी जगह क्या नये डोलेपे चढूंगी,
पति कहतेहैं जिसको नहिं मिलता वह दुबारा,
कब दूसरेका देखना होता है गँवारा,
ईश्वरका सहारा है कि है पतिका सहारा,
सतधर्म अगर सतहै तो वह सतहै हमारा,
वैकुंठमें पदवीकी जगह पाती हैं हमही,
पति मरताहै जीतीहुई जलजाती हैं हमही,
पतिधर्म हमाराहै अगर हमपै सहाई,
यह इन्दरका आसन है रंडापेकी चटाई,
वैकुंठका है राज उसी घरकी गदाई,
फिर लेतेहो जो करचुके एकबार पराई,
एक बेटीको ग्यारह जगह देते नाहिं देखा,
इस दानको तो फेरके लेते नाहिं देखा,
अब लाज तेरे हाथ है ऐ कृष्णमुरारी,
बिपता है बहुत हमपै पडी भीड है भारी,
सुनता है भला तेरेसिवा कौन हमारी,
अब वक्त वह आया है कि चादर है उतारी,
पत है तेरे चरणोंमें उसी तरह सभीकी,

जिस तरहसे थी लाज तुझे द्रौपदीजीकी,
अय धर्मके रक्षक कुछ तुमही खबर लो,
लेसकतेहो सतधर्मकी उपमाको अगर लो,
यह पुण्य है फैला हुआ जो चाहे सो भर लो,
गर और कुछ न होसकै तो इतनाही करलो,
संसारका सब पाप कटे नामही खो दो,
विधवाओंको भरभरके जहाजोंमें डुबो दो।" ×

प्रकरण २३.

जातिकी पंचायत।

अबतक दुनियामें सुशीलाका कोई नहीं था। जब भाई भौजाईही उससे मीठी बात कहकर उसका संतोष नहीं करतेथे तब बसंतपुरमें उसपर दया करनेवाला कौन? पति गया ससुरालसे पैर गया छोटे भैयाने चिट्ठीका जवाबतक न दिया और लोकलाजसे बडेभाईने चाहे खानेको दियाभी परंतु जब भाई भौजाईने उससे बात करना छोडदिया माताके डरसे जब लडके बालोंने उसके पास जाना छोडदिया तब सुशीला किसका मुँह देखकर दिन काटे? परंतु आजसे सुशीलाका एक सहायक खडा हुआ। आजसे बडी भौजाई उसकी शत्रुसे मित्र बनगई। आजसे उसने सुशीलाका बहुत सत्कार किया और पतिको सुशीलाके दूसरे विवाहकी चर्चा करते देखकर उनसे रूठ बैठी। अवश्यही उसके रूठ बैठनेसे सुशीलाको बहुतकुछ सहारा मिलने लगाथा परंतु सुशीला इस बातसे प्रसन्न नहीं थी। दम्पतीका परस्पर कलह देखकर उसका जी जला करताथा और वह इस झगडेको मेटनेका उपायभी करती थी परंतु भाईकी जिद नहीं छूटतीथी। भाईने किसी न किसी तरह–साम,दाम,दंड भेदके पेच लगाकर सुशीलाका विवाह करदेना निश्चय ठहरालियाथा। उसने सुशीलाकी ओरसे रूखा उत्तर पाकर घरमें अपनी

× पुनर्विवाहनाटकसे।

ही स्त्रीसे नित्यका कलह होता देखकर चाहे घरमें चर्चा करना छोड-दिया परंतु वह समाजमें अपने इष्टमित्रोंसे इस बातकी नित्य सलाह करतेथे। बाबू रसिकविहारीके प्रपंचसे सबही समाजी उन्हें इस काममें उत्तेजना देतेथे।

एक दिन जब समाजमें सब इष्टमित्रोंके साथ पंडित शत्रुसूदनकी बातें हुई बाबू रसिकविहारीने पंडितजीको फिर छोडदिया। उसने पंडितजीके मुँहसे सुशीलाका "इनकार" सुनकर कहा और अबतक जो बातें उसके मनमें चक्कर लगारहींथी उन्हें खोलकर कह दिया कि:—

"पंडितजी, तुम्हारी बहन चाहे तुमसे हजारवार नाहीं करे परंतु वह मुझे जीजानसे चाहतीहै। वह मुझसे स्वीकार करचुकी है। वह केवल लोकलाजसे डरती है। वह कार्तिकस्नानके दिनोंमें मुझसे मिलचुकी है। उसे स्वयं मेरे विना चैन नहीं है। आप एकदिन उससे मुझे अकेलेमें मिलादो। फिर देखो वह कैसे नाहीं करतीहै।"

इस बातका सबहीने समर्थन किया। सबहीने कहा—"हां हां! हमनेभी सुनाहै। हमभी उस बुढियासे सुन चुकेहैं कि वह बाबू रसिकविहारीके पास उसकेद्वारा पैगाम भेजतीहै। बाबूजी, आप इन्हें उसकी चिट्ठी क्यों नहीं दिखलादेते।" रसिकविहारीने चिट्ठीकी बात टालदी। उसने कहा:—

"प्रेमी प्रेमकाके प्रेमपत्र दूसरोंको दिखलाये नहीं जातेहैं। एकबार पंडितजी मुझे उसकी सूरत तो दिखलादें। फिर देखलेना कि वह किसतरह मेरी होनेसे नाहीं करतीहै?"

सब लोगोंके कहने सुननेसे पंडितजीने इस बातको स्वीकार किया। इस बातको ढीली डालनेके लिये कुछ दिनोंका भुलावा देकर एकदिन पंडित शत्रुसूदनने अपने इष्टमित्रोंको न्योता दिया। रातको आठबजे सबलोग खा-पीकर चलेगये परन्तु पंडितजीके संकेतसे बाबू रसिकविहारी वहीं ठहरगया। जब उसे ठहरे आधाघंटा होगया तब पंडितजी किसी कामके लिये वहांसे चलेगये और बाबूजीको इस तरह सुशीलासे अकेलेमें फिर छेड छाड करनेका अवसर मिला। उसने कहा:—

"प्यारी बोल अब क्या कहती है ? अब बागका प्रण पूरा कर । तेरे भाई तेरी मुझसे शादी करना चाहते हैं । उसे स्वीकार करले और फिर आनंद कर। तुझे दुःख पाते देखकर मेरा कलेजा फटा जाताहै । प्यारी मुझपर दया कर मैं तेरे बिना मराजाताहूं । प्राणप्यारी ! मुझपर क्या तू अपनेहीपर दयाकर तेरा जोबन न सुखा । दुनियामें मजे उडा । ऐसे झूँठे ढकोसले छोडदे और आ मेरे गलेसे लगजा ।"

"क्योंरे चांडाल तू फिर आमरा। क्या मुझ गरीब गायको सताने आया है ? खबरदार ! मुझसे फिर ऐसी बात कही तो । मालूम होताहै कि इसमें भैयाकाभी प्रपंच है। उनका प्रपंच न होता तो आज दावतका क्या काम था। खैर वह पिताके समान हैं । वह चाहे जो करें । उनसे मैं क्या कहूं ? उनको गाली देनेमें मेरी जीभ जलतीहै परंतु मन रे दुष्ट ! तू अभी यहांसे चलाजा। हट यहांसे नहीं तो मैं हल्ला मचाकर,लोगोंको बुलातीहूं । अच्छा ठहर मैंही बाहर जातीहूं ।"

" तू बाहर कैसे जासकतीहै ? जायगी तो तब जब मै तुझे जानेदूंगा । तू एक नहीं हजारवार हल्ला मचा इस समय तेरी कोई सुननेवाला नहीं है। तेरा भाई मुझे यहां रखकर बाहर चला गया और तेरी भौजाईकी क्या सामर्थ्य है जो वह (मोछोंपर ताव देकर) मेरी ओर देखसके । प्यारी ! मैं फिरभी हाथ जोडकर कहताहूं । मानजा । मेरी बात स्वीकार करले । "

" और जो स्वीकार नहीं करूंगी तो क्या तू जबर्दस्ती करेगा ? बिना मेरी इच्छाके मुझे लाचार करनेवाला कौनहै ? जूतेके तलेमें मुँह देखले । क्या तू बसंतपुरके दारोगाका किस्सा भूलगयाहै । "

" नहीं प्यारी, मैं तुझसे जबर्दस्ती नहीं करता । मैं हाथ जोडताहूं । तेरे पैरों पडताहूं । मेरी बात मानजा । "

" नहीं, ! नहीं ! कदापि नहीं ! तू जा ! अभी जा ! निकलजा यहांसे । "

जब इसतरहका सूखा उत्तर पाचुका तब रसिकविहारीसे न रहागया। उसने अब जोर देनेका विचार किया। इस विचारसे वह अपनी जगहसे उठकर सुशीलाके पास पहुँचा। वहां जाकर उसने ज्योंही उसपर हाथ डालना चाहा सुशीला चिल्लाई:-

"भाभी, दौडियो। यह दुष्ट मेरी लाज लूटना चाहताहै। भाभी मुझे बचाओ।"

"भाभी अबतक अपने कामकाजमें लगी हुई थी। उसे न तो इस बातकी खबरथी कि पति घरमें नहीं है और न वह यह जानती थी कि सुशीलाको दुष्ट रसिकविहारीने घेर रक्खाहै। वह ननँदकी आवाज सुनकर भौंचकसी रहगई। वह सुनकर दौडी हुई आई और दुष्ट रसिक विहारीको देखकर गालियां देनेलगी। सुशीलाका रोनाचिल्लाना और भौजाईकी गालियाँ सुनकर मुहल्लेके लोग दौडे हुए आये और सबलोगोंने रसिकविहारीको घेरकर उसकी खूब लातोंसे जूतोंसे खबर ली। वह पिटपिटाकर खूब रोतारोता, "हाय मरारे! हाय मारागयारे।" कहता अपनासा मुँह लेकर अपने घर चलागया और इस तरह सुशीलाकी लाज बचगई।

जिस समय इसका रोना झीकना और भौजाईका गुलगपाडा शांत होगयाथा, जब अडौस पडौसके आदमी अपने २ घर चलेगयेथे तब पंडित शत्रुसूदन आये। उनके आनेपर सुशीलाने तो रोनेके सिवाय भाईसे एकशब्दभी न कहा परंतु पंडितजीकी स्त्रीसे न रहागया। उसने लुच्चे रसिकविहारीके सिवाय पंडितजीको भी खूब गालियां सुनायी उसने रसिकविहारीकी लुच्चईका सारा बोझा पंडितजीपर डालकर उनसे कहा:--

"तुम्हारी बुद्धि मारीगईहै। क्या आज तुम्हारी अकलपर पत्थर पडगयेथे जो तुम इस बिचारीके पास उस राक्षसको छोडकर चलेगये। मरा निपूता यह, विधवाविवाह और इसको चलानेवाले! तुम्हें ऐसा कहते लाज नहीं आती। भला जो कुछ तुम्हें इस बिचारीसे कहना सुनना था तुमने कहदिया फिर उस लुच्चेसे इसपर अत्याचार करानेमें

तुम्हारा क्या लाभ हुआ? यह तो भला हुआ जो इसकी पुकार सुनकर मैं आपहुँची नहीं तो आज इस बिचारीका सत्यानाश होजाता। मैं इससे पहले उसके सब लुच्चपन सुनचुकीहूं। वह कई दिनसे इसके पीछे पडा हुआ है। उस समय मैंने इसकी बातपर ध्यान नहीं दियाथा परंतु इस बिचारीको मत सताओ। जब उसने और तरह अपना काम बनते नहीं देखा तब तुम्हें बहँकाकर इसने इस दुखियाको इसतरह फँसाना चाहाहै।"

"हें हें! मैंने क्या किया? मैं तो योंही आवश्यक कामसे बाहर चला गयाथा। मैं क्या जानताथा कि वह इसपर अत्याचार करेगा। मैंने सुना था कि यह लोकलाजसे नाहीं करतीहै परंतु इसकी उससे विवाह करनेकी इच्छा है इसलिये मैंने इन दोनोंको मिलादियाथा। यही हमलोगों का नियम है।"

"धिःकारहै! धिःकारहै! तुम्हारे ऐसे नियमको।" यह कहकर उनकी स्त्रीने बागकी घटनासे लेकर आजतकका सारा किस्सा सुनाया। पंडितजी इस बातको सुनकर चुप होगये। अपनीही स्त्रीके आगे उनके मुँहसे एक शब्दभी न बोलागया। उन्होंने अपनी गरदन नीची करली और इसतरह धरती खोदने लगे। वह अवश्यही अबतकभी अपने नियमोंको पूरा नहीं समझतेथे और मेरा मत ऐसी बातोंसे भिन्न होनेपर भी मैं इसजगह किसी समाजपर आक्षेप करना नहीं चाहता हूं परंतु इसमें संदेह नहीं है कि ऐसे नियमोंको पाकर लोग उन्हें अपने खोटे विचारोंके लिये शास्त्र बनालेते हैं। दुष्ट रसिकबिहारीनेभी ऐसाही किया और उसीके प्रपंच में पडकर पंडित शत्रुसूदनको आज लुगाईके आगे नीचा देखना पडा।

यद्यपि पंडितजीने उस समयसे इस बातकी चर्चा करना छोड दियाथा परंतु कुल्हियामें गुड नहीं फूटताहै। इस बातकी जाति बिरादरीमें पांडे मुहल्लेमें, बस्तीमें चर्चा फैलगई और इतनी फैली कि जातिके पंचोंको बिरादरी इकट्ठी करके इस बातकी पंचायतद्वारा निश्चय करना पडा।

पंडितजीकी जातिके पंडित माधवलाल, साधूलाल, रामलाल, हरिलाल, कृष्णलाल आदि पंच--बालक बूढे और जवान इकट्ठे हुए। रसिकबिहारीके सगे संबंधियोंनें, इष्ट मित्रोंने सुशीलाको कुलटा बतलाकर उसकी झूंठी चिट्ठियां बतलाकर इस मामलेको खूब रंगना चाहा परंतु साचको आँच कभी नहीं लगती है। पंचोंनें इस विषयमें खूब छान बीन करके रसिकबिहारीको सुशीलापर बलात्कार करनेके प्रयत्न करनेका, विधवा विवाहके धर्मविरुद्ध कार्य करनेके प्रयत्न करनेका और पंडित शत्रुसूदनको इस दूसरे काममें सहायता देनेका दोषी ठहराया। दोनोंको जातिसे बाहर करनेका दंड दियागया। रसिकबिहारीके प्रपंचकी सारी कलई खुलगई। उसका सुशीलाको बागमें घेरना, सुशीलाके पास कुटनी बुढियाको भेजना, शत्रुसूदनको बँहकाकर विधवाविवाहकी उत्तेजना देना और अंतमें अकेलेमें सुशीलाके पास जाकर उसपर आक्रमण करना ये बातें सुशीलाके मुखसे जिस समय पंचोंने सुनी उनका हृदय भरआया। कुछ लोगोंने नारायणगंजकी कहानी छेडकर सुशीलाका दुःशीलापन सिद्ध करना चाहा परंतु जब बसंतपुरमें इस बातके कोई प्रमाण देनेवाले मनुष्य नहीं थे तब इस समय यह प्रमाण छोडना पंचोंने उचित न समझा। इस विषयमें नारायणगंजके पंचोंके नाम वसंतपुरकी पंचायतकी ओरसे पत्र लिखागया। इसमें सुशीलाके सतीत्वकी खूब प्रशंसा कीगई थी और नारायणगंजके मामलेकी अबतक जांच न करने पर उपालंभ दियागया था।

वसंतपुरकी पंचायतने केवल इतनाही न किया बरन् सुशीलाके आजीवन खानपान का खर्च अपने पंचायत फंडसे देनेकी आज्ञा दी। सुशीलाने जितना सच्चा न्याय करके दूधका दूध और पानीका पानी करदेनेपर पंचायतको धन्यवाद दिया उतनाही इस उदारतापर दिया परंतु इस कार्यमें अपने भाइयोंकी निन्दा समझकर इसे स्वीकार न किया। पंचायतने इस पापका प्रायश्चित्त कराके रसिकबिहारीको गंगास्नान करानेके सिवाय उससे सवालाख गायत्री मंत्रके जप करवाये और पंडित शत्रुसूदनको वहीं नदीमें

स्नान करवाकर पचासहजार जप करनेपर जातिमें फिर संयुक्त होनेकी व्यवस्था दी, दोनोंकी मोछें मुंडवाई दोनोंसे प्रायश्चित्त करवाया और ये दोनों कैसेही नये विचारके क्यों न हों परंतु इन्हें पंचायतके डरसे इसके अनुसार कार्य करनेके लिये लाचार होना पडा।

प्रकरण २४.

छोटे भाईसे सहायता।

यद्यपि पंचायतने पंडित शत्रुसूदनको सुशीलाके साथ एसा बर्ताव करनेपर बहुत डांटा फटकारा था, अब घरमें भौजाईभी उसकी सहायता करनेके लिये तैयार थी परन्तु पंडितजीको अब सुशीलासे द्वेष होगया। वह उस बिचारीको बातबातपर झिडकने लगे, खाने पीनेका कष्ट देने लगे, घरसे निकाल देनेकी धमकी देने लगे और इस तरह उस अनाथिनीको दो दो चार चार दिन लंघनकरके बीतने लगे। वह उस समय यदि चाहती तो पंचायत फंडसे रुपया लेकर अपना निर्वाह करसक्ती थी परंतु अत्याचार सहनेपरभी भाईकीएसी निन्दा होना उसे स्वीकार नहीं था वह कई दिन भूखी रहगई, उसे घंटोंतक पानीपीना नसीब न हुआ जाडेका मोसिमहोनेपरभी उसका ओढना बिछौना छीन लिया गया परंतु उसने कभी एक शब्दभी भाईके विरुद्ध किसीसे न कहा। पतिका कोप होनेपरभी पंडितजीकी स्त्रीकी ओरसे उसे छिपाचोरी सहायता मिलती थी और इसी सहायतासे उसके दिनभी कटतेथे. परंतु स्त्रीकी इस चालसे पंडितजी प्रसन्न न थे।वह उससे खूब लडते झगडते और अधिक क्रोध आनेपर मारभी बैठते थे। सुशीला इसबातसे जानती थी कि मेरेही कारण इन दम्पतीमें कलह होताहै। वह इसलिये कई बार घरसे निकलजानेकी इच्छाभी करतीथी परंतु प्रथम तो उसके लिये कहीं जानेका ठिकाना न था फिर उसे छोटे भाईकी ओरसे आशाथी कि वह यदि पहली चिट्ठीपर नहीं आयेहें तो इस न्यायसे मेरी सत्यता सुनकर अवश्य आवेंगे।

अंतमें सुशीलाकी आशा फलवती हुई । पंडित रिपुसूदन अपनी स्त्री और बालक सहित रंगूनसे आये । पिताकी सम्पत्तिका हिस्सा नहीं हुआथा । अभीतक दोनों भाई शामिलही थे । इस कारण उनका विचार बडे भाईके पास ठहरकर इसबार अपना हिस्सा ले लेनेका था । पंडित रिपुसूदनका हाथ तंग था । वह बहुत कम वेतनपर नौकर थे और वह चाहते थे कि पिताकी सम्पत्तिका आधा हिस्सा बडे भाईसे लेकर सुखसे रहे परंतु उन्होंने, पंडित शत्रुसूदनसे बहुत कुछ समझाने बुझानेपर, भले आदमियोंके कहने सुनने पर भी, जब हिस्सा न पाया तब रिपुसूदन एक अलग मकानमें ठहरे । लोगोंने रिपुसूदनको बहुत समझाया कि तुम अपने उचित हिस्सेके लिये नालिश करदो । परंतु इस सलाहको उन्होंने बिलकुल न माना और भाईसे झगडा करके अदालतमें पिताका नाम डुबोनेसे दरिद्रताकी चक्कीमें पीसनाही उन्होंने अच्छा समझा ।

पंडित रिपुसूदन सुशीलासे मिलकर बहुत रोये । बहनने अपनी दुःख-कहानी 'अथ' से लेकर 'इति' तक कह सुनाई । सुशीलाने जो कुछ कहा उसे इस पुस्तकके पाठक पहले जानचुके हैं किन्तु पंडित रिपुसूदनका उत्तर अवश्य ही उनके जानने योग्यहै । उन्होंने दुःखिया बहनको आश्वासन देते हुए कहाः--

"बहन, अवश्य तैंने बहुत कष्ट पाया, बडी २ आपदायें सही । इसका मेरे मनको जो दुःखहै उसे जाननेवाला भगवानहै । तैंने प्रारब्धवश जो दैवी वज्र सहा उसका तो मैं क्या कहूं ? परंतु भैयाकी चाल पर मेरा जी जल रहाहै । अब तू किसी तरहसे घबडाव नहीं । अब मैं आपहुँचा । अब मैं तुझे कष्ट न होने दूंगा । तू मेरे पास रह और सुखसे दालदलिया खाकर भगवानका भजन कर । तेरी भाभी तेरी सब टहल करनेको तैयार है । वह कभी तुझसे कोई बात कडी न कहेगी और तेरी आज्ञामें चलेगी तू मुझसे छोटी हुई तो क्या हुआ।तू अब घरकी मालिकिन और हम नौकर बहन, बडे भैयाका साधन दौलत तो हमारे यहां नहीं है परंतु रूखी सूकी

रोटीकी कभी कमीभी, भगवान्ने चाहा तो न पडैगी । तेरी आज्ञामें हम तैयारहैं । ''

"हां बाईजी, ठीकहै । तुम्हारा घर और हमारा द्वार । तुम दोगी और हम खावैंगे । भगवान् सहायता करैगा । मैं तुम्हारी चाकरीमें शिरके बल तैयार हूं । "

"अच्छा तो मुझे और क्या चाहिये । जब तुम दोनोंने मुझे इतना सहारा दे दिया फिर मैं अपने दिन निकाल दूंगी । भैया, मैंने बहुत दुःख पायाहै। हाय मैं मर न गई । मैं उसी दिन मर जाती तो मुझे इतना निरादर, इतना कलंक इतना कष्ट सहना पडता।खैर और तो जो कुछ होनाथा सो होगया,जो कुछ भाग्यमें बदेथे सहे और अबभी सहूंगी परंतु नारायणगंजके कलंककी बात मेरे कलेजेमें होलीकी तरह जल रहीहै इसके दुःखकी आग मेरे मनमें दहक रहीहै । जैसे भगवान्ने मुझे यहांके कलंकसे बचाया वैसेही वह मेरा वहांकी बातमें मुँह उजला करै तब मैं सुखसे मरूंगी । जब मेरा सर्वस्व छिनगया तब मुझे जीकरही क्या करना है ! बस मुझे अब यही चाहिये । मैं अब अधिक जीकर तुमपर अपना बोझ नहीं डालना चाहती भगवान्को यदि मुझे झोरा शिर करजानेपरभी सुखदेना था तो मेरा जेठ-रही क्यों जाता ! भला तुमने मेरी चिट्ठीका उत्तर क्यों न दिया ? ।

" नहीं बहन नहीं ! तेरा बोझ ! तेरा हमपर कुछ बोझा नहींहै । तू माजाई बहनहै । कहीं बहनकाभी भाईपर बोझा होता होगा । तू इसबा-तका बिलकुल विचार न कर । जब भगवानने तेरा यह कलंक छुडाया है तब वहांकाभी छूटैगा—समय आनेपर आपही छूटजाइगा । छूटाही समझ धीरज रख बहन धीरज रख । घबडानेसे काम न होगा । चिट्ठीका उत्तर यों ही नहीं दियाथा । लोगोंकी चिट्ठियां पाकर तारसे मुझेभी संदेह होगयाथा । अब मेरा संदेह मिटगया । मैंने अपने किसी अंतरंग मित्रको चिट्ठी लिखकर संदेह मेटलिया। यहांकी और नारायणगंजकी ऐसी चिट्ठियां पाकरही हम आयेहैं ।

"हां हां " घबडानेका काम नहीं है । जब तुम सच्ची हो तो तुम्हारे जठे आप पछतायंगे । आप आकर तुमसे क्षमा मांगेंगे । यह भी नसीबका

चक्कर है। अब मिटजायगा। तुम घबडाओ मत और सुखसे भगवत् भजन करो। इसीमें सब कुछहै।"

"हां! भगवानका तो मुझे पूरा भरोसाहै। उसने जब अम्माको बडेर संकटोंमें सहायता दी है तब मेरे दुःखपर दया क्यों न करैगा। वह अवश्य दीनदयालु है। वह दया करैगा, और मुझे कलंकसे छुडावैगा। परंतु मैं तुम्हारा तंग हाथ देखकर अपना बोझा तुमपर नहीं डालना चाहती। मुझे भूखे प्यासे अभी बडे भैयाके यहांही पडी रहने दो।"

"नहीं, ऐसा नहीं होगा। नहीं! ऐसा कदापि नहीं हो सकता! नहीं हम अपने आगे अब तुम्हें इसतरहका कष्ट पातेहुए देखना नहीं चाहते। हम अब तुम्हें दुःख न पाने देंगे। तुम हमारे पास रहो। हम अब तुम्हें अपने पास रक्खेंगे। इसतरह कहकर पंडित रिपुसूदनकी स्त्री सुशीलाका हाथ पकडकर उसे अपने घर लिवालेगई। पंडित शत्रुसूदन देखते देखतेही रहगये। उन्होंने कुछभी न कहा। सुशीलाके घरसे निकलकर देवरके यहां चले जानेकी इच्छा उसकी बडी भौजाईकी न थी। उसने दो चार बार नाहीं भी की परन्तु जब घरके मालिक उसे अपने यहां रखना नहीं चाहते थे तब उसे लाचार चुप होजाना पडा"।

पंडित रिपुसूदन और उनकी स्त्री सुशीलाको समझा बुझाकर अपने घर लेगये। उन्होंने उसे घरकी तालीं देकर सच्ची मालकिन बनादी। यदि पंडित रिपुसूदनको उनकी स्त्रीको रुपये पैसेकी आवश्यकता होती तो वे उसीसे मांगती। जो कुछ ये दोनों खाते वही सुशीलाको खानेके-लिये मिलता घरका सब काम काज अकेली पंडितजीकी स्त्री करती। घरमें नौकर नौकरनी न होनेपरभी पंडिताइनकी गोदमें छोटा बालक होनेपर भी रसोई बनानेसे लेकर झाडू देनेतकका काम वही करती। दोनोंको इस बातका खूब ध्यान रहता कि किसी तरह कोई काम सुशीलाको अप्रिय न हो, उसे यह खयाल न हो कि मैं भाईके यहां हूं और वह यही समझती रहै कि घर मेरा है। सुशीलाका बर्तावभी ऐसाही

था। वह घरकी एक पाई व्यर्थ नहीं जाने देती थी। जहांतक बनसकता भाई भतीजेके कपडे अपने हाथसे सीती और अवकाशके समय बालकोंके लिये ऐसे कपडे तैयार करती जिनसे पंडितजीकी दरिद्रता छिपी रहै। वह बालकोंको खूब प्यार करती, उन्हें खेल खिलवाडमें अच्छे उपदेश देती, उन्हें अच्छी बातें सिखाती और जैसे बनता वैसे भाईका हित करनेमें अपना समय बिताती थी।

इतना होनेपरभी उसके स्नान ध्यानमें उसके पूजा पाठमें, उसके पढने लिखनेमें किसी तरहका विघ्न नहीं था। उसने इन कामोंके लिये अपना समय बांध लियाथा। अवकाश निकालकर वह छोटी भावजके नाहीं करनेपरभी उसके कामोंमें सहायता देती और कभी २ तो ये दोनों काम करनेपर "इसे मैं करूंगी। इसे मुझको करने दो। नहीं तुम मत करो। तुम्हें मेरी सौगंद है" कहकर आपसमें झगड पडती पंडित रिपुसूदन इस झगडा झगडीमें ननँदभोजाईका प्रेम देखकर मनही मन प्रसन्न होते और घरकी शांति, आपसका स्नेह देखकर अपनी दरिद्रताको भूल जाते थे।

प्रकरण २९.

कलंकसे छुटकारा।

"क्यों तैने कुछ सुनाभी है? वसंतपुरसे महजर आयाहै।"

"हैं! महजर! किस बातका महजर!! मैंने कुछ नहीं सुना। बात क्या है? कहिये तो बात क्या है?"

"बात यही है कि जैसा मामला सुशीलाके साथ यहां पडाथा वैसाही वसंतपुरमेंभी पडा। वहांकी बातमें वह सच्ची निकली इसलिये वसंतपुरके पंचोंने यहांकी पंचायतको खूब फटकाराहै और यहांकी घटना जांच न करनेपर उलाहना दियाहै।"

"हां! अच्छी बात है।"

"अच्छी बात तो हैही परंतु यहांकी बातका पंचलोग उत्तर मांगें तो मैं क्या कहूं ? मुझे वसंतपुरकी तरह यहांका कलंकभी झूंठा मालूम होताहै। बोल सच सच कह। अबभी सत्य कहदे। इसमें कुछ प्रपंच तो नहीं है ?"

"इसमें प्रपंच। इसमें क्या प्रपंच होगा? इसमें प्रपंच हो तो तुम्हारी बहन जाने। मैंने तो उनके कहनेसे कहाथा।"

"और तू नहीं जानती ? तू नहीं जानती है तो तैंने मुझे क्यों धोखा दिया ? चांडालिनी ! कर्कशा ! तैंने बडा अनर्थ करदिया। बोल अबभी बोल। सच कह। क्या बातहै ?" कहकर सुशीलाके जेठने अपनी स्त्रीके पांच सात थप्पड जमादिये। दो एक लातेभी मारी। जब इसतरह "चमारोंकी देवीकी जूतोंसे पूजा" होचुकी तब पंडितायन बोलीः–

"अब तुम मारो चाहे कूटो ! अब चाहे तुम मेरे टुकडेही क्यों न कर डालो परंतु मैंने तुम्हें धोखा नहीं दिया। मैंने जो कुछ कहा ननँदके सिखानेसे कहा। मैं अपनी आंखोंकी सौगंद खाकर कहती हूं। मैंने देवरानीको कभी किसीसे बातकरतेभी नहीं देखा। जो देखा हो तो मेरी दोनों आंखें फूट जाय।"

"रांड कृत्या फिर तैंने मुझसे उस समय क्यों न कहा ? उसी समय मरी होती ना ! अब मरने आई है। हट मेरे सामनेसे हरामजादी कहीं की ! लुच्ची कहींकी ! ! उसी समय कहा होता तो मेरा काला मुँह तो न होता ! हाय ! बडा अनर्थ होगया ! अब मैं पंचोंसे क्या जवाब दूंगा ?" इतना कहकर पंडितजीने अपने हाथोंसे पांच चार बार अपना शिर पीटलिया। और बोलेः– "अच्छा तैंने कुछ नहीं देखा तो न सही परंतु तैंने उसके सिखानेसे क्यों उस विचारीको बदनाम किया तेरा उसने क्या बिगाडा ?"

"मैं न कहती तो तुम अपनी बहनका भात देनेके लिये मेरा जेवर बेचडालते।"

"हाय ! हाय ! तैंने अपना जेवर बचानेके लिये ही इतना अनर्थ करडाला।

"यही त्रिया चरित्र है। धिक्कार है तुझे। ऐसी रांडसे तो मैं कुंवाराही रहतर तो अच्छा था। खैर तैंने तो उस विचारीके शिरपर काला टीका लगाकर अपना जेवर बचाया परंतु उस हत्यारीका क्या लाभ हुआ?"

"उनका लाभ! उनका क्या यह थोडा लाभ हुआ जो भातमें अनाप सनाप धन मिलगया। देवरानीका जेवर न लिया जाता तो क्या तुम उसे भातमें एक छदामभी दे देते।"

भला जेवर मेरी रायसेही लिया सही परंतु जब उस विचारीने विना उज्र अपना सारा जेवर देडाला फिर उसपर तुमने झूंठा कलंक लगाकर क्यों निकलवाया?"

"उसे हम न निकलवातीं तो जेवर बचता कैसे।"

"ठीक यही बात है? अब तो इसमें किसी तरह प्रपंच नहीं है?"

"हां! बिककुल नहीं तुम झूंठ समझते हो तो अपनी बहनको बुला कर पूँछलो। जो मेरा कहना झूंठा निकले तो मेरे टुकडे करडालना।"

"इस बातको सुनकर पंडितजीने उसके ससुरालसे दुलरियाको बुलवाया। भाईकी चिट्ठी पाकर दुलरिया आ तो गई परंतु आकर खूब पछताई जो उसे पहलेसे मालूम होता तो वह कभी न आती। खैर उसके आनेपर जब पंडितजीने वेही बातें बहनसे पूंछी तब वह बोली:—

"भैया, मैंने जो कुछ किया तुम्हारे फायदेके लिये कियाहै। मुझपर वृथा कोप क्यों करतेहो?"

"अरे हत्यारी, तैंने बडा अनर्थ करदिया। तैंने सत्यानाश करडाला। दुष्टा तैंने लोभसे उसका जेवर छिनवाया सो तो खैर परंतु तैंने उसपर झूंठा कलंक क्यों लगाया?"

"मैं उसपर कलंक न लगाती तो वह तुमसे हिस्सा मांगनेको तैयार थी। किसी दिन तुम्हें उसको जेवर लौटाना पडता और जन्मभर खानेको देना पडता। मैंने तुम्हारे साथ बुराई क्या की है जो मुझे इतनी गालियां देतेहो?"

"अरे दुष्टा ! तू मेरी गालियोंसे डरतीहै परंतु कल देखना तेरी और (अपनी स्त्रीकी ओर अंगुली करके) इसकी क्या दशा होती है ? तैंने मेरा हित किया ? मेरा हित ? मुझे ऐसा हित नहीं चाहिये । बस तुम हटो मेरे सामनेसे मुझे अपना मुँह न दिखलाओ।"

इसतरह दोनोंको फटकारकर पंडितजीने मातासे पूंछा । दोनोंपर बेटेकी धुडकी देखकर माँभी घबडा उठी । उसने बेटेसे अपना अपराध स्वीकार करलिया । बस जब इस प्रकारसे पंडितजीको निश्चय होगया तब वह समयपर पंचायतका बुलोवा आनेसे वहां गये । वहां पंडितजीने उनकी स्त्रीने और दुलरियाने अपना २ अपराध स्वीकार करलिया । दुलरियाने इतना अधिक कहा कि:-

बडेभाईके नामसे छोटी भावजके भाईके नाम चिट्ठी लिखनेवाली मैंहीहूं मैंनेही रंगूनको तार और चिट्ठी दिलवाईथी । मुझसे यह बडा भारीपाप हुआ । मैंने लोभमें पडकर उस बिचारीपर झूंठा कलंक लगाया। यह देखो, मेरे अक्षर बडे भैयाके अक्षरोंसे मिलतेहैं ।

"भला, तैंने और तो जो कुछ किया लोभसेही किया होगा परंतु उसे रंगून और बसंतपुरतक क्यों बदनाम किया ? इसमें तेरा क्या लाभ हुआ ? " जब पंचोंकी ओरसे यह प्रश्न हुआ तब वह कुछ उत्तर न देसकी । उसने केवल इतना कहा कि-"ऐसा न करती तो कदाचित् वह मुझसे इस लोभका बदला लेलेती इसलिये मैंने उसे दीन दुनियासे खोदेनेका प्रयत्न कियाथा" दुलरियाने अपना शिर नीचा करलिया । इसपर पंचोंने पंडितजीपर ५१ रुपया दंडकरके जातिके गरीब लोगोंको दिलवाया । तीनोंसे हेमाद्रि स्नान करवाया । पंडितजीकी मोंछे मुंडवाई । तीनोंसे कृच्छ्रचांद्रायण व्रत करवाया । तीनोंको गंगास्नानके लिये भेजा । पंडितजीसे सवालाख गायत्रीका जप करवाया और दुलरियाको इस अपराधमें छः मासतक जातिबाहर रखकर सुशीलाके क्षमाकरनेपर जातिमें लेनेकी व्यवस्था की।

पंचायतकी आज्ञाके अनुसार जब ये तीनों प्रायश्चित्तसे निपटचुके तब इन्होंने वसंतपुरजानेकी तैयारी की । ये गाडी भाडे करके वहां गये और

जाकर सुशीलाके भाईसे मिले । वहां इन्होंने इकट्ठे होकर सुशीलासे क्षमा मांगी। इन्होंने अपने २ अपराधके लिये पश्चात्ताप करनेमें क्षमा मांगनेमें जो कुछ कहा उसे लिखकर इस पुस्तकके पत्रे बढानेकी विशेष आवश्यकता नहीं है किन्तु सुशीलाने उत्तरमें इतनाही कहा किः-

"तुम लोगोंका दोष नहीं है दोष मेरे नसीबका है। अब इन बातोंका विचार छोड दो। जो कुछ होना था सो हो चुका। तुम सबही मुझसे बडे हो। मैं छोटी होकर तुम्हें क्षमा क्या करूं? मेरा अपराध होतो तुम मुझे क्षमा करो। मैं हाथ जोडती हूं। "

इतना कहकर सुशीला उनके पैरोंमें गिरपडी। उसकी सास,उसकी जेठानीने सुशीलाको अपने हृदयको लगाया। सुशीलाके जेठने उसके शिरपर हाथ रखकर कहाः-

" बेटी मैं तेरे सामने लज्जित होताहूं। इन कर्कशाओंके कहनेसे मैंनेभी तुझपर अत्याचार किया। इन कृत्याओंने तुझे कुलटा ठहराकर दीनदुनियासे निकालदेना चाहाथा परंतु तेरा पातिव्रत, तेरा सत्य सहायक हुआ। भगवानने तेरा, तेराही क्यों हमारा मुख उज्ज्वल किया। तू दोनों कुलमें धन्यहै। तूने दोनों कुलोंको पवित्र कियाहै। जब मैं एकबार तेरा अपराधी बनचुकाहूं तब मेरा मुँह तो नहीं होताहै परन्तु फिर भी कहताहूं । बेटी, नारायणगंज चलकर वहां रह। तू रोटी देगी और हम खांयगे अब तुझे दुःख न होगा। औरोंकी बात क्या कहूं? मुझेभी भ्रम होगया था। इन दुष्टाओंके कहनेसे मैं भी बहक गयाथा। मैंनेभी तेरा दोष पक्का समझकर पंडित रिपुसूदनको उत्तर न दिया। तू ही बतला मैं उत्तर क्या देता? पंडित शत्रुसूदनका पत्र लेकर जब आदमी यहांसे नारायणगंज आया तब मैंने इसीलिये उससे कहदियाथा कि मैं अब जबाब क्या दूं मैंने अपनी मूर्खतासे इस बातको सत्य समझ लिया। बेटी मुझे क्षमाकर और नारायणगंज चल। "

सुशीलाने जेठके संकोचसे इसका कुछ उत्तर न दिया। घूँघटकी ओटमें हाथके सहारेसे कहदिया कि-'मैं अब वहां न जाऊंगी'। इसपर पंडितजीने सुशीलाके जेवरका मूल्य एकहजार तीनसौ अट्ठाईस रुपया साढे तेरह

खाना उसके सामने रखदिया । सुशीलाने बहुत आनाकानीके पश्चात् उन्हें ग्रहण किया। इसतरह ये लोग अपने घरगये । नारायणगंजकी पंचायतका वसंतपुरके पंचोंके नाम इस फैसलेके विषयमें जो पत्र आया उसे पढकर बस्तीभरमें सुशीलाका विमलयश छागया । जगह २ सुशीलाके कलंकमुक्त होनेपर हर्ष हुआ । और सब लोग एकस्वरसे सुशीलाको धन्य कहने लगे ! वास्तवमें सुशीला धन्यही थी । उसके यशका शेषभाग अभी और है जो आगे चढकर पाठकोंके देखनेमें आवेगा ।

प्रकरण २६.

ननंदका पश्चात्ताप ।

अवश्यही सुशीलाके सुसरालवाले अपने घर चलेगये और उसके क्षमा करदेनेसे संतुष्ट होकर गये परंतु उससे दुलारीका क्षोभ शान्त नहीं हुआ। दुलारीही इस मामलेमें अधिक अपराधिनी थी और उसेही जातिसे अधिक दंडभी मिलाथा । उसे नारायणगंजकी पंचायतने जो दंडदिया, उसके बडे भैयाने उसे डांटा फटकारा और उसे छः महीने जातिबाहर रहना पडा—ये बातें तो ऊपर आही चुकीहैं परंतु उसे प्रायश्चित्तकरके छः मासका दंड भोगनेके अनंतरभी सुशीलासे क्षमा मांगकर जातिमें मिलना था। इस बातसे उसका पतिभी उसपर असीम चिढ गयाथा । वह नित्य उसे मारता पीटता था, गालियां देता था, और समय २ पर ताने देताथा । इस बातसे दुलारी तंग आगई । उसके लिये छः महीने क्या? छः दिन छः वर्ष होगये । उसने बडी कठिनतासे छः महीने निकाले।अवधि निकल जानेपर उसे सुशीलाके क्षमा मांगनेके लिये वसंतपुर जाना पडा। वही गई और छोटी भाभीसे बहुत डरते २ बहुत लज्जित होते २ गई। वहां जानेपर पंडित रिपुसूदनने उनकी स्त्रीने और सुशीलाने उसकी खातिर की। उसने सुशीलासे हाथ जोडकर, उसके पैरों पडकर कहाः—

"भाभीजी, मैंने अब बहुत दंड पालिया। मैंने अपने कियेका फल भोगलिया। अब मुझे क्षमा करदो । मैंने बिचारी अनाथ गायको बिना

अपराध सताकर भरपूर दंड पालिया । अब मुझे क्षमाकरो । मैं पैरों पड-तीहूं । मैं झोली बिछातीहूं । मुझे जितना दंड मिलाहै मैं उससे भी अधिक पानेके योग्यहूं । भाभी ! तुम मुझे क्षमा करदो । नहीं तो भगवान् न मालूम इससेभी अधिक क्या दंड दे बैठे । मैं तुम्हारी अपराधिनीहूं । मैं तुम्हारी चोर हूं । मुझे क्षमा करो । ''

"बाईजी, मैं क्षमा करतीहूं । तुम अधिक गिडगिडाओ मत । मैं मुआफ करतीहूं । जो कुछ होनाथा सो मेरे नसीबसे हुआ । मैंने कोई भारी पाप किया होगा उसीका फल पालिया । तुम क्या करो । तुम्हारा कुछ दोष नहीं है ।'' इतना कहकर सुशीलाने दुलारीको गले लगालिया । उसके कह-नेसे पंडित रिपुसूदनने नारायणगंजकी पंचायतके नाम दुलरियाका अपराध क्षमा करनेके लिये पत्र लिखा और इसतरह दुलरीका छुटकारा होगया ।

जब दुलारी वसंतपुरमे चलीगई, जब सुशीलाको इन सब झगडोंसे छुट्टी मिली तब उसने अपना धंदा छोडा । उसने अपने नित्यनियम, अपने घरके कामकाजके साथ ही अपना अधिक बोझा भाई रिपुसूदनपर न डालनेके लिये, अपनी कमाईसे दान पुण्य करनेके लिये अपने रुपये बेंकमें जमा करवादिये । वह चाहती थी कि भाई इन रुपयोंको किसी व्यापारमें लगाकर उसके नफेसे अपना खर्च चलावे परंतु यह बात पंडित रिपुसूदनको स्वीकार न थी । वह छोटी बहनके पैसेमेंसे अपने काममें एक छदामभी खर्च करना पाप समझते थे । इसकारण उन्होंने इस अंश-में बहनकी चिरौटी–खुशामद स्वीकार न की । उसके खाने पहननेका खर्च उन्होंने अपने ऊपर रक्खा और सुशीलाके दानपुण्यका खर्च उसके रुपयेके व्याजसे । बस इस तरहसे जन्मभर निर्वाह हुआ । सुशी-ला अपने अवकाशके समय किसीसे एक पाईभी फीस वा दक्षिणा के लिये बिना लडकियोंको विधवा स्त्रियों और बालविधवाओंको पढाने लिखाने लगी । उसने उन्हें दस्ती कारीगरी सिखाकर उन्हें संकट पडनेपर अपना २ पेट पालनेके योग्य करदिया । वह विधवाओंको उनका धर्म और सधवाओंको सधवाओंका धर्म सिखाया करती थी । उसे सधवाओंको अथवा कुँवारियोंको शिक्षा देनेमें सती सावित्रीका चरित्र,

सतीचरित्रसंग्रह, आदर्शदम्पती, हिन्दू गृहस्थ, स्वतंत्र रमा और परतंत्र लक्ष्मी, और "स्त्री प्रबोधिनी" जैसी पुस्तकें पढाना अधिक पसंद था। वह सधवाओंको वही उपदेश दिया करती थी जो "आदर्श दम्पती" के अंतमें उसकी माताने वसंतपुरकी स्त्रियोंको दिया था किन्तु विधवाओंसे वारंवार उसका कथन यह था कि:—

"बहनो, तुम यह न समझो कि तुम्हारे पति मरगये हैं। तुम यदि ब्रह्मचर्यका पालनकर कभी परपुरुषकी ओर आंख उठाकर न देखोगी कभी कुकर्मका स्वप्नमेंभी ध्यान न दोगी तो यही चटाई तुम्हारे लिये इन्द्रासन होजायगी। तुम स्वधर्म पालनकर जब स्वर्गमें जाओगी तब अपने पतियोंसे मिलोगी और फिर तुम्हारा कभी साथ न छूटैगा। बस थोडे दिनोंके दुःखमें सदाका सुखहै। यदि इसपर ध्यान न देकर अभी पाप करोगी तो अगले जन्ममें तुम्हें कुतिया होना पडैगा। अगले जन्ममें क्या इस जन्ममेंभी व्यभिचारिणी स्त्री—कुतियासे बढकरहै। जैसे कुतियाके पीछे समय आनेपर दो चार कुत्ते लगे रहते हैं वैसेही व्यभिचारिणीके पीछे जार लगतेहैं। जैसे कुतियाके कान फडफडानेपर लोग थूकतेहैं वैसेही व्यभिचारिणीके लिये लोग थूकते हैं। इस जन्ममें तो यह दशा हैही और मरनेपर यमराजके यहां जाकर वे कुंभीपाक नरकमें पडतीहैं गर्म २ थंभेंसे बांधी जातीहैं मुद्गरोंसे पीटी जातीहैं उन्हें कीडोंके कुंडमें डालदेते हैं और उनको विष्ठा खिलाई जातीहै।"

जब वह इसतरह कहती थी तब वह विधवाधर्मके विषयमें अपना अनुकरण करनेकी सलाह देतीथी। वह ऐसी सलाह देतेहुए लज्जित तो होती थी, क्योंकि उसे भय था कि कोई इससे मेरा घमंड न समझ लें, परंतु उदाहरण देनेसे उसे करके दिखलाना अधिक पसंद था। वह इनसे कभी एक पाई नहीं लेतीथी। सबको मुफ्त पढाती थी और गरीबोंको अपने पाससे पोथियां भी देतीथी।

सुशीलाकी ओरसे केवल इतनाही पुण्य नहीं होता था वरन् उसनै आयुर्वेदका अभ्यास कर लिया था इसलिये वह अनाथ स्त्रियोंकी

और बालकोंकी चिकित्सा मुफ्त करती थी। उन्हें दवाभी अपने पाससे देती थी और जब किसी बडे घरकी स्त्री वा बालक उसके यहां इलाजके लिये आते तब उनका रुपया पुण्यमें खर्च करवा दिया करती थी। उसने केवल इतनेहीपर संतोष नहीं किया था बस वह अपनी पूंजीसे ब्राह्मणोंको दीनदुखियाओंको अन्न वस्त्रभी दिया करतीथी। उसकी इस उदारतामें बडे २ धनाढ्य साथी होगये और इसकारण वसंतपुरमें 'सुशीला अनाथालय' और 'सुशीला चिकित्सालय' 'सुशीला ब्राह्मणशाला' तथा 'सुशीला विधवाशाला'के नामसे चार संस्थायें स्थापित होगई थी।इनमें सब काम मुफ्त होताथा। इनको समयपर सुशीला सँभालती और स्त्रियोंको तथा लडकियोंको उपदेश देनाही उसका मुख्य काम था। उसकी उत्तेजनासे वसंतपुरमें धर्मकी जागृति हुई। खर्बूजेको देखकर खर्बूजा रंग पकडताहै-इस कहावतके अनुसार वसंतपुरके और आसपासके लोगोंने स्त्रियोंने इसका अनुकरण करना आरंभ किया और इसतरह सुशीलाके द्वारा बहुत लोगोंका उपकार हुआ। इन बातोंको लेकर देशी सामाचारपत्र भाटकी तरह सुशीलाका यश गान करने लगे।

प्रकरण २७.

विधवाधर्म।

सुशीला सदा श्वेतवस्त्र पहनती थी। जबसे वह विधवा हुई उसने रंगीन वस्त्र कभी धारण न किया। वह कभी चारपाईपर न सोई और न कभी सवारीपर चढी। वह अपना शिर सदा मुंडा हुआ रखती थी और काजल, उबटन, अतर, फुलेल, पान आदि जो सौभाग्य द्रव्य हैं उन्हें कभी पास फडकने नहीं देती थी। वह दिनरात्रिके चौवीस घंटोंमें केवल एकही बार भोजन करतीथी और उसमेंभी जौकी रोटी और तरकारीके सिवाय ऐसे पदार्थ उसके खानेमें प्रायः नहीं आतेथे जिन्हें खानेसे भोगविलासकी इच्छा बढतीहो, शरीरकी शक्ति बढतीहो, वह खानेपीनेको आत्माका भाडा कहा करती थी और सचमुच उसका भोजन केवल शरीरको भाडा देनेसे बढकर नहीं था. जब कभी भाईके यहां

किसी उत्सवपर अच्छे पदार्थ बनते वा भगवान्‌के नैवेद्यके लिये उत्तम सामग्री बनाई जाती तब वह अवश्य लेती परन्तु लेती कनका मात्र और सोभी उस सामग्रीका आदर करनेके लिये।

वह दिनरातमें एकबार इसतरहसे शरीरको भाडा देती तो थीही परन्तु इसमें महीनेमें दो एकादशी, वर्षमें चार जयन्ती, बडी २ पर्वणियां, पूर्णिमा अमावास्या और साधारण स्त्रियोंके करनेके सब व्रतों तथा विधवाओंके करनेके सब व्रतोंपर निराहार रहती और शास्त्रकी विधिसे पारणा किया करतीथीं। ये उसके नित्यव्रत थे किन्तु नैमित्तिक व्रतोंमें कभी चांद्रायण और कभी कृच्छ्रचांद्रायण व्रत किया करती थी। वह प्रातःकालके साढे तीन बजे नित्य जागकर पहले भगवत् स्मरण करती फिर शौचादिसे निपटकर स्नान करती और तब पूजापाठ करती थी। पाठमें विष्णुसहस्रनाम, गोपालसहस्रनाम, भगवद्गीता, रामरक्षा मुख्य थी। इसके सिवाय वह द्वादशाक्षर मंत्रका जप करती और वल्लभसंप्रदायकी रीतिसे मंगलासे लेकर शयनतक भगवान्‌की सेवा करती. भगवान्‌को खूब लाड लडाती, समय २ पर उनके आगे कीर्तन करती और प्रत्येक एकादशीको जागरण करती थी। उसका शरीर चाहे जितना कष्ट पावे परन्तु भगवान्‌की भक्तिमें वह कभी कसर नहीं पडने देती थी और जब कभी दैवसंयोगसे कुछ कसर पडजाती तो उसके मनको मरनेसेभी बढकर कष्ट होता और इसीके दंडमें वह चांद्रायणादि व्रत किया करती थी। वह नित्यही पूजापाठसे निपटकर धर्मशास्त्रकी विधिसे कुश तिल और जलसे अपने पतिका तर्पण करती और भगवान्‌की उपासनामेंभी पतिकाही ध्यान किया करतीथी। जब वह इसतरह प्रातःकालके पूजापाठसे निपट जाती तब लडकियोंको और विधवा स्त्रियोंको पढाने सिखानेका काम करती। इस कामसे छुट्टी पानेपर वह भौजाईको घरकेकाममें सहायता देती और भोजन करनेसे निश्चिन्त होजानेके बाद फिर भौजाईका भतीजे भतीजीका काम काज करती इतनेमें जब सांझ पडजाती तब फिर भगवत् स्मरण और भगवान्‌की सेवा करती। रातके नौ बजे जब भौजाई अपने कामकाजसे निपट जाती तब उसके साथ बैठकर—रामायण, शुकसागर, आदिका पाठ

करती और जो अड़ौस-पड़ौसकी स्त्रियां उसके पास आतीं उन्हें सुनाती । वह विधवा स्त्रियोंको समय २ पर जो उपदेश देती थी उसका तत्त्व यही था कि:-

" पतिके मरनेपर सबसे बढकर धर्म तो यही है कि, उसकी चितामें भस्म होकर पतिका साथदे परंतु आजकल ऐसा जमाना नहीं रहा इसलिये जबतक जिये सदा ब्रह्मचर्य व्रतका पालन करनेवाली, कभी पराये पुरुषका स्वप्नमें भी ध्यान न करनेवाली विधवा मरनेपर स्वर्गमें पतिको पातीहै और फिर दम्पतीका कभी साथ नहीं छूटताहै । "

उसका चरित्र वास्तवमें उसके इस कथनका नमूना था । उसका यह कथन धर्मशास्त्रोंमें लिखेहुए विधवाधर्मका सारहै और वह इसीके, अनुसार चला करतीथी तथा औरोंको अपना अनुकरण करनेका उपदेश दिया करतीथी । उसने इसतरह केवल व्रतसे, उपवाससे और हविष्यान्न खानेसे ही अपनी विषयवासनाओंका नाश नहीं करलियाथा बरन् जिस समय वसंतपुरमें उसके यशका डंका बज रहाथा उसके सदाव्रतमें एक साधु भोजनके लिये अकस्मात् आनिकले थे । उन साधु महाराजने उसे बहुतसा उपदेश दिया था । विधवाधर्मके विषयमें धर्मशास्त्रका उन्होंने मर्म समझाया था और उसके चरित्रसे प्रसन्नहोकर उसके मनका, उसकी इंद्रियोंका विशेष रूपपर दमनकर विषयवासनाओंसे बचानेके लिये उसे एक औषधिभी दीथी । वह उसका नाम सोमवल्ली बतलाते थे । सुश्रुतके चिकित्सास्थानके उन्तीसवें अध्यायके अनुसार उन्होंने सुशीलाको उसके सेवन करनेकी विधि बतलाई थी । उसने उसीतरह सोमवल्लीका कल्प किया । इस कल्पसे उसके शरीरके सब विकार निकलगये, उसके हृदयके सब विकार निकल गये, उसके मनकी रहीसही वासनायें जाती रहीं और वह अब वास्तवमें सच्ची सुशीला बनगई ।

इसतरह चाहे सुशीला सब वासनाओंसे मुक्त होगईथी और अब सबही लोग उसके चरित्रकी प्रशंसा करतेथे परन्तु वह अबभी स्वतन्त्र होना अच्छा नहीं समझती थी । वह सब काम भाई भौजाईकी सहलासे उनकी आज्ञा लेकर करती थी । वह कभी किसी पुरुषसे समक्ष बातचीत नहीं

करती थी और उसका यह पक्का सिद्धान्त था कि स्त्रियोंका स्वतन्त्र होजा-नाही हिन्दू समाजके लिये विष है । वह सदा सबको यही उपदेश दिया करती थी कि स्त्रियोंको बालकपनमें मातापिताके वशमें रहना चाहिये, विवाह होनेपर पतिकी दासी होकर उसकी आज्ञा बिना कोई काम न करना चाहिये और दुर्भाग्यसे यदि पति न रहै तो पुत्र वा भाईको बडा मानकर उसके कथनके अनुसार चलना चाहिये ।

सुशीला–विधवा स्त्रीका पतिकी चितामें भस्म होना सबसे बढकर काम समझतीथी। वह इस तरह पतिके साथ न जासकी इस बातका उसे बडा दुःख था।वह कभी२बडी आह भरकर कहाकरतीथी कि:–"हाय!मैंने सह-गमन न किया" परन्तु वह अङ्गरेजी राज्यके आईनसे डरकर कभी किसीको ऐसा कामकरनेकी सलाह नहीं देती थी। उसका विधवा स्त्रियोंसे यही उपदेश था कि–" ब्रह्मचर्य पालन करके अपना जीवन बिताना चाहिये । बस इसतरह करके भगवत् स्मरण करनेवाली विधवा मरनेपर अवश्य पतिको पातीहै और फिर वे दंपती अनंत कालतक सुख भोगकर मोक्षको प्राप्त हो जाते हैं ।"

जब इसतरहसे अपना जीवन निर्वाह करते सुशीलाको कई वर्ष बीत-गये, जब उसकी युवावस्था निकलकर बुढापा आया तब उसने छोटे भाई भौजाईकी सलाहसे तीर्थाटन करने, गयाश्राद्ध करनेका विचार किया। इस विचारमें और बातें तो सब ठीक होगई परंतु सुशीलाको जो सवारीपर न चढनेका संकल्प था उसकी बडी पंचायत पडी। उसके लिये उचित तो यही था कि वह नंगे पैरों सब तीर्थोंकी यात्रा करती परन्तु समय इस बात को स्वीकार नहीं करता था इसलिये भाई रिपुसूदनने उसे सलाह दी कि-- " सवारीपर न चढने का हठ करना उचित नहीं है । भारतवर्षमें रेलकी जाल बिछजानेसे अब पैरों चलनेके मार्गमें न कहीं अच्छी तरह खानेपीनेकी सामग्री मिलसकतीहै और न कहीं धर्मशाला तथा सरायका अच्छा प्रबंध है। उस मार्गमें जगह २ लूट खसोटका डरहै और सबसे बढकर बात यह है कि समय अधिक लगनेसे यहांके धर्मकार्योंके निर्वाह होनेमें गडबड पडैगी इसलिये इस हठको छोडदेनाही अच्छाहै ।" सुशीलाने

इस बातको माना परंतु उसका चित्त इससे प्रसन्न न हुआ। उसने कहा कि-"आपका कथन सत्यहै परंतु धर्मशास्त्रमें विधवाओंको सवारीपर चढनेकी आज्ञा नहीं है।"-इसपर पंडित रिपुसूदनने उसे समझाया। वह बोले-"अवश्य आज्ञा नहीं है परंतु यह अर्थवाद है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि आपत्तिकालमें भी सवारीपर न चढना चाहिये। विधवा स्त्रियोंका सवारीपर चढना उस दशामें वर्जितहै जब वे सुख भोगनेके लिये चढना चाहती हों। तीर्थयात्राके लिये चढना बुरा नहीं है। प्रत्येक कार्यमें उसका परिणाम समझ लेना चाहिये। जब तू तीर्थयात्राके निमित्त सवारीपर चढेगी तो तुझे कभी पाप न लगेगा और यदि मानलिया जाय कि इससे थोडा बहुत पापभी होगा तो तीर्थसेवनके महत्पुण्यके आगे यह किस गिनतीमें है। मनभर पुण्य करनेके लिये रत्तीभर पाप करना हानिकर नहीं है। हमलोग देवदर्शनको जातेहैं। मार्गमें जाने और अनजाने छोटे मोटे कीडे मकोडे पैरोंसे कुचल जातेहैं, रसोई बनानेमें और दीपक जलानेमें भी जानवर मरते हैं परंतु जब रसोई भगवान्के नैवेद्यके लिये बनाई जातीहै, जब उस पाकमेंसे वैश्वदेवादि किये जाते हैं, जब उस दीपकसे पाठपूजन किये जातेहैं तब उनका पाप नहीं लगताहै" इस बातसे सुशीला मान गई। उसने सवारीपर चढना स्वीकार किया और तीर्थयात्राकी तयारी हुई। पंडित शत्रुसूदन तो तीर्थादिकोंको मानते थे ही नहीं इसलिये वह इनके साथ जानेको तैयार न हुए परंतु जब उनकी कलहकारिणी स्त्री मरनेको तैयार हुई, तब उन्हें झखमारकर इनके साथ होनापडा। इस तरह सुशीला गई, पंडित शत्रुसूदन अपने कुटुंबसमेत गये और पंडित रिपुसूदन अपनी स्त्री तथा बालकों समेत गये। इन्होंने जी खोलकर स्थान २ पर पुण्य किया, दीनोंको दिया, स्थान २ पर शास्त्र विधिसे श्राद्धादि किये। इसतरह इन्होंने गयाश्राद्ध किया। औरोंने तो जो कुछ किया सो कियाही परंतु गयाश्राद्ध करनेमें सुशीलाकी भक्ति बडी प्रशंसनीय थी। पंडित रिपुसूदनने शास्त्रविधिसे श्राद्ध किया और पंडित

शत्रुसूदनको स्त्रीके दबावसे करना पडा।इन्होंने इस प्रकारसे गयाश्राद्ध किया जगदीशपुरीकी, बदरिकाश्रमकी, द्वारकाकी और चारों धामोंकी यात्राकी। ये लोग यात्राकरके जब कुशल क्षेमसे घर आये तो इनके कोई चार पांच महीने खर्च हुएथे।

प्रकरण २८.

सुशीलाके दोनों भाई ।

सुशीलाके दूसरे और उपकारक भाई रिपुसूदन जब रंगूनसे बसंतपूर आये बहुत गरीब थे। उन्हें बडेभाईसे अपना हिस्सा पानेकी जो आशा थी वहभी मिट्टीमें मिलगई। उन्होंने लोगोंके बहुत कुछ बहकानेपर भी भाईसे झगडा न किया। बडे २ वकीलोंके राय देनेपर भी इन्होंने पंडित शत्रुसूदनपर नालिश न की। यह अपना मन मारकर चुप बैठ रहे और इन्होंने अपनी जीविकाका और उपाय सोचा। इन्होंने एक मित्रसे पांचसौ रुपये उधार लेकर अपने पिता पंडित मधुसूदनके ढंगपर दूकान खोली। इनका पुण्य मातापिताका प्रताप और सुशीलाके साथ इनका अच्छा वर्ताव इस काममें सहायक हुआ। माल बचनेमें इनकी ईमानदारी इनका "एकही भाव" सहायक हुआ और थोडेही दिनोंमें इनकी सत्यताका डंका बजगया। इनके व्यापारमें झूठका बिलकुल लेश न देखकर खरीददार लोग इन्हींकी दूकानपर टूटपडे। इन्हें दिन दूना रात चौगुना लाभ होने लगा और इसतरह इनका व्यापार खूब बढगया। इन्होंने अपनी बढती हुई कमाईमेंसे खूब पुण्य दान करना आरंभ किया। धर्मशालायें, पाठशालायें, ब्राह्मणशाला, चिकित्सालय और अनाथालय खोले और अपनी ओरसे वेतन देकर धर्मोपदेशक नियत किये, संस्कृतकी पाठशाला खोली और जहांतक उनसे बनसका धर्मोन्नतिका प्रयत्न किया। उन्होंने गाँवोंके जुलाहोंको इकट्ठा करके फ्लाईशटलमें उन्हें कपडे बनाना सिखलाया और इसतरह देशी व्यापारकी उन्नति की।

जिस समय पंडित रिपुसूदनकी इस तरह दिन २ उन्नति होगई पंडित रिपुसूदनका दिन २ गिराव हुआ। उन्होंने पिताकी कमाईका सारा धन सट्टेमें उडादिया। वह बिलकुल दरिद्री होगये और जब उनके पास खानेका ठिकाना न रहा तब उन्हें छोटे भाई रिपुसूदनका सहारा लेना पडा। उन्होंने भूखों मरनेपर भी अवश्य ही संकोचके मारे छोटे भाईसे कुछ सहायता न मांगी परन्तु पंडित रिपुसूदनसे बडे भाईका कष्ट न देखागया उन्होंने अपनी स्त्रीकी सलाह लेकर बडे भाईकी चुपचाप सहायता की। वह एक दिन रातको ११ बजे जाकर चुपचाप बडे भाईको पांचसौ रुपये दे आये और उन्होंने व्यापारके काममें अपना अनुकरण करनेकी उन्हें सलाह दी। उनके इस तरहके बर्तावसे उनकी आंखें खुलगईं और उन्होंने अब समझलिया कि, सच्चे सनातनधर्मावलम्बी लोग हृदयके कैसे उदार होते हैं। इस बातका उनपर इतना भारी असर हुआ कि वह अपने पहले कर्मोंपर पछताये। उन्होंने एक दिन अपने छोटे भाई, उसकी स्त्री अपनी स्त्री और बहन सुशीलाको बुलाकर सबके सामने कहाः-

"भैया रिपुसूदन और बहन सुशीला! तुम दोनोंपर मुझसे बडा अत्याचार होगयाहै। अवश्यही तुम मुझसे छोटे हो परन्तु गुणोंमें, धर्ममें मुझसे बडे हो इसलिये तुमसे क्षमा मांगताहूं। मुझसे कई एक ऐसे पाप बनगये हैं जो जीवनभर मेरे हृदयको जलाते रहेंगे। मैंने केवल तुम दोनोंको कष्ट देकर ही पाप नहीं कियाहै बरन मैंने अपने पितृदेव पूजित भगवान् शालिग्रामजीकी मूर्ति नदीमें डालदीहै। मैंने तीर्थोंकी, पुराणोंकी, हिन्दूधर्मकी और आप्त पुरुषोंकी निन्दा की है। मैंने समाजियोंके चक्करमें पडकर सनातनधर्मका खंडन करते हुए नये मतके प्रचारके लिये लोगोंको बहकायाहै और उन्हें भ्रष्ट करनेका प्रयत्न किया है। अवश्यही मातापिताके प्रसादसे मैं मद्यपानादि दुराचारोंसे बचगया परंतु मुझसे जो उक्त पाप बने हैं उनके लिये मैं पछताताहूं, मैं प्रायश्चित्त करताहूं। मैं आज सोचताहूं कि पिता मधुसूदन और माता सुंदरी जैसे "आदर्श दम्पतीकी" संतान होकर मेरी बुद्धि इतनी भ्रष्ट क्यों होगई? विचार करनेसे मेरे ध्यानमें यही आताहै कि मातापिताके चलेजानेके समय मैं आवारा फिरता रहा बदमाश

साधुओंकी संगतमें पडा और बडा होनेपर समाजियोंके चक्करमें पडगया बस येही कारण मेरे बिगाडके हुए । खोटी संगत मेरे कोरे हृदयपर खोटा असर करगई। मेरे बालवयमें मातापिताके चलेजानेसे मुझे उचित शिक्षा तो मिली थी ही नहीं, बस यही कारण मेरे बिगडजानेका हुआ। खैर सबेरेका भूलाभटका सामतक आजावै तो भी उसे भूला न समझना चाहिये। स्त्रीके आग्रहसेही सही परंतु तुम्हारे साथ तीर्थयात्रा की। इससे मेरा अंतःकरण शुद्ध हुआ, तुम लोगोंकी गयाश्राद्धके समय मैंने भक्ति देखी तब मुझपर असर हुआ और अंतमें भैयाकी उदारतासे मैं सुधरगया। अब ईश्वर मुझे सुबुद्धि दे ताकि मैं सदा सत्कर्म करता रहूं । तब दूसरा विवाह करनेके लिये बहनने मेरी बात न मानी तब मैंने इससे उठकर बोलचाल बन्द करदीथी. परंतु अब मैं अपनी भूलपर पछताताहूं। वास्तवमें विधवाविवाह की शास्त्रमें आज्ञानहीं है। विधवा विवाह हिन्दू समाजके लिये हितकारी भी नहींहै । उस समय बहनका कथन मैंने दुराग्रह नहीं समझाथा परंतु अब मुझे निश्चय होगया कि यह सच्चीहै । यह वास्तवमें आदर्शदम्पती की आदर्श कन्याहै और शास्त्रकी आज्ञाके अनुसार यह विधवाधर्मका खूब पालन कररहीहै । बहन तुझे धन्यहै भैया तुझे धन्यहै और सबसे बढकर धन्य छोटे भैयाकी बहुकोहै जो सदा रिपुसूदनको अच्छी सम्मति देती है। मुझे स्त्रीकी ओरसे ऐसा सुख नहीं है परन्तु मैं इसेभी धन्य समझताहूं क्योंकि जब मैं विधवाविवाहका दुराग्रह करनेलगा तब इसने मुझे रोका था। ''

जैसे पंडित शत्रुसूदनने इस तरह पश्चात्ताप किया । वैसेही चान्द्रायण व्रतादिसे प्रायश्चितभी किया प्रायश्चित्तसे उनकी मति गति बिलकुल बदलगई अब वह समस्त नये विचारोंको छोडकर पक्के सनातनधर्मावलम्बी बनगये । अब उन्होंने दूसरी बार उसी ढंगसे व्यापार आरम्भ किया जिससे उनके पिता और छोटाभाई किया करताथा । अबसे उनके व्यापारने उन्नति की और पहले उनका आचरण देखकर जिन लोगोंको उनसे घृणाथी वेही पंडित शत्रुसूदनका खूब आदर करने लगे । उनके छोटे भाई रिपुसूदन सदा अपने कर्तव्यपालनमें दक्ष रहनेपरभी कभी समाचारपत्रोंके

कालम नहीं रँगतेथे और न कभी लेक्चरबाजी करतेथे। लोग उन्हें इस बातके लिये उकसाते भी सही परंतु पंडित रिपुसूदन बात करनेसे काम करना अधिक पसंद करतेथे। पंडित शत्रुसूदनने दोनों काम ग्रहण किये। वह नवीन समाजोंके खंडन और सनातनधर्मके मंडनमें लिखते पढते और बोलतेभी थे।

पंडित रिपुसूदनकी स्त्री सावित्रीका आचरण तो वास्तवमें पहलेहीसे सती सावित्रीकासा था किन्तु जब पंडित शत्रुसूदनके दिन अच्छे आये जब उन्होंने स्वधर्म पालनमें अधिक मन दिया तबसे उनकी स्त्रीकेभी विचार बदलकर मनके विकार निकलगये। वह पहलेही दुराचारिणी नहीं थी उसमें केवल दोष यही था कि वह क्रोधकी मूर्ति थी। वह पतिसे कलह किया करती थी और उसे लोभभी बहुत था। सावित्रीकी देखादेखी सुशीलाके प्रयत्नसे उसका आचरण सुधारगया और अबसे दोनों पंडितोंके घरमें धर्मने और सुखने निवास किया।

प्रकरण २९.

समाप्ति।

सुशीलाके भाई भौजाईके चरित्रोंका थोडा बहुत दिग्दर्शनकरके इस पुस्तकको समाप्त करने पूर्व इस पुस्तकके अंतमें उसकी सुसरालकाभी कुछ हाल लिखदेना चाहिये। उसके जेठ जेठानी और सासको पश्चात्ताप और प्रायश्चित्त करनेके अनंतर किसीप्रकारका कष्ट नहीं हुआ। वे सुखसे रहे और समय समय २ पर सुशीलासे आकर मिलते रहे, उसका सत्कार करते रहे और उससे आशीर्वाद लेतेरहे किन्तु प्रायश्चित्त करनेपर भी उसकी ननंद दुलारीका कष्टसे छुटकारा न हुआ। उसके यहां चोरी होगई। उसका दश पंदरह वर्षका इकलौता पुत्र मरगया और अंतमें उसका पतिभी इस असार संसारको छोडकर चलबसा। पतिके मरनेसे, चोरी होजानेसे और जीविकाहीन होजानेसे दुलारी दाने दानेको मुहताज होगई। उसे इसतरह जब कई दिन भूखों मरते बीतगये तब उसने सुशीलाका आश्रय लिया। उसने शरणमें आकर रोते २ सुशीलासे कहाः—

भाभी, "मैंने कियेका खूब फल पालिया। मैं तेरी गौ हूं मेरी रक्षा कर। मैं चार दिनकी भूखी हूं। मैंने तुम गौको सताकर बडा पाप कियाहै और उसी पापका फल मैं भोग रही हूं। भगवान् जाने मरकर मुझे क्या २ दुःख भोगनाहै। मरनेपर जो दुःख भोगना है सो तो है ही, परंतु अब मुझसे भूख का कष्ट सहा नहीं जाता। मेरी रक्षाकर।"

इतना कहकर ज्योंही दुलरिया सुशीलाके चरणोंमें पडने लगी उसने उसे छातीसे लगालिया और उससे कहने लगीः-

"बहन! तुम कुछ चिन्ता न करो। देनेवाला तो भगवान् है परंतु मैं अपनी ओरसे तुम्हें किसी तरहका कष्ट न होने दूंगी। यहां जन्मभर रहकर भगवानके नैवेद्यसे अपना पेट भरो और ईश्वरका भजन करके अपना पापोंसे छुटकारा करो संसारमें यही सार है।"

"हां भाभी, अब मैं अवश्य भगवानका भजन करूंगी। अब मैं अवश्य तुम्हारे उपदेशपर चलूंगी। हाय! तुम्हें सतानेसे-तुम्हें कष्ट देनेसे मेरा सर्वनाश होगया। इसी पापसे मेरी यह दशा हुई है। इसीका फल भोगनेको मैं जीवित रहीहूं। मैं पापका फल भोगूंगी। ईश्वर जाने मुझे कबतक जीकर दुःख भोगनाहै।"

"हां बहन! सबको अपने २ कियेका फल भोगनाही पडता है परंतु भगवानके भजनसे सब पाप दूर होजाते हैं। तुम शुद्धअंतःकरणसे जी लगाकर भजन करोगी तो तुम्हारा दुःख अवश्य छूट जायगा।"

उस दिनसे सुशीलाने अपनी ननंद दुलारीको बहुत आदरके साथ रक्खा उसे किसी तरहका कष्ट न होने दिया और उसे उत्तम उपदेश देकर उसके मनके विकारोंका नाश किया और इसतरह सुशीलाने गोस्वामी तुलसीदासजीकी चौपाई-"शठ सुधरहिं सत संगति पायी"-को चरितार्थ करदिया। सुशीलाकी संगतिसे दुलरिया सुधरी और ऐसी सुधरी कि उसके भगवत् भजनकी प्रशंसा फैलगई। इसके बाद उस घरमें कोई ऐसी घटना न हुई जो यहां लिखनेके योग्यहो। यह सब सुशीलाहीका प्रताप था उसने दुलरियाको काचका हीरा पत्थरका सोना बनादिया।

जब सुशीलाको अवकाश मिला तब उसने "कर्मविपाक" से विधव होनेके कारणोंका निश्चय किया और उसके लेखके अनुसार प्रायश्चित्तभी किया।

धन्य सुशीला ! तुझे धन्यहै । तेरे मातापिताको धन्यहै जिन्होंने तुझे ऐसे सांचेमें ढाला, सुशीला वास्तमें सच्ची सुशीला निकली । उसने घोरतर कष्ट सहनेपरभी संसारको दिखला दिया कि हिन्दू नारियां विधवा होनेपर अपने धर्मका निर्वाह किसतरह करती हैं । सुशीलाने यह दिखला दिया कि सनातनधर्मके तत्त्वोंपर विचार किये बिना जो लोग विधवाओंको खसम करानेकी सलाह देतेहैं वे झखमारतेहैं । सुशीलाने दिखला दिया कि, आजकलका समय जब पति मरनेपर सती होनेके योग्य नहीं है तब किसप्रकार विधवाओंको ब्रह्मचर्यका पालन करके अपना जीवन बिताना चाहिये । सुशीलाका चारित्र आजकलकी विधवाओंके लिये नकल करनेका नमूनाहै। जो विधवा सुशीलाके चरित्रके अनुसार चलेगी वह कभी दुःख न पावेगी, सदाही उसकी कीर्ति होगी, ईश्वर उससे प्रसन्न होगा और अंतमें उसका विधवापनसे सदाके लिये छुटकारा होकर वह परलोकमें अपने पतिको पावेगी और फिर कभी उससे वियोग न होगा। अपने पापोंके फल भोगनेके लिये कोई विधवा होजाय.यदि किसी रमणीपर इसतरहकी आपत्ति आपडे तो भगवान् उसे सुशीला स्त्री विधवा होनेकी सुमति दे। यही मेरा आशीर्वाद है।

समाप्त ।

...क मिलनेका ठिकाना-
...राज श्रीकृष्णदास,
... स्टीम्-यन्त्रालय ...ई.